वीर अर्जुन



प्रकाशक

मलाल वर्म्मा।

आदर्श-ग्रन्थ-मालाका ६ ठा ग्रन्थ

वीर अर्जुन

श्रीकृष्ण सखा महावीर अर्जुनका

रंग-विरंगे इक्कीस चित्रोंसे सुसज्जित

सुविस्तृत जीवन-चरित्र।

लेखक

विद्या-वाचस्पति

परिडत गणेशदत्त शर्म्मा गौड़।

सम्पादक और प्रकाशक

रामलाल वर्म्मा, प्रोप्राइटर-

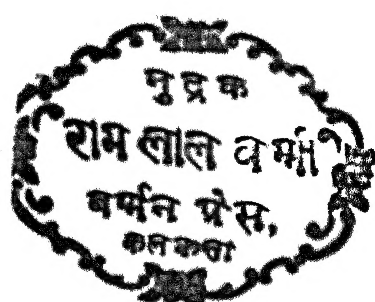
"वर्म्मन प्रेस" और "आर० एल० बर्म्मन एण्ड कों०,"

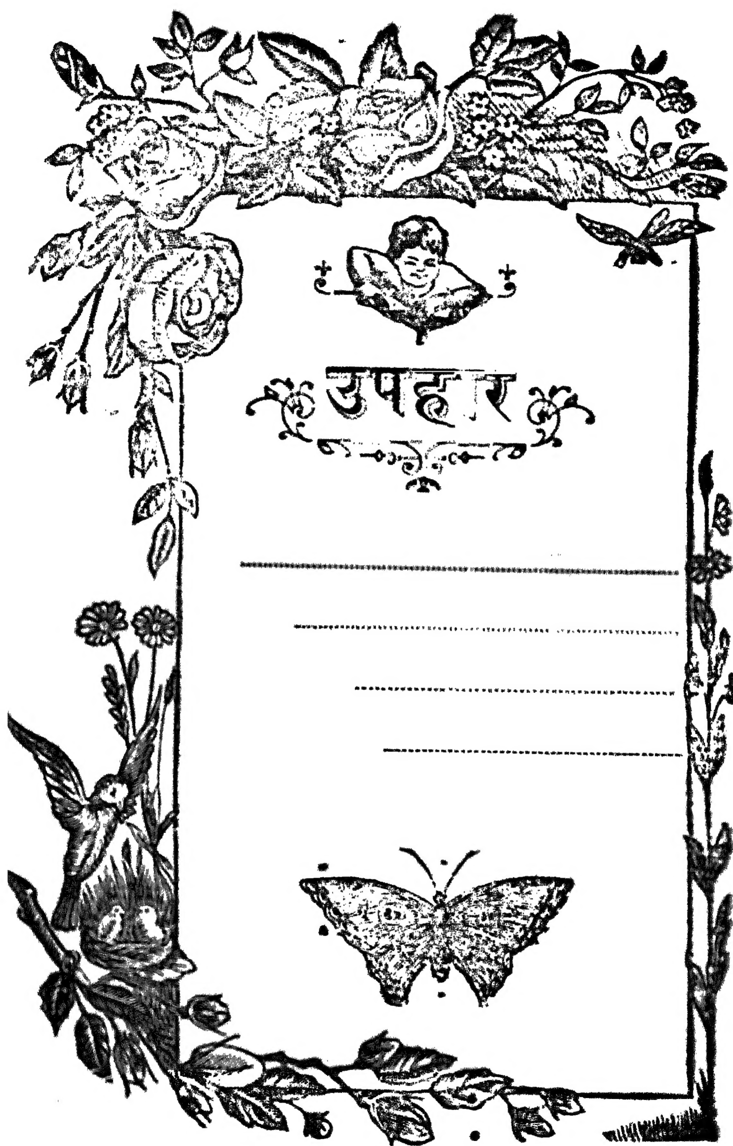
१७१, अपर चीतपुर रोड, कलकत्ता।

→ मार्गशीर्ष, सं० १९८१ वि० ←

प्रथम संस्करण—[illegible] प्रति] ● [मूल्य—[illegible], रंगीन जिल्द ३॥।)

बनारसी रेशमी जिल्द ४) रुपया।


मुद्रक
रामलाल वर्मा
वर्मन प्रेस,
कलकत्ता


उपहार



आज इन गये-बीते दिनोंमें भी हम प्राचीन भारतके जिन वीर-वरोंके नाम लेकर अपने अतीतपर उचित गर्व दिखलाते हुए सभ्य-संसारके सामने शिर ऊँचा करनेका प्रयत्न करते हैं, उनमें पाण्डवोंमें अन्यतम, श्रीकृष्ण भगवान्‌के सुहृद्, महावीर अर्जुनका नाम विशेष उल्लेख-योग्य है। अर्जुनका जीवन वीरताकी पुण्यमयी गाथा है—उनके कार्य एक सच्चे वीरके लिये सदा, सब काल और सभी देशोंमें, आदर्श होने योग्य हैं। वीरके चरित्रमें जिन सब सद्गुणोंका समावेश होना चाहिये, वे सभी उनमें पूर्ण मात्रामें विद्यमान थे। इसी लिये उनका चरित्र बड़ा-ही पवित्र, परम मनोहर और अतिशय शिक्षाप्रद है। आज हम वही चरित्र, इस पुस्तकके रूपमें, पाठकोंके सम्मुख उपस्थित करते हैं।

यह चरित्र सुप्रसिद्ध "महाभारत" से लिया गया है और उस महाग्रन्थमें अर्जुनके सम्बन्धमें जितना कुछ पाया जाता है, वह सभी इसमें लिख दिया गया है। "महाभारत" प्रधानतः पाण्डवों और कौरवोंका इतिहास बतलानेवाला ग्रन्थ है। उसमें अन्यान्य कथाएँ तो केवल प्रसङ्गवश उसे रोचक बनानेके लियेही जोड़ दी गयी हैं। इसलिये यदि उन कथाओंको छोड़कर "महाभारतके" मूल कथानककोही "महाभारत" मान लिया जाये, तो इस ग्रन्थको हम "महाभारत" का संक्षिप्त सार भी कह सकते हैं। कौरव-पाण्डवोंका इतिहास, प्रसिद्ध कुरुक्षेत्रके संग्रामका पूर्ण विवरण इसमें बड़ीही रोचकता और उत्तमताके साथ लिखा गया है। हाँ, विशेष लक्ष्य ऐसीही घटनाओंका समावेश करनेकी ओर रखा गया है, जिनसे अर्जुनका चरित्र भली भाँति प्रस्फुटित होता है।

अर्जुनकी धीरता, वीरता, गम्भीरता, धार्मिकता, शालीनता और प्रवीणताका उज्ज्वल चित्र अङ्कित करनेमें लेखकको अच्छी सफलता हुई है, यह बात पाठकोंको इस ग्रन्थका आद्योपान्त पाठ करनेसे अवश्यही विदित हो जायेगी। साथही दुर्योधन आदिके चरित्रसे पाण्डवोंके चरित्रकी तुलना करनेका भी पाठकोंको अच्छा अवसर मिलता है और इसका उनके ऊपर स्थायी प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता।

हिन्दीमें महावीर अर्जुनके सम्बन्धमें इतना विस्तृत, ऐसा सर्वाङ्ग-पूर्ण और मनोरंजक ग्रन्थ आजतक नहीं निकला। पुस्तकको बालकों और स्त्रियोंतकके लिये उपयोगी बनानेके लिये जहां इसकी भाषा सरल रखी गयी है, वहां इसमें भावपूर्ण मनोहर चित्र भी स्थान-स्थानपर लगा दिये गये हैं। उनकी संख्या भी लगभग दो दर्जनके हैं।

इस ग्रन्थको सब प्रकारसे सर्वोपयोगी बनानेके लिये इसका सम्पादन भी बड़े परिश्रम और सावधानीके साथ किया गया है। भाव और भाषा दोनोंकाही सौष्ठव ले आनेका पूरा प्रयत्न किया गया है। यह प्रयत्न कहां-तक सफल हुआ है, इसका विचार प्रेमी पाठक और विद्वान् समालोचकगण ही कर सकते हैं।

आशा है, कि हिन्दी-संसारने जिस प्रकार हमारे यहांसे प्रकाशित "महाभारतको" अपनाया है, उसी प्रकार वह "महाभारतके" सुप्रसिद्ध वीर सव्यसाची अर्जुनके इस सुविस्तृत जीवन-चरित्रको भी अपनायेगा और लेखक महोदयके साथ-ही साथ हमें भी अनुगृहीत करेगा।

—सम्पादक।



ग्रन्थकार

पण्डित गणेशदत्त शर्म्मा, गौड़ ।

लेखकके दो शब्द

A nation that forgets the glory of its past loses the mainstay of its national character. When Germany was in the depth of political degradation, she turned back upon her ancient literature and drew hope for the future from the study of the past.

—मैक्समूलर ।

अर्थात्—"जो राष्ट्र अपनी प्राचीन कीर्तिको भुला देता है, वह अपने राष्ट्रीय गुणोंकी विशेषताको भी खो देता है। जब जर्मनी राजनीतिक क्षेत्रमें बहुत गिर गया था, तब उसने अपना ध्यान अपने प्राचीन साहित्यकी ओर लगाया और अपने प्राचीन इतिहासके अध्ययनसे भविष्यके लिये आशाका सूत्र बाँध लिया।"

महाशय मैक्समूलरका यह कथन अक्षरशः सत्य है। जो देश अपने इतिहासको खो बैठता है, वह मानो अपने पिताको भूल जाता है और इतिहासको भूल जानेसे राष्ट्र अपनी माता जन्म-भूमिका अभिमान भी खो बैठता है। इस प्रकार राष्ट्र माता-पिता-रहित होकर अनाथकी तरह गुलामीकी सुदृढ़ शृङ्खलामें बँध जाता है। जिस समय रोम-देशकी विजय-पताका सिलेशिया-देशपर फहराने लगी, उस समय रोमन पार्लमेंटने सिसरोको वहाँ शासन करनेके लिये भेजा। सिसरोने वहाँ जाकर कुछ भी नहीं किया—केवल १४० रोमन भाषाके विद्यालय खोल दिये। जब वह रोममें आया, तब पार्लमेंटमें उसपर दोषारोपण करके पूछा गया, कि तुमने रोमन साम्राज्यकी जड़ जमानेके लिये सिलेशियामें क्या किया? तब सिसरोने कहा कि—"मैंने ऐसा स्थायी कार्य किया है, जो सिलेशियामें रोमन साम्राज्यकी नींव सदा स्थिर रखेगा। वहाँ मैंने लैटिन भाषाके १४० स्कूल (विद्यालय) खोलकर सिलेशियनोंकी भावी संतानोंको भी रोमन बना लिया है।"

तात्पर्य यह, कि प्राचीन इतिहास तथा राष्ट्रीय साहित्यही एक ऐसी वस्तु है, जो मनुष्यको उन्नतिके पथपर लगा देता है। आजकल हिन्दी-साहित्यमें प्राचीन ऐतिहासिक पुस्तकोंका अभाव होनेके कारणही हम भारतवासियोंमें मुर्दादिली आ गयी है। जिस प्रकार निर्मल जलाशयोंमें, कहीं-कहीं, सेवार (जलकी घास) उसकी सुन्दरताको नष्ट कर डालती है और साथही जलको भी ख़राब कर देती है, उसी तरह वर्त्तमान हिन्दी साहित्यको भी, कुत्सित भावपूर्ण उपन्यासोंने गँदला कर दिया है। जबतक ऐसे उपन्यासके प्रेमियोंको उपन्यासके ढँगपर लिखी हुई दूसरी पुस्तकें प्राप्त न होंगी, तबतक वैसे उपन्यासोंका कम होना कठिन है। इसी लक्ष्यको ध्यानमें रखकर हमने यह पौराणिक जीवनी लिखी है।

सच्चरित्रोंके पढ़नेसे चरित्र संगठन होता है। जीवन-उज्ज्वल बनता है और आत्मा सबल होता है। हम महापुरुषोंके पवित्र जोवन चरित्रोंका जितनाही मनन और अनुकरण करेंगे, उतनीही हमें जगत्में विजय प्राप्त होगी।

भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके परम सखा वीरशिरोमणि, गाण्डीव-धन्वा अर्जुनका पावन चरित्र बड़ाही रहस्यमय और उपदेशप्रद है। उनका चरित्र महाभारत नामक संस्कृत ग्रन्थमें है। अभी तक "महाभारत" की उत्तम-हिन्दी-टीका कहीं भी नहीं मिलती। इन सब बातोंको ध्यानमें रखकर हमने 'वीर अर्जुन' मूल महाभारतके आधारपर हिन्दी-भाषामें लिखा है। यद्यपि हिन्दी-भाषामें अर्जुनके एक-दो चरित्र लिखे हुए मिलते हैं, तथापि वे संक्षिप्त और अपूर्णसेही हैं। आशा है, प्रेमी पाठकोंको यह चरित्र अवश्यही रुचिकर होगा और इस अल्प सेवाको हिन्दी-संसार स्वीकार कर मेरे श्रमको सफल करेगा।

आगर मालवा,
दीपमालिका, १९८१

विनीत,
गणेशदत्त शर्मा गौड़।

प्रजा-हितैषी न्याय-मति, धीर वीर गुणखान ।
श्रीमाधव महाराज ये, जानत जिन्हें जहान ॥



मेजर जनरल, हिज़ हाइनेस् महाराजा
सर माधवराव सेंधिया आलीजाह बहादुर
जी० सी० वी० ओ०, जी० सी० एस० आई०, ए० डी० सी०, एल० एल० डी०
(केम्ब्रिज) डी० सी० एल० (आक्सन)

Burman Press, Calcutta.

समर्पण

विविधगुणमण्डित, बहुभाषापण्डित, दीन-प्रति-
पालक, दुष्टजनघालक, न्यायमूर्त्ति, विद्यानुरागी,
गुणग्राही, परोपकारी, सुधारप्रेमी, धर्मज्ञ,
हिन्दीप्रचारक, उदार, धीर, वीर, अपनी
३३ लाख प्रजाका पुत्रवत् पालन करनेवाले,
सेंधिया कुल-भूषण ग्वालियरनरेश
श्रीमन्महाराजाधिराज हिज़हाइनेस महाराजा

सर माधवराव सेंधिया

आलीजाह बहादुर,

जी. सी. वी. ओ., जी. सी. एस. आई., ए. डी. सी.,
एल.-एल. डी., डी. सी. एल., महोदयके
पाणि-पद्मोंमें; आर्य-क्षत्रिय-जातिके नरपुंगव,
भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके परम-सखा
"पांडुनन्दन महावीर अर्जुन" का यह
पावन-चरित्र विनीत-भावसे श्रद्धा-भक्तिपूर्वक
सादर समर्पित कर
अपनेको कृत-कृत्य मानता हूँ।

किंकर — गणेशदत्त शर्म्मा

चित्र-सूची

चित्र—				पृष्ठ
१—ग्रन्थकार	...	...	...	८
२—महाराज ग्वालियर	...	...	...	१०
३—धनुर्द्धर-अर्जुन	...	(बहुरङ्ग)	...	मुखपृष्ठ
४—पाण्डुकी मृगया	...	...	...	१५
५—शर-सन्धान	...	...	...	३०
६—द्रुपदकी पराजय	...	...	...	४६
७—द्रौपदी-स्वयंवर	...	(बहुरङ्ग)	...	६५
८—सुभद्रा-हरण	...	(बहुरङ्ग)	...	८५
९—जरासन्ध-वध	...	...	...	१०२
१०—किरातार्जुन-युद्ध	...	(बहुरङ्ग)	...	११२
११—अर्जुन-उर्वशी	...	(बहुरङ्ग)	...	१२१
१२—जयद्रथका मान-मर्दन	...	...	...	१४३
१३—द्रोणार्जुन-युद्ध ...	...	...	...	१७२
१४—विराट-सिंहासन-अधिकार	...	...	...	१८९
१५—अर्जुन-मोह ...	...	(बहुरङ्ग)	...	२१४
१६—श्रीकृष्ण-प्रतिज्ञा-भङ्ग	...	...	...	२२८
१७—भीष्म-शर-शय्या	...	(बहुरङ्ग)	...	२५२
१८—सात्यकिकी प्राण-रक्षा	...	...	...	२७३
१९—कर्ण-वध ...	...	...	...	३००
२०—पुत्र द्वारा पराजय	...	...	...	३२४
२१—पाण्डवोंका महाप्रस्थान	...	...	...	३३७



विषय-सूची

[पहला अध्याय]

(जन्म और बाल्यकाल)

विषय—				पृष्ठ
१—वंश-परिचय	..	..	..	१३
२—अर्जुनका जन्म	..	..	..	१७
३—विद्या-शिक्षा	..	..	..	२१
४—एकलव्यकी गुरु-भक्ति	..	..	..	२६
५—शर-सन्धान	..	..	..	२८
६—गुरुकी प्राण-रक्षा	..	..	..	३१

[दूसरा अध्याय]

(वैर-भावका विकास)

७—राज-सभा	..	..	..	३३
८—द्रुपदकी दुर्दशा	..	..	..	४१
९—गुरु-दक्षिणा	..	..	..	४७
१०—अग्निसे प्राण-रक्षा	..	..	..	४९

[तीसरा अध्याय]

(वन-गमन)

११—हिडिम्ब-वध	..	..	..	५३
१२—गन्धर्वसे मैत्री	..	..	..	५६
१३—द्रौपदी-स्वयंवर	..	..	..	५९
१४—क्षणिक युद्ध	..	..	..	६५

[चौथा अध्याय]

(राज्य-प्राप्ति)

१५—खाण्डवप्रस्थ-वास	..	..	..	७१
१६—अर्जुनका-वनवास	..	..	..	७४

विषय—	पृष्ठ
१७—उलूपी	७६
१८—चित्राङ्गदा	७८
१९—अप्सरा-उद्धार	८१
२०—पुत्रोत्पत्ति	८७
२१—गाण्डीव-धनुषकी प्राप्ति	८९
२२—विजय-यात्रा	९७

[पाँचवाँ अध्याय]

(सर्वनाशका सूत्रपात)

२३—द्यूत-क्रीड़ा	१०७
२४—पाण्डवोंका वन-वास	१११
२५—शिवार्जुन-युद्ध	११९
२६—इन्द्रलोकमें अर्जुन	१२८
२७—अर्जुन-उर्वशी	१३०
२८—भाइयोंको संदेसा	१३२
२९—दानव-संहार	१३४
३०—कौरव-उद्धार	१३५
३१—जयद्रथका मान-मर्दन	१४०
३२—धर्म-परीक्षा	१४४

[छठा अध्याय]

(महाभारतका पूर्वाभास)

३३—कौरवोंसे युद्ध	१६३
३४—कृपार्जुन-संग्राम	१६७
३५—द्रोणार्जुन-युद्ध	१७०
३६—अश्वत्थामासे-युद्ध	१७२
३७—कर्णार्जुन-युद्ध	१७४
३८—भीष्मार्जुन-युद्ध	१७६
३९—अज्ञात-वासकी समाप्ति	१८९
४०—उत्तरा-परिणय	१९०

[सातवाँ अध्याय]

(महाभारतकी भूमिका)

विषय—				पृष्ठ
४१—रण-निमन्त्रण	..	..	..	१६२
४२—श्रीकृष्णकी मध्यस्थता	..	..	..	२०२
४३—युद्धकी तैयारी	..	..	..	२०६
४४—दौत्य-सन्देश	..	..	..	२०७
४५—व्यूह-निर्माण	..	..	..	२११
४६—मोह और निवृत्ति	..	..	..	२१३

[आठवाँ अध्याय]

(महाभारतका प्रारम्भ)

४७—पहले दिनका युद्ध	..	..	..	२१७
४८—दूसरे दिनका युद्ध	..	..	..	२१९
४९—तीसरे दिनका युद्ध	..	..	..	२२३
५०—चौथे दिनका युद्ध	..	..	..	२२६
५१—पाँचवें दिनका युद्ध	..	..	..	२३०
५२—छठे दिनका युद्ध	..	..	..	२३२
५३—सातवें दिनका युद्ध	..	..	..	२३२
५४—आठवें दिनका युद्ध	..	..	..	२३५
५५—नवें दिनका युद्ध	..	..	..	२३७
५६—दसवें दिनका युद्ध	..	..	..	२४३
५७—भीष्मकी शर-शय्या	..	..	..	२५०

[नवाँ अध्याय]

(महाभारतका मध्य)

५८—ग्यारहवें दिनका युद्ध	..	..	..	२५३
५९—बारहवें दिनका युद्ध	..	..	..	२५४
६०—तेहरवें दिनका युद्ध	..	..	..	२६०
६१—चौदहवें दिनका युद्ध	..	..	..	२६५

विषय— पृष्ठ

६२—पन्द्रहवें दिनका युद्ध २८०
६३—सोलहवें दिनका युद्ध २८३
६४—सत्रहवें दिनका युद्ध २८५

[दसवाँ अध्याय]

(महाभारतका अन्त)

६५—अठारहवें दिनका युद्ध ३०१
६६—दुर्योधनका वध ३०२
६७—अश्वत्थामाकी पैशाचिक लीला ३०६
६८—श्रीकृष्णाका शाप ३१०

[ग्यारहवाँ अध्याय]

(पाण्डवोंका राज्यारोहण)

६९—महात्मा भीष्मके उपदेश ३१३
७०—परीक्षितकी प्राण-प्रतिष्ठा ३१७
७१—अर्जुनकी दिग्विजय-यात्रा ३१८
७२—पुत्रद्वारा पराजय ३२२
७३—अश्वमेध-यज्ञ ३२७

[बारहवाँ अध्याय]

(महाप्रस्थान)

७४—मित्र-वियोग ३२९
७५—देहावसान ३३६



वीर अर्जुन

वीर अर्जुन



अर्जुनका वंश-वृक्ष

महाराज भरत पूर्वनाम सर्वमर्दन

भूमन्यु

सुहोत्र

हस्ती (हस्तिनापुरका बसानेवाला)

विकुएठन

अजमीढ़

संवरण — २३९९९ पुत्र और

कुरु

विदूरथ

अनश्वा

परीक्षित (प्रथम)

भीमसेन (:प्रथम)

प्रतिश्रवा

देवापि, शान्तनु, वाह्लीक

देवव्रत (भीष्म), विचित्रवीर्य, चित्रांगद

धृतराष्ट्र, पाण्डु, विदुर

दुर्योधन आदि १०० — युधिष्ठिर, भीम (२), अर्जुन, नकुल, सहदेव

अभिमन्यु

परीक्षित (२)

जन्मेजय।

पहला अध्याय

जन्म और बाल्यकाल

वंश-परिचय

जिन महान् प्रतापी राजा 'भरत'के नामसे इस देशका नाम 'भारतवर्ष' पड़ा, उन्हींके वंशमें, आजसे लगभग पाँच हज़ार वर्ष पहले, अर्थात् द्वापर युगके अन्तमें, विचित्रवीर्य नामक राजा हमारे इस विशाल देशपर राज्य करते थे। वे बड़े प्रतापी, यशस्वी और धर्मात्मा थे। उनके दो पुत्र थे। बड़ेका नाम 'धृतराष्ट्र' और छोटेका 'पाण्डु' था। महाराज विचित्रवीर्य युवावस्थामेंही राज-यक्ष्मा-रोगसे स्वर्गवासी हुए। अतएव उनके ज्येष्ठ भ्राता महात्मा भीष्मकोही राज्यका निरीक्षण और इन दोनों बालकोंका लालन-पालन करना पड़ा। धृतराष्ट्र और पाण्डु अल्पावस्थामेंही सब विद्या-ओंमें प्रवीण हो गये। पाण्डु धनुर्विद्यामें पारदर्शी हुए और धृतराष्ट्र पराक्रममें अद्वितीय गिने जाने लगे। धृतराष्ट्र जन्मकेही अन्धे थे, अतएव उनके छोटे भाई पाण्डुही, अपने पिताके राज्यके अधिकारी

बनाये गये। धृतराष्ट्रका विवाह गान्धार देशके राजा, सुबलकी कन्या 'गान्धारी' से हुआ।

यादव-वंशमें, श्रीकृष्णके पितामह महाराज शूरसेन बड़े प्रतापी हुए। उनकी पहली सन्तान एक कन्या थी, जिसका नाम 'पृथा' था। महाराज शूरसेनने अपने मित्र कुन्तीभोज-राजको, उनके निःसन्तान होनेके कारण, यह वचन दे रखा था, कि मैं अपनी पहली सन्तान तुम्हें दे दूँगा। अतएव अपने प्रतिज्ञानुसार उन्होंने अपनी यह पहली कन्या 'पृथा' उन्हें दे दी। कुन्तीभोज-राजने अपनी इस पालिता कन्याका नाम 'कुन्ती' रखा। जब कुन्ती विवाह-योग्य हुई, तब उसका स्वयंवर रचा गया। उसमें आये हुए अनेकों राजकुमारोंमेंसे पाण्डुराजकोही उसने अपना पति चुन, उनके गलेमें जयमाल डाल दी। अतः पाण्डु-राजकी पहली स्त्री कुन्ती देवी हुईं, इसके बाद उनका दूसरा विवाह मद्र-देशकी राजकुमारी 'माद्री'के साथ हुआ। इस प्रकार पाण्डुराजका दो स्त्रियोंसे विवाह हुआ।

माद्रीसे विवाह होनेके बाद, पाण्डुराजने दिग्विजयके हेतु यात्रा की। सबसे पहले पाण्डुराजने दशार्ण देशीय राजाओंको पराजित किया। फिर बल-गर्वित मगध-राज दीर्घको, उनके महलमें घुसकर मार डाला। इसके बाद मिथिलादेशपर आक्रमण कर उसे भी जीत लिया। इस प्रकार कितनेही नरेशोंको परास्तकर, भारत-वर्षके अनेक राज्योंको अपने राज्यमें मिला लिया।

इसके बाद वे अपनी राजधानीमें लौट आये और कुछ दिनोंतक सुख-पूर्वक राज्य करके अपनी दोनों रानियों सहित वन-विहार करनेके लिये हिमालय-गिरि-शिखरके दक्षिण पार्श्वमें जाकर निवास करने लगे।

एक दिनकी बात है, कि पाण्डुराजने मृग-व्याल-निषेवित महा-



पाण्डुकी मृगया ।

"मैथुनासक्त मृग-मृगीको देखतेही उन्होंने पाँच बाण चलाकर उन्हें विद्ध कर दिया ।"

Burman Press, Calcutta.

[पृष्ठ—१५]

वनमें हरिण-हरिणीके एक सुन्दर जोड़ेको मैथुनासक्त अवस्थामें देखा। देखतेही उन्होंने पाँच बाण चलाकर उन्हें विद्ध कर दिया। ये मृग-मृगी नहीं थे, कोई ऋषि-पुत्र मृगरूप हो, अपनी भार्य्यासे मैथुन कर रहे थे। वे तीरोंके लगतेही पृथ्वीपर गिर पड़े और दुःखित हृदयसे विलाप करते हुए बोले,—"हे भरतर्षभ! मैं किमिन्दिम नामक ऋषि हूँ और यह मेरी प्यारी धर्म्म-पत्नी है। इस अवस्थामें तुमने हमपर बाण चलाकर बड़ाही गर्हित कार्य किया है। अतः मैं तुम्हें शाप देता हूँ,कि तुम कामासक्त हो, ज्योंही अपनी प्रियाके साथ संसर्ग करोगे, त्योंही तुम्हारी मृत्यु हो जायेगी।"

ऐसा शाप देकर दुःखार्त्त मृग-मृगीने प्राण-त्याग कर दिये। पाण्डुराजने डेरेपर लौट, इस शापकी बात अपनी भार्याओंको सुनाकर कहा,—"अब तुम दोनों राजधानीको लौट जाओ और वहाँ लोगोंसे कह देना, कि पाण्डु-राजने संन्यास ले लिया है।"

स्त्रियोंने अपने पतिकी ऐसी निष्ठुर आज्ञा माननेसे इन्कार करते हुए कहा,—"नाथ! यह आप क्या कह रहे हैं? आपके बिना हम राजधानीमें जाकरही क्या करेंगी? आपको छोड़कर राज्य-भोग करनेकी अपेक्षा तो हमारा मर जानाही अच्छा है। अतः यदि आप हमें त्याग देंगे, तो हम निश्चय यहीं अपने शरीर त्याग देंगी।"

रानियोंके मुखसे यह बात सुन, पाण्डुराज चुप हो गये और पत्नियों सहित नागशत-गिरि-शृङ्ग, इन्द्र-द्युम्न-सरोवर तथा हंसकूट-पर्वतको पार करते हुए शत-शृङ्ग नामक पहाड़पर जाकर घोर तपस्या करने लगे।

एक दिन अमावस्या-तिथिमें उस पर्वतके व्रतपरायण ऋषि-मुनिगण स्वर्ग-लोकमें देव-दर्शनार्थ जा रहे थे। यह देखकर पाण्डुराजने भी अपनी दोनों पत्नियों सहित वहाँ चलनेकी इच्छा प्रकट

की। तब ऋषियोंने कहा,—"राजन्! तुम पुत्र-हीन हो। अभी तुम्हारे सिरपर पितृ- ऋणका बोझ लदा है। बिना तीनों ऋणोंसे मुक्त हुए मनुष्य उस पवित्र लोकमें जानेका अधिकारी नहीं हो सकता। अतएव तुम वहाँ जा नहीं सकते। मनुष्य-जन्म संसारमें ऋण-परिशोधके लियेही होता है। यद्यपि तुम देव-ऋण तथा ऋषि-ऋणसे छुटकारा पा चुके हो, तथापि पितृ-ऋण अभी बाकीही है।"

मृग-शापसे शापित राजा पाण्डु, पितृ-ऋण परिशोध करनेके लिये अत्यन्त चिन्तान्वित हो, अपनी भार्या कुन्तीसे बोले,—"प्रिय प्रिथे! तुम पुत्र-प्राप्तिका प्रयत्न करो। मुझे पूर्ण आशा है, कि तुम्हारे प्रयत्नसे हम लोग अवश्यही पितृ-ऋणसे मुक्त हो जायेंगे।"

कुन्तीने कहा,—"महाराज! मैं बचपनमें अपने पिताके यहाँ अतिथि-सेवाके कार्य्य पर नियुक्त की गयी थी। उन्हीं दिनों, एक दिन महर्षि दुर्वासाने मेरे यहाँ पधारकर आतिथ्य ग्रहण किया। मेरी अतिथि-सेवासे परम प्रसन्न हो, मुझे कुछ मंत्र बताते हुए महर्षिने कहा,—"सन्तानोत्पादनार्थ इन मन्त्रोंसे तुम जिस देवताका आवाहन करोगी, वह अवश्यही तुम्हें दर्शन दे, तुम्हारी मनोकामना पूर्ण करेगा।" अतएव स्वामिन्! आप आज्ञा कीजिये, कि मैं किस देवताको बुलाऊँ?"

पाण्डुराजने हर्ष प्रकट कर कहा,—"तुम धर्म्मको बुला लो।"

कुन्तीने अपने मन्त्र-बलसे धर्म्म-राजका आवाहन किया। धर्म्म-राजकी कृपासे कार्तिक शुक्ला पंचमीको कुन्तीके गर्भसे एक बड़ाही कान्तिमान पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम युधिष्ठिर रखा गया। इसके बाद बल-प्रधान-पुत्रकी इच्छासे कुन्तीने वायु-देवको बुलाया, जिनसे भीमसेनका जन्म हुआ। जन्मसेही भीमसेन बड़े हृष्ट-पुष्ट और बलवान हुए। शैशवमें वे अपने समवयस्कोंसे बहुत अधिक बलवान थे।

अर्जुनका जन्म

भीमसेनके जन्मके बाद पाण्डु-राज विचार करने लगे, कि "किस तरह मेरे एक और सर्वगुणसम्पन्न, लोकमान्य पुत्र उत्पन्न हो सकता है? सुनता हूँ, कि इन्द्र देवताओंके राजा और सर्व-श्रेष्ठ हैं। उनमें अपरिमेय बल, पराक्रम, उत्साह, और सौन्दर्य्य भी है। यदि तपस्याद्वारा मैं उन्हें परितुष्ट कर सकूँ तो एक महा-बली पुत्र अवश्य प्राप्त हो सकता है। वे मुझे जो पुत्र-प्रदान करेंगे, वह अवश्यही सर्व-गुणसम्पन्न होगा और समर-भूमिमें मर्त्य अथवा अमर्त्य सभीको जीत सकेगा। अतः मैं उनको प्रसन्न करनेके लिये घोर तपस्या करूँगा।"

ऐसा विचार कर महाराज पाण्डुने इस विषयमें ऋषि-मुनि-योंसे भी सम्मति ली। ऋषियोंके अनुमोदन करनेपर पाण्डुराजने कुन्तीको संवत्सरानुष्ठेय व्रत धारण करनेकी आज्ञा दी और आप भी देव-राज इन्द्रकी आराधनामें, सूर्य्योदयसे सूर्य्यास्ततक भीषण धूपमें एक पैरपर खड़े रहकर उग्र तपस्या करने लगे। कुछही दिनोंमें पाण्डुराजकी इस घोर तपस्यासे परम प्रसन्न हो, देव-राज इन्द्र-उनके पास आकर बोले,—"राजर्षि! कहिये, क्या इच्छा है?"

पाण्डुराजने देव-राजको साष्टाङ्ग प्रणाम कर कहा,—"प्रभो! मुझे आपसे एक पुत्रकी इच्छा है।" इन्द्रने कहा,—"एवमस्तु। मैं तुम्हें शीघ्रही एक भुवन-विख्यात पुत्र-रत्न प्रदान करूँगा। वह गो-ब्राह्मण-रक्षक, बन्धु-बान्धवोंका हितकारी और अखिल शत्रु-कुलका विनाशक होगा।" इतना कहकर देवराज अन्तर्धान हो गये।

पाण्डुराज प्रसन्न-चित्तसे अपनी भार्य्या कुन्तीके पास जाकर बोले,—"प्रिये! ईश्वरने तुम्हारी इच्छा पूर्ण की है। देव-राज इन्द्रने

प्रसन्न होकर हमें इच्छित पुत्र प्रदान करनेका वचन दिया है । अब एक परम प्रतापी, धार्मिक, यशस्वी, तेजस्वी, नीति-निपुण, क्रियावान और क्षात्र-तेज-सम्पन्न पुत्र तुम्हें उत्पन्न होगा। मैंने देव-राजसे वर पालिया है। अब तुम शीघ्र उनका आवाहन करो।"

पतिकी आज्ञा पाकर कुन्ती देवीने इन्द्रका आवाहन किया, जिनसे यथासमय हमारे चरितनायक, अपूर्व धनुर्द्धर, महावीर "अर्जुन"का जन्म हुआ।

महावीर अर्जुनके जन्म लेतेही महागम्भीर शब्दके साथ आकाश-वाणी हुई:—

"हे कुन्ती! तुम्हारा यह पुत्र कार्तवीर्यके समान वीर्यवान्, शिवके समान पराक्रमी और इन्द्रके समान अजेय होकर संसारमें तुम्हारा विमल यश विस्तीर्ण करेगा। यह मद्र, कुरु, काशी, सोमक, चेदि और करुष आदि देशोंको वशीभूत कर कौरव-वंशकी राज-लक्ष्मीका मान बढ़ावेगा। यह महाबली वीर पुरुष अपने भाइयों सहित समस्त देशोंको जीतकर, तीन बार अश्वमेध-यज्ञ करेगा।"

इस आकाश-वाणीको सुनकर ऋषि, मुनि, देव, गन्धर्व्व और अप्सरा प्रभृति अत्यन्त प्रसन्न हुए। आकाशमें विमानोंपर बैठे हुए देव-गण मनोहर शब्दोंसे दुन्दुभि तथा भेरीकी ध्वनि करते हुए पुष्प-वृष्टि करने लगे। इस प्रकार देवताओंने भी अर्जुनके जन्मपर हार्दिक हर्ष मनाया।

भरद्वाज, गौतम, कश्यप, विश्वामित्र, जमदग्नि, वसिष्ठ और अत्रि आदि सप्तर्षि भी उसी समय वहाँ आ पहुँचे। मरीचि, अंगिरा, पुलह, पुलस्त्य ऋतु, दक्ष-प्रजापति इत्यादि भी आ-आकर स्वस्त्ययन-मंत्रोंका उच्चारण करने लगे।

अनुचाना, अनुविधा, गुणमुख्या, गुणावरा, अद्रिका, सोमा,

मिश्रकेशी, अलम्बुषा, मरीचि, शूचिका, विद्युत्पर्णा, तिलोत्तमा, अम्बिका, लक्षणा, क्षेमा, देवी, रम्भा, मनोरमा, असिता, सुबाहु, सुप्रिया, सुवपू, पुंडरीका, सुगंधा, सुरसा, प्रमाथिनी, काम्या और शरद्वती आदि स्वर्गकी प्रसिद्ध-प्रसिद्ध अप्सराएँ दिव्य मालाओं और दिव्य भूषण-वसनोंसे सुसज्जित हो, वहाँ आ, मण्डल बाँधकर नाचने लगीं।

उस समयकी छटा ही निराली थी। उसका वर्णन करना इस लोहेकी लेखनीकी शक्तिके बाहर है। इसके बाद कुन्ती देवीने दोनों अश्विनी-कुमारोंका आवाहन कर माद्रीसे दो निरुपम-रूप-सम्पन्न पुत्र उत्पन्न कराये। इन दोनों बालकोंमें बड़ेका नाम 'नकुल' और छोटेका 'सहदेव' रखा गया। इस प्रकार महाराज पाण्डुको देवताओंकी कृपासे परम पराक्रमी, कीर्त्तिमान्, कुरु-कुलावतंस पाँच पुत्र प्राप्त हुए। ये शुभ लक्षण-सम्पन्न, चन्द्रमाके समान प्रिय-दर्शन, महाधनुर्द्धर, विशाल-वक्ष, सिंह-दर्प, सिंह-लोचन सिंह-ग्रीव, सिंह-विक्रम और सिंह-विक्रान्त स्थलमें विचरनेवाले पाँचों भाई दिन-दिन शुक्लपक्षके चन्द्रमाकी तरह वृद्धि पाने लगे।

इधर राजा पाण्डुके बड़े भाई धृतराष्ट्रके घर भी व्यासजीके आशीर्वादसे एक सौ पुत्र और एक कन्या उत्पन्न हुई थी। इनमें सबसे बड़ा लड़का 'दुर्योधन' था। यह बड़ाही नीच स्वभावका निकला। इसका एक भाई 'दुःशासन'भी था, जो अपनी नीचताके कारण इतिहासमें बड़ी प्रसिद्धि प्राप्तकर चुका है।

अर्जुनके नामकरण-संस्कारके दिन महामहोत्सव मनाया गया और उनके दस नाम रखे गये। (१) अर्जुन, (२) फाल्गुन, (३) जिष्णु (४) किरीटि (५) श्वेत-वाहन (६) वीभत्सु, (७) विजय (८) कृष्ण, (९) सव्यसाची और (१०) धनञ्जय।

इनके शैशव-कालमेंही इनके पिता, महाराज पाण्डुका स्वर्ग-वास होगया। माद्री अपने दोनों पुत्रोंको कुन्तीके सुपुर्दकर राजाके साथ सती हो गयीं। कुन्ती देवी अपने पाँचों पुत्रोंको लेकर बहुतसे ऋषि-मुनियों सहित हस्तिनापुरमें चली आयीं। उनके साथके एक वृद्ध ऋषिने राज-सभामें जाकर कहा,— "महाराज पाण्डु, विषय-वासनासे मुख मोड़े हुए शत-शृंग नामक पहाड़पर जाकर निवासकर रहे थे। वहाँ दैव-कृपासे उनके पाँच पुत्र पैदा हुए हैं। आज सात दिन हुए, कि उनका स्वर्ग-वास होगया। देवी माद्री उनके साथ सती हो गयी हैं और देवी कुन्ती पाँचों पुत्रों सहित राजधानीमें पधारी हैं। अब जो कर्त्तव्य है, उसे आप लोग निश्चय कर लें।"

महाराज पाण्डुकी मृत्युका समाचार सुन, राज-सभामें बड़ा शोक छा गया। भीष्म और धृतराष्ट्र बहुत विलाप करने लगे। सारे राज्यमें शोक-प्रदर्शनार्थ सब काम-काज बन्द कर दिये गये और सब लोग सम्मान-पूर्व्वक देवी कुन्ती तथा पाँचों पाण्डवोंको घर ले आये।

इधर पाँचों पाण्डवगण अपने पितृ-गृहमें आनन्द-पूर्वक रहने लगे। यथासमय उनके चूड़ाकर्म, कर्णवेध, और उपनयनादि सभी वैदिक संस्कार किये गये। उनके पढ़ने-लिखनेका भी उत्तम प्रबन्ध कर दिया गया। धृतराष्ट्रके सौ और पाण्डुके पाँच पुत्र—इस प्रकार १०५ भाई एकही गुरुके पास विद्या पढ़ने लगे। धृतराष्ट्रके पुत्र, जो कौरव कहलाते थे, अपनी नीचताके कारण मन-ही-मन पाण्डवोंसे बड़ा द्वेष रखते थे; परन्तु विशुद्ध-हृदय पाण्डवोंका व्यवहार उनके प्रति बड़ाही उत्तम होता था। उन्होंने कौरवोंसे न तो कभी ईर्ष्या-द्वेषही रखा और न बदला लेनेका ही विचार किया।

विद्या-शिक्षा

भीष्म पितामहने सब राजकुमारोंको कृपाचार्य्यकी देख-रेखमें छोड़ दिया। सब राजकुमार, उन्हींसे वेद-वेदाङ्गकी शिक्षाके अतिरिक्त शस्त्र-विद्या भी सीखने लगे। कृपाचार्य्य उन्हें बड़ेही प्रेमसे गदा-युद्ध, मल्ल-युद्ध, कुक्कुट-युद्ध, धनुर्विद्या, घोड़े, हाथी, ऊँट और रथकी सवारी, तलवारके हाथ, रथपर चढ़कर तथा पैदलही युद्ध करना, आदि अनेक तरहके युद्ध-कौशल सिखाने लगे।

एक दिनकी बात है, कि सब राजकुमार हस्तिनापुरके बाहर गेंद खेल रहे थे। खेलते-खेलते एक दिन उनलोगोंकी गेंद, एक सूखे कुएँमे गिर पड़ी। बालकोंने उसे निकालनेके सैकड़ों उपाय किये, परन्तु उसे कोई बाहर न निकाल सका।

दैवात् उसी समय एक ओरसे धनुर्विद्या-विशारद आचार्य्य द्रोण वहाँ आ निकले। उन्होंने बालकोंको गेंदके लिये दुःखी देखकर कहा,—"बच्चो! अब उस गेंदके लिये तुम लोगोंको इतना दुःख उठानेकी आवश्यकता नहीं। जाओ, तुम लोग, एक मुट्ठीभर तिनके ले आओ ; मैं तुम्हारी गेंद अभी निकाले देता हूँ।"

यह सुनकर लड़के बड़ेही प्रसन्न हुए और चटपट तिनके ले आये। आचार्य्य द्रोणने पहले एक तिनकेको धनुषपर चढ़ाकर गेंदमें मारा, जो उसमें घुस गया। फिर दूसरे तिनकेसे पहले तिनकेको छेद दिया। इसी भाँति उन्होंने एकसे एकको छेदकर बातकी बातमें गेंद कुएँसे बाहर निकाल दी। इतनी सुविधासे द्रोणाचार्य्यको गेंद निकालते देखकर बालकोंको बड़ाही आश्चर्य्य हुआ। वे कहने लगे,—"हमारे लिये यह बड़ी लज्जाकी बात है, कि क्षत्रिय-कुलमें जन्म लेकर और धनुर्वेदकी इतनी शिक्षा पाकर

भी हम एक छोटासा काम न कर सके। हमें धिक्कार है !"

इसके बाद सब बालकोंने बड़े विनयके साथ द्रोणाचार्य्यका परिचय पूछा; इसपर द्रोणाचार्य्यने कहा,—"जाओ, तुम लोग महात्मा भीष्मसे मेरे आकार-प्रकार, रंग-रूप और उम्रका वर्णन कर, मेरे इस कार्य्यको भी कह सुनाओ। वेही तुम लोगोंको मेरा परिचय बता देंगे। वे मुझे खूब जानते हैं।"

यह सुन, सब राजकुमार इस अपूर्व धनुर्द्धरका परिचय पानेके लिये दौड़े हुए पितामहके पास आये।

भीष्मजी बालकोंके मुँहसे आद्योपान्त सारा वृत्तान्त सुनतेही समझ गये। उन्होंने कहा,—"जिन्होंने तुम्हारी गेंद निकाली है, वे तुम्हारे गुरु कृपाचार्य्यके बहनोई धनुर्विद्या-विशारद महात्मा द्रोणाचार्य्य हैं।"

जब भीष्मजीको द्रोणाचार्य्यके शुभागमनका पता लगा, तब वे अत्यन्त प्रसन्न हुए और बड़ी उत्कण्ठाके साथ उसी कुएँपर द्रोणाचार्य्यसे मिलने गये।

बहुत देरतक कुशल-प्रश्न और अन्यान्य बातें होनेके पश्चात् भीष्मने हाथ जोड़कर द्रोणाचार्य्यसे, राजकुमारोंको शस्त्र-विद्या सिखानेकी प्रार्थना की। द्रोणाचार्य्यने यह बात सहर्ष स्वीकार कर ली।

इसके बाद महात्मा भीष्म बड़े आदरसे द्रोणाचार्य्यको अपने घर ले आये। दूसरेही दिनसे राज्यकी ओरसे गाँवके बाहर यमुना नदीके तटपर अच्छी जगह देखकर एक बड़ा भारी विद्यालय बनवाया जाने लगा। जब विद्यालय बनकर तैयार हो गया, तब शुभ-मुहूर्त्त देखकर आचार्य्य द्रोण, अपने शिष्योंके साथ वहीं रहने और उन्हें भाँति-भाँतिकी रण-विद्या सिखाने लगे।

एक दिन द्रोणाचार्य्य अपने विद्यार्थियोंसे बोले,—"क्या कोई

राजकुमार शस्त्र-विद्या सीखकर मेरी इच्छित-आशा पूर्ण करनेकी सामर्थ्य रखता है?" यह सुनकर सब राजकुमार चुप हो रहे। इस बातका उत्तर किसीने नहीं दिया। तब अर्जुनने खड़े होकर नम्रताके साथ कहा,—"गुरुदेव! यदि आपकी कृपा रही तो मैं अवश्यही आपकी इच्छित आशा पूर्ण करूँगा।"

यह सुन, द्रोणाचार्य्यने बड़ी प्रसन्नतासे अर्जुनको छातीसे लगा, उन्हें अनेकों आशीर्वाद दिये।

उसी दिनसे अर्जुनपर उनका कुछ विशेष स्नेह और ममत्व हो गया। द्रोणाचार्य्यने राजकुमारोंको अनेक प्रकारकी अस्त्र-विद्याएँ सिखायीं। थोड़ेही दिनोंमें द्रोणाचार्य्यकी शिक्षाकी प्रशंसा सारे देशमें फैल गयी और देश-देशान्तरके राजकुमारगण उनके पास आकर अस्त्र-विद्या सीखने लगे। सूत-पुत्र राधा-नन्दन 'कर्ण' भी इसी विद्यालयमें भर्त्ती हो गया था और अर्जुनको अपनेसे दक्ष देख, मन-ही-मन उनसे खार खाने लगा था।

अर्जुन, धनुर्वेदकी पूर्ण शिक्षा पानेके लिये रात-दिन द्रोणाचार्य्यके पीछे लगे रहते थे। इसीलिये वे अस्त्र-विद्यामें अपने सब सहपाठियोंसे अधिक निपुण हो गये। अस्त्र-प्रयोगमें समान होनेपर भी अर्जुनकी हस्तलाघवतामें कोई उनका सानी नहीं था। अर्जुनकी अस्त्र-संचालन-शैली देख, द्रोणाचार्य्य भी समझ गये, कि इस भूमण्डलपर अर्जुनके समान कोई दूसरा अस्त्र-धारी न होगा।

यह हम पहलेही कह आये हैं, कि द्रोणाचार्य्य अपने शिष्यों सहित उसी विद्यालयमें रहते थे। उन्होंने अपने विद्यालयका यह नियम कर रखा था, कि गुरुकुलकी भाँति वहाँका कुल काम विद्यार्थी अपने ही हाथसे करें। अतः खाना-पकाना, पानी भरना आदि सब छोटे-बड़े काम राजकुमारोंकोही करने पड़ते थे। द्रोणा-

चार्य्य, अपने सब शिष्योंको तो छोटे-छोटे मुखके पात्र देकर जल भरने भेजते ; पर अपने पुत्र अश्वत्थामाको जल भरनेके लिये बड़े मुखका घड़ा देते थे। इससे उसे यह सुविधा होती, कि वह अन्य विद्यार्थियोंकी अपेक्षा जल्दी अपना काम कर लेता। इसमें जो थोड़ा-बहुत समय मिलता, उतने समयमें आचार्य्य, अपने पुत्रको गुप्त विद्याएँ सिखाया करते थे ; क्योंकि और समय तो सदा सब विद्यार्थी एकही साथ रहा करते थे। अर्जुनने अपने गुरुकी यह चालाकी ताड़ ली। अब वे वरुणास्त्र द्वारा जल्दी-जल्दी पानी भरना समाप्त कर अश्वत्थामासे भी पहले आचार्य्यके पास आने लगे। अब द्रोणाचार्य्यको विवश होकर, जो गुप्त विद्याएँ वे अपने पुत्रको बताते, वह अर्जुनको भी बतानी पड़तीं। इसी कारण अस्त्र-विद्या-विशारद मेधावी अर्जुन, अपने गुरु-पुत्र अश्वत्थामासे किसी बातमें कम न रहे।

अर्जुन, आलस्य छोड़कर गुरु-सेवा और अस्त्र-विद्या सीखनेमें रात-दिन तल्लीन रहा करते थे। इसीलिये द्रोणाचार्य्य उन्हें अपने पुत्रके समान मानते थे। एकदिन अर्जुन रात्रिके समय दीपकके प्रकाशमें भोजन कर रहे थे। अचानक हवाके झोंकेसे दीपक बुझ गया; परन्तु अर्जुन भोजन करतेही रहे। वह स्थूल दीपक तो बुझ गया ; परन्तु उनके हृदयमें ज्ञानका सूक्ष्म दीपक उसी क्षण जल उठा। उसी समय उनके मनमें यह विचार आया, कि ग्रास सहित मेरा हाथ, घोर अँधेरेमें भी सीधा मुँहमें जा पहुँचता है और फिर ठीक थालीमें रखे पदार्थोंको जा पकड़ता है, इसका कारण एक मात्र अभ्यासही कहा जा सकता है। तो क्या मैं अभ्यास द्वारा अँधेरेमें तीर मारकर लक्ष्य-भेद न कर सकूँगा ? अवश्य कर सकूँगा !

मनमें इस विचारके पैदा होतेही, अर्जुनने चटपट भोजन समाप्त किया और उसी समयसे उत्साह-पूर्वक हाथमें धनुष-बाण लेकर अँधेरेमें ही लक्ष्य-भेद करनेका अभ्यास आरम्भ कर दिया।

उस सूनसान रात्रिमें अकस्मात् तीरोंके सरसर चलनेका शब्द आचार्य्यके कानोंमें पड़ा। वे बड़े आश्चर्य्यमें पड़कर शीघ्रही उस स्थानपर जा पहुँचे, जहाँ अर्जुन अँधेरेमें बाण चलानेका अभ्यास कर रहे थे। अन्धेरेके कारण बाण चलानेवालेको देख न सकनेपर, उन्होंने पूछा,—"इस घोर अन्धकार-रात्रिमें कौन बाण चला रहा है?"

अर्जुनने कहा,—"गुरुदेव! मैं आपका चरण-सेवक अर्जुन हूँ।"

आचार्य्य,—"वत्स अर्जुन! आज इस अन्धकारमयी रात्रिमें तुम्हारे मनमें यह क्या धुन समायी है? क्या रात्रिमें भी तुम आराम न करोगे?"

यह सुनकर अर्जुनने दीपक बुझनेके समयसे लेकर अपने निश्चय तककी सारी बातें, द्रोणाचार्य्यसे कह सुनायीं। अर्जुनकी बातोंसे प्रसन्न होकर द्रोणाचार्य्यने उन्हें हृदयसे लगा लिया। उन्होंने आँखोंमें आनन्दके आँसू भरकर गद्गद कण्ठसे कहा,—"वीर-चूड़ामणि अर्जुन! अस्त्र संचालन-विद्यामें तुम्हारा एकान्त अनुराग देखकर, तुमपर मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ हूँ। आरम्भसे ही विद्या-प्राप्तिमें तुम्हारी यह निष्ठा देखकर तुम्हारी प्रभविष्णुताका मुझे पूरा पता लग गया है। मैं अबसे ऐसा प्रयत्न करूँगा, जिससे इस अवनि-मण्डलपर तुम्हारे समान कोई दूसरा धनुर्द्धर न रहेगा।"

गुरु उन्हीं विद्यार्थियोंको मन लगा कर विद्या सिखाता है, जो विद्या देनेके उपयुक्त पात्र होते हैं। अतः अबसे द्रोणाचार्य्यने समस्त राजकुमारोंमेंसे केवल अर्जुनकोही अपना सर्वोत्तम विद्यार्थी समझ लिया और वे उन्हें अश्व, रथ, गज तथा पैदल युद्ध करनेकी

शिक्षा विशेष रूपसे देने लगे। गदा-युद्ध, खड्ग-युद्ध, तोमर, प्रास और शक्ति आदि चलानेकी कई प्रकारकी तरकीबें उन्हें बतलायीं। यही नहीं, आचार्य्यने उन्हें एकही समयमें कई बाणोंके चलाने तथा अनेक लोगोंसे युद्ध करनेकी भी शिक्षा दी। सारांश यह, कि आचार्य्यको जितनी भी विद्याएँ आती थीं और उन्होंने जिन-जिन अस्त्रोंका प्रयोग महावीर परशुरामसे सीखा था, वह सब अर्जुनको सिखा दिया और किसी भाँतिका भेद-भाव न रखा।

एकलव्यकी गुरु-भक्ति

हिरण्यधनु नामक निषादका होनहार पुत्र 'एकलव्य' एक दिन आचार्य्यके पास पढ़ने आया था। परन्तु आचार्य्य द्रोणने उसे विद्यालयमें भरती कर लेना उचित नहीं समझा ; क्योंकि राज-कुमारोंके साथ उसे पढ़ाना अनुचित था। लाचार निराश हो, एकलव्य अपने घर लौट आया। उसने घरके पासवाले वनमें एक पेड़के नीचे द्रोणाचार्य्यकी एक मिट्टीकी मूर्त्ति बनाकर रख दी और वह उस मूर्तिको ही अपना गुरु मानकर धनुर्विद्या सीखने लगा।

एक दिन द्रोणाचार्य्य अपने विद्यार्थियों सहित घोड़ेपर चढ़कर शिकार खेलने गये। उनके साथ एक शिकारी कुत्ता भी था। वह कुत्ता शिकारकी खोजमें भूलता-भटकता अचानक उस वनमें जा पहुँचा, जहाँ एकलव्य धनुर्वेदका अभ्यास कर रहा था। कुत्ता उसकी भयानक सूरत देखकर भौंकने लगा। एकलव्यने झुँझलाकर एकही साथ सात-तीर छोड़कर उसके मुँहको भर दिया ; जिससे वह भूँक न सका और उसी अवस्थामें भागता हुआ आचार्य्य तथा उनकी शिष्य-मण्डलीके सामने आ खड़ा हुआ।

कुत्तेको देखतेही अर्जुनको बड़ा आश्चर्य हुआ। वे इस रहस्य-

का पता लगानेके लिये अपनी मण्डलीसे खसककर खोजते-ढूँढ़ते उसी स्थान पर जा पहुँचे, जहाँ एकलव्य बाण-विद्याका-अभ्यास कर रहा था। अर्जुन उस विकृताकार व्यक्तिको पहचान न सके। वे पूछने लगे,—"भाई! तुम कौन हो? तुम्हारा नाम क्या है? और यह उत्तम धनुर्वेद तुमने किससे सीखा है?"

एकलव्य बोला,—"मैं निषाद-राज हिरण्यधनुका पुत्र हूँ। मेरा नाम एकलव्य है। मैं गुरु द्रोणाचार्य्यजीका शिष्य हो, निरन्तर धनुर्वेदका अभ्यास किया करता हूँ।"

यह बात अर्जुनके दिलमें खटक गयी। उन्होंने आचार्य्यके पास आ, उन्हें एकान्तमें ले जाकर कहा,—"भगवन्! आपने तो मुझसे कहा था, कि मेरा कोई शिष्य तुमसे बढ़कर नहीं होगा और मैं ऐसा प्रयत्न करूँगा, कि तुम्हारे समान इस भूमण्डलपर कोई दूसरा धनुर्द्धर ही न दिखाई देगा। परन्तु आपका 'एकलव्य' नामक शिष्य मुझसे अधिक उत्कृष्ट किस तरह हो गया?"

अर्जुनकी बात सुन, पहले तो आचार्य्य बड़े चकराये, परन्तु फिर कुछ सोचकर; अर्जुनके साथ-साथ उस स्थानपर गये, जहाँ निषाद-तनय जटाधारी एकलव्य धनुर्वेदका अभ्यास कर रहा था। एकलव्य अपने गुरु द्रोणको देखतेही धनुष-बाण रख, आगे बढ़ा और साष्टांग दंडवत-प्रणाम कर, हाथ जोड़, सन्मुख खड़ा हो गया। यह देख, द्रोणाचार्य्यने कहा,—"क्यों एकलव्य! तुम मेरे शिष्य कबसे हुए?" इसपर एकलव्यने एक वृक्षके नीचे द्रोणाचार्य्यकी प्रतिमा दिखाकर कहा,—"प्रभो! जबसे आपने मुझे दुरदुराकर अपने विद्यालयसे निकाल दिया, तभीसे मैं आपकी यह प्रतिमा बना, आपका शिष्य हुआ और आपके नामपर ही धनुर्विद्याका अभ्यास करने लगा।"

यह सुन, आचार्य्यने कहा,—"एकलव्य ! यदि तुम मेरे सच्चे शिष्य हो, तो गुरु-दक्षिणा प्रदानकर अपनी विद्याको सफल करो।"

एकलव्यने प्रसन्न होकर कहा,—"प्रभो ! आज्ञा कीजिये, कि मैं आपकी सेवामें कौनसी वस्तु भेंट करूँ ? गुरुके लिये संसारमें ऐसी कोई वस्तु नहीं, जो न दी जा सके।"

द्रोणाचार्य्यने कहा;—"यदि तुम गुरु-दक्षिणा देना ही चाहते हो, तो बिना कुछ सोच-विचार किये अपने दाहिने हाथका अँगूठा काट कर मुझे दे दो।"

एकलव्यने गुरुकी आज्ञा पातेही प्रसन्नता-पूर्वक अपने दाहिने हाथका अँगूठा काटकर उसे गुरुकी भेंट कर दिया ! इसके बाद वह अपनी शेष अङ्गुलियोंसेही धनुष खींचने, बाण चढ़ाने और चलाने आदिका अभ्यास करने लगा। परन्तु अब वह बात, वह हस्तलाघवता और शीघ्रता न रही। यह देख, अर्जुन बड़े प्रसन्न हुए। उनके हृदयका शूल दूर हो गया और आचार्य्यने भी अर्जुनको दिया हुआ वचन सत्य कर दिखाया।

शर-सन्धान

द्रोणाचार्य्यसे सभी राजकुमारोंने उत्तमोत्तम अस्त्र-प्रयोग सीखे थे, परन्तु अर्जुन सभी विषयोंमें श्रेष्ठ रहा करते थे। यही कारण है, कि ये आगे चलकर रथियोंमें शिरोमणि हो, भूमण्डलपर विख्यात हुए। उस समय अर्जुन जैसा वीर संसारमें दूसरा नहीं था। सबको समान रूपसे शस्त्रोपदेश मिलनेपर भी, वीर्यवान् अर्जुनही सब राजकुमारोंमें अपूर्व योद्धा और अद्वितीय अतिरथके नामसे विख्यात हुए; परन्तु धृतराष्ट्रके पुत्र और उनके साथी सहपाठी सदा उनसे मन-ही-मन कुढ़ते और जला करते थे।

एक दिन द्रोणाचार्य्यने अपने सब शिष्योंको बुलाकर कहा,—"तुम लोग अपना-अपना धनुष-बाण लेकर शीघ्र मेरे साथ चलो। मुझे आज यह देखना है, कि तुममेंसे कौन सबसे अच्छी निशानेबाज़ी कर सकता है।"

आज्ञा पातेही सब राजकुमार धनुष-बाण लेकर आचार्य्यके पास आ पहुँचे। तब आचार्य्य उन्हें एक विशाल वृक्षके निकट ले गये। उस वृक्षपर द्रोणाचार्य्यने पहलेहीसे एक कृत्रिम पक्षी बनवाकर रखवा दिया था। वे उस पक्षीकी ओर संकेत करके कहने लगे,—"अब तुम लोग अपने-अपने धनुषपर तीर चढ़ाकर तैयार रहो। मेरी आज्ञा पातेही बाणसे उस पक्षीका सिर काटकर नीचे गिराना पड़ेगा।"

इसके बाद आचार्य्यने युधिष्ठिरकी ओर देखकर कहा,—"युधिष्ठिर! तीर चढ़ाकर निशाना साध लो और मुझे यह बताओ, कि क्या तुम्हें वह पक्षी दिख रहा है?"

युधिष्ठिर,—"हाँ, प्रभो! वह मुझे अच्छी तरह दिख रहा है।"

द्रोणाचार्य,—"तुम्हें यह वृक्ष, मैं और अन्य राजकुमार भी दिखाई देते हैं या नहीं?"

युधिष्ठिर,—"हाँ, गुरुदेव! मुझे आप, सब राजकुमार और ये वृक्ष आदि भलीभाँति दिखाई दे रहे हैं।"

द्रोणाचार्य्य,—"अच्छा, अब तुम हट जाओ। तुम लक्ष्य-भेद न कर सकोगे।"

इसी तरह द्रोणाचार्य्यने एक-एक कर सभी राजकुमारोंसे प्रश्न किये। परन्तु सबने यही कहा,—"हमें आप, राजकुमार, वृक्ष और वह पक्षी, सभी दिखाई पड़ते हैं।" आचार्य्यने सबको अलग हटा दिया। सबके अन्तमें उन्होंने अर्जुनको पास बुला-

कर मुस्कराते हुए कहा,—"धनञ्जय ! अब तुम्हारी बारी है। तुम्हें यह निशाना मारना है, अतएव धनुषपर बाण चढ़ाकर निशाना ठीक करलो। मेरे कहनेके साथही बाण छोड़ना पड़ेगा।"

अर्जुनने अपने गुरुकी आज्ञा पातेही उन्हें प्रणामकर धनुषपर बाण चढ़ा लिया और वे सावधानीसे पक्षीकी ओर निशाना साधकर खड़े हो गये। द्रोणाचार्य्यने पूछा,—"अर्जुन ! क्या तुम्हें वह पक्षी, यह वृक्ष, मैं और अन्य राजकुमारगण दिखाई पड़ते हैं ?"

अर्जुनने कहा,—"महाराज ! मुझे तो इस समय उस पक्षीके सिवा और कुछ भी दिखाई नहीं देता।"

द्रोणाचार्य्य,—"क्या तुम्हें समूचा पक्षी दिख रहा है ?"

अर्जुन,—"नहीं महाराज ! पक्षी भी नहीं ; मुझे तो केवल उसका सिरही दिख रहा है।"

अर्जुनकी बात सुनतेही द्रोणाचार्य्यका शरीर मारे हर्षके फूल गया। उन्होंने बड़े उत्साहके साथ कहा,—"अर्जुन ! बाण छोड़ दो।"

अर्जुनने चट तीर छोड़ दिया, जिसके लगतेही पक्षीका सिर कटकर नीचे, ज़मीन पर आ गिरा। यह देखकर सब राजकुमार आश्चर्य्य करने लगे। द्रोणाचार्य्यने बड़े प्रेमसे अर्जुनको गले लगा लिया। आज द्रोणाचार्य्यको पूरा विश्वास हो गया, कि अर्जुन मेरे शत्रु राजा द्रुपदको अवश्य पराजय कर देगा।

गुरु द्रोणकी शिष्य-मण्डलीमें अर्जुन, बाण चलानेमें जैसे निपुण थे, तलवार चलाने और रथपर बैठकर युद्ध करनेमें भी वैसे-ही पटु थे। असीम बलशाली भीमसेन गदा-युद्धमें श्रेष्ठ समझे गये, नकुल और सहदेव तलवार चलानेमें अद्वितीय रहे। दुर्योधन गदा-युद्ध और असि-संचालनमें चतुर गिना गया, कर्ण और अश्वत्थामा सभी विद्याओंमें चलतापुर्जा माने गये परन्तु अर्जुन जैसा साहसी,



शर-सन्धान।

"धनञ्जय! अब तुम्हारी बारी है। तुम्हें यह निशाना मारना है।"



दूरदर्शी, बुद्धिमान और शस्त्रास्त्र-कुशल वीर, उस समय, इस ससागरा पृथ्वीपर कोई भी दिखाई नहीं देता था।

गुरुकी प्राण-रक्षा

उपर्युक्त परीक्षाके कुछ दिन बाद, एक दिन आचार्य्य द्रोण, अपने सब शिष्योंके साथ गंगा स्नान करने गये। आचार्य्यने ज्योंही जलमें पैठकर डुबकी लगायी, त्योंही एक बड़े भारी घड़ि-यालने उनका पैर पकड़ लिया। गुरु द्रोण स्वयं उससे बचनेमें सब तरहसे समर्थ होनेपर भी अपने शिष्योंकी कार्य-पटुता और उपस्थित-बुद्धि देखनेके लिये चिल्लाकर बोले,—"दौड़ो दौड़ो, मुझे शीघ्र बचाओ, मुझे घड़ियालने जंघातक निगल लिया है, मेरी रक्षा करो!"

गुरु द्रोणकी यह बात सुन, सब शिष्य घबराकर "हाय! हाय!" करते हुए इधर-उधर दौड़ने लगे, पर यह किसीकी समझमें न आया, कि किस प्रकार गुरुकी रक्षा करें। परन्तु महावीर अर्जुन ज़रा भी न घबराये और उन्होंने चट धनुष-बाण उठाकर चोखे-चोखे पाँच बाणोंसे, उस जलमें डूबे हुए घड़ियालके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। यह देख आचार्य्य, अर्जुनकी कार्य-दक्षतापर बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने चट जलसे निकलकर, धनञ्जयको गले लगाते हुए ऊँचे स्वरसे कहा,—"पुत्र अर्जुन! तुम मेरे समस्त शिष्योंमें शीर्षस्थानीय हो। अतः मैं तुम्हें पुरस्कृत करनेके लिये यह 'ब्रह्म शिर' नामक अद्वितीय और सर्व्वश्रेष्ठ अस्त्र, उसके प्रयोग और संहार-सहित प्रदान करता हूँ। परन्तु इसे अल्प तेजस्वी मनुष्यपर कभी न छोड़ना, नहीं तो यह समस्त भूमण्डलकोही जला डालेगा। पुत्र! यह अस्त्र अपनी असाधारणताके कारण त्रैलोक्यमें विख्यात है। यदि कभी मनुष्यके अतिरिक्त देव, दानव आदि कोई बलवान्

शत्रु संग्राममें तुम्हारा सामना करे, तो उसपर निस्सङ्कोच होकर इस अस्त्रका प्रयोग करना।"

अर्जुनने सिर झुकाकर सादर उस अस्त्रको ग्रहण किया। तब आचार्य्यने अर्जुनके कानमें उस महास्त्रका प्रयोग और संहार बताकर उच्च स्वरसे कहा,—"महावीर धनञ्जय! मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ, कि भूमण्डलभरमें तुम्हारे समान कोई धनुषधारी नहीं होगा। तुम सदैव शत्रुओंमें अजेय और रण-कौशलमें अनुपम कहाओगे। तुम्हारी कीर्त्ति-काहिनी दिग्दिगन्तमें, अनन्त कालतक व्याप्त रहेगी।"

आचार्य्यके अस्त्र-प्रदान और आशीर्वादको देख-सुनकर कौरव-राजकुमारगण मन-ही-मन जल उठे। पाण्डवोंके प्रति जो ईर्ष्यानल वर्षोंसे उनके हृमयोंमें धधक रहा था, वह मानों इस उपस्थित घटना-रूपी आहुतिको पाकर और भी प्रज्वलित हो उठा। परन्तु वे करही क्या सकते थे?—मन-ही-मन दाँत पीसकर सब लोग रह गये। इसके बाद आचार्य्य सन्ध्योपासन समाप्तकर, प्रसन्न चित्तसे अपने शिष्यों सहित विद्यालयमें लौट आये।

दूसरा अध्याय

वैर-भावका विकास

राज-सभा

इस प्रकार सब राजकुमारोंको अस्त्र-विद्यामें पूर्ण पण्डित बना कर, आचार्य्य द्रोणने महात्मा भीष्मको इस बातकी सूचना दी, कि राज-पुत्रोंने यथा-विधि युद्ध-शिक्षा प्राप्त करली है और अस्त्र-प्रयोगमें अब वे परम निपुण हो गये हैं।

महात्मा भीष्म, आचार्य्यके मुखसे यह शुभ संवाद सुन, बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने आचार्य्यकी प्रशंसा करते हुए बड़े विनयके साथ कहा,—"महात्मन्! आपकी इस कृपाके लिये मैं आजन्म आपका आभारी रहूँगा। आपने राजकुमारोंको अस्त्र-कुशल बना, मुझेही नहीं, वरन् समस्त कौरव-कुलको उपकृत किया है। अब आप महाराज धृतराष्ट्रकी राज-सभामें यह बात उपस्थितकर, राजकुमारोंकी अस्त्र-क्रीड़ा दिखानेकी अनुमति लीजिये ; क्योंकि उनकी आज्ञा बिना अस्त्र-क्रीड़ाका प्रबन्ध करना अनुचित होगा।"

आचार्य्यने महात्मा भीष्मके परामर्शानुसार एक दिन राज-सभामें जाकर, ऐसे समय यह बात छेड़ी, जब कि वहाँ महाराज धृतराष्ट्र, भीष्म-पितामह, महात्मा विदुर, राज-गुरु कृपाचार्य्य, सोमदत्त तथा अन्यान्य बड़े-बड़े शूर-सामन्तगण उपस्थित थे। महाराज धृतराष्ट्र सहित सभी लोगोंने इस बातको प्रसन्नता-पूर्व्वक स्वीकार किया। महाराज धृतराष्ट्रने उसी समय विदुरको आज्ञा दी, कि आचार्य्य द्रोणके परामर्शानुसार शीघ्रही एक सुविशाल रङ्ग-भूमि तैयार करायी जाये। महात्मा विदुरने राजाज्ञा शिरोधार्य्य कर, उसी समय बड़े-बड़े सुचतुर कारीगरोंको बुलवाया और आचार्य्य द्रोण द्वारा निर्वाचित, एक बड़े भारी साफ़-सुथरे मैदानमें, सुविस्तृत रङ्ग-भूमि तैयार करानेमें हाथ लगा दिया।

सहस्रों सुचतुर कारीगरोंके अविश्रान्त उद्योगसे, कुछही दिनोंमें उस स्थानपर एक बड़ीही भव्य रङ्ग-भूमि तैयार होगयी। रङ्ग-भूमिकी सजावट वर्णनातीत थी। उसकी भूमिमें कोसोंतक हरी-हरी कोमल घास लगायी गयी थी, जिसे देखकर सब्ज़ मख़मलका धोखा होता था। उसके चारों ओर पुरुषों और स्त्रियोंके लिये बड़े-बड़े दोतल्ले और तिनतल्ले सुविशाल प्रेक्षणागार बनवाये गये थे, जिनमें बैठकर दर्शकगण आनन्द-पूर्वक राजकुमारोंकी अस्त्र-क्रीड़ा देख सकते थे। हस्तिनापुरके बड़े-बड़े गण्य-मान्य धनाढ्य पुरुषोंने भी राजाज्ञा प्राप्तकर अपने बन्धु-बान्धवों और इष्ट-मित्रोंके लिये वहाँ सुन्दर-सुन्दर बेदियाँ और मञ्च बनवाये थे। सभी प्रेक्षणागार नाना प्रकारके रंग-बिरंगे फूल-पत्तों, ध्वजा-पताकाओं तथा स्वर्ण-कलशोंसे भलीभाँति सुसज्जित किये गये थे। उनपर जगह-जगह बड़ी सुन्दरताके साथ तरह-तरहके बेल-बूटे बनाये गये थे और मीनाकारीका काम किया गया था। बैठनेके

लिये भाँति-भाँतिके सुन्दर-सुन्दर स्वर्ण और रौप्य-सिंहासन बनवाये गये थे। उस सुविशाल रङ्ग-भूमिके चारों ओर चार बड़े-बड़े सिंह-द्वार भी बनवाये गये थे और उनके ऊपर नौबत बजनेका प्रबन्ध किया गया था।

महाराज धृतराष्ट्रके आज्ञानुसार देश-विदेशोंके राजा-महाराजों और सामन्त-सरदारोंको निमन्त्रण-पत्र भेजे गये थे। सब लोगोंने समयसे पहलेही हस्तिनापुरमें आकर डेरे डाल दिये थे। राज्यकी ओरसे सबके आतिथ्य-सत्कारका पूरा प्रबन्ध कर दिया गया था। अनन्तर आचार्य्य द्रोणका नियत किया हुआ दिन आ उपस्थित हुआ। निर्द्दिष्ट समयपर रङ्ग-भूमि लाखों दर्शकोंसे खचाखच भर गयी। यथा-समय महाराज धृतराष्ट्र, महात्मा भीष्मको आगेकर, मन्त्रियों और सरदारों सहित रङ्ग-शालामें उपस्थित हुए। महारानी गान्धारी, देवी कुन्ती और अन्यान्य रानियाँ, दासियों सहित अपने-अपने निर्द्दिष्ट स्थानोंपर आ बैठीं। उस समय ऐसा प्रतीत होने लगा, मानों असंख्य देव-बालाएँ सुमेरुकी चोटीपर चढ़कर रङ्ग-भूमिका अवलोकन कर रही हैं। सबके यथा-स्थान बैठतेही चारों ओर नौबत घहराने लगी। तरह-तरहके बाजे बज उठे और वन्दीगण विरुदावली गान करने लगे। शङ्ख, घण्टा, भेरी और दुन्दुभि आदिके घोर निनादसे चारों दिशाएँ गूँज उठीं। इसी समय श्वेताम्बरधारी, श्वेतमाल्य और श्वेत चन्दनसे शोभायमान, श्वेत जटा-जूट और श्वेत दाढ़ी-मूँछोंसे सुशोभित आचार्य्य द्रोणने अपने पुत्र अश्वत्थामा सहित रङ्ग-भूमिमें प्रवेश किया। उनके आतेही रङ्ग-शालामें सन्नाटा छा गया। दर्शकवृन्द टक लगाकर उनकी तेजःपूर्ण सौम्य मूर्त्तिको देखने लगा। इसके अनन्तर आचार्य्यने मङ्गलाचरणकी आज्ञा दी और विधि-पूर्वक देव-पूजन करवाया।

समवेत ब्राह्मण-मण्डलीकी सम्मिलित वेद-ध्वनिसे रङ्ग-भूमि गूँज उठी। तदनन्तर वीर-वेश-भूषासे सुसज्जित सब राजकुमारोंने आकर समस्त बड़े-बूढ़ों और गुरुजनोंका यथा-रीति अभिवादन किया। उनके सिरोंपर शिरस्त्राण, पैरोंमें पादत्राण अङ्गुलियोंमें अङ्गुलित्राण, भुजाओंपर भुजत्राण, और वक्षस्थलपर वक्षस्त्राण कसे हुए थे। उनका समस्त शरीर तरह-तरहके अस्त्र-शस्त्रोंसे सुसज्जित था। आचार्य्यके आज्ञानुसार सब राजकुमारगण बड़े-छोटेके क्रमानुसार अति आश्चर्य्ययुक्त अस्त्र-कौशल दिखाने लगे। राजकुमारगण कभी पैदल, कभी घोड़ेपर, कभी हाथीपर और कभी रथपर चढ़कर रङ्ग-भूमिमें बड़े वेगसे चक्कर लगाने और अपने-अपने नामाङ्कित बाणोंसे लक्ष्य-भेद करने लगे। उनका बाण चलाना देख, कितनेही डरपोक दर्शकोंने बाण लगनेके भयसे अपनी आँखें बन्द करलीं और शरीर सिकोड़कर बैठ गये, पर कितनेही साहसी दर्शक निर्भय चित्तसे आश्चर्य्य-पूर्वक राजकुमारोंका अस्त्र-कौशल देखने लगे।

अन्यान्य राजकुमारोंकी युद्ध-क्रीड़ा हो जाने बाद, अहङ्कार-मद-मत्त धृतराष्ट्र-पुत्र दुर्योधन और पाण्डु-कुमार महाबली भीमसेन गदा-युद्धके कौशल दिखानेके लिये रङ्ग भूमिमें उतर पड़े। दोनों एक-से-एक पराक्रमी वीर, हाथोंमें गदा लिये, पैंतरे बदल-बदल कर अखाड़ेमें मण्डलाकार घूमने लगे। अन्धराज धृतराष्ट्रको विदुरजीने और पतिप्राणा महारानी गान्धारीको साध्वी कुन्तीने, दोनों राज-कुमारोंकी युद्ध-क्रीड़ाका हाल सुनाया। इस समय दर्शकोंमें दो दल हो गये। एक दल धार्तराष्ट्र दुर्योधनकी और दूसरा दल वृकोदर भीमसेनकी प्रशंसा करने लगा। उस महती रङ्ग-भूमिमें उपस्थित लाखों दर्शकोंमें इसी बातकी आलोचना चल पड़ी। कुछ लोग भीम-

को और कुछ लोग दुर्योधनको शाबाशी दे-देकर उभाड़ने लगे, जिससे वहाँ महाकोलाहल मच गया। इस प्रकार पक्षपात-पूर्ण शाबाशी देते और भीमसेनको आँखें लाल किये दुर्योधनपर टूटते देख, अनिष्टकी आशंका समझ, आचार्य्य द्रोणने अपने पुत्र अश्वत्थामाको, उन्हें रङ्ग-भूमिसे हटा देनेका इशारा किया। उनके संकेतपर जब अश्वत्थामाने दोनों वीर्य्यवन्त राजकुमारोंको समझाया, तब वे युद्ध-क्रीड़ासे विरत हो, अपने-अपने स्थानपर आकर बैठ गये।

तदनन्तर आचार्य्य गम्भीर-भावसे रङ्ग-भूमिमें उतरे और बाजोंके घोर निनादको बन्दकर बोले,—"आज इस रङ्ग-भूमिमें अनेक प्रसिद्ध-प्रसिद्ध वीर और गण्य-मान्य पुरुष पुङ्गव उपस्थित हैं। मैं सबके सामने ज़ोर देकर कहता हूँ, कि मेरे निज पुत्र अश्वत्थामासे भी बढ़कर, मेरा प्रिय शिष्य अर्जुन, धनुर्विद्यामें निपुण है। उसके जोड़का वीर इस ससागरा धरित्रीपर, इस समय दूसरा नहीं है। वह अपने उत्साह, दूरदर्शिता और शस्त्र-चातुर्य्यके कारण, मेरी शिष्य-मण्डलीमें शीर्षस्थानीय बन गया है। अतएव अब वही अपना युद्ध-कौशल और शस्त्र-संचालन-शैली दिखाकर, आप महानुभावोंको प्रसन्न करेगा।"

इतना कह, आचार्य्य द्रोण, अपने स्थानपर जा बैठे। गुरुकी आज्ञा पातेही वीराग्रगण्य, स्वर्णकवचधारी महावीर अर्जुन, अपना प्रचण्ड धनुष लेकर रङ्ग-भूमिमें उतर पड़े। इस समय वे अपने वीरवेशमें सूर्य्यके समान देदीप्यमान, कामदेवके समान कमनीय, इन्द्रके समान बलशाली और सन्ध्याकालीन बादलोंके समान मनोहर दिखाई देते थे।

उन्हें देखतेही दर्शकगण प्रसन्नतासे महाकोलाहल करने और अपने-अपने आसनोंपर सावधान होकर बैठने लगे। लोगोंके शरीरमें

पुलकावली छा गयी। शंख, घण्टा, तुर्य, पणव, भेरी, दुन्दुभि, और सहनाई आदि अनेक तरहके बाजे बजने लगे। दर्शकगण आपसमें कहने लगे:—

"येही इन्द्र-तनय, कुन्तीके पुत्र, मझले पाण्डव हैं। इनके समान कोई अस्त्रधारी नहीं है। सुनते हैं, इनके जैसा धनुर्द्धर इस पृथ्वीपर दूसरा नहीं है। येही कुरुगणके रक्षक हैं। देखो, कैसे वीर मालूम होते हैं। शरीरकी गठन भी कैसी सुन्दर, सुडौल है।"

जन-समाजमें इस प्रकार कोलाहल होता सुनकर, जन्मान्ध धृतराष्ट्रने विदुरसे पूछा,—"विदुर! रङ्ग-भूमिमें यह क्षुब्ध-सागर-समान कोलाहल क्यों हो रहा है?"

विदुरने कहा,—"राजेन्द्र! पाण्डु-तनय अर्जुन, अस्त्र-शस्त्रसे सुसज्जित हो, अखाड़ेमें उतरे हैं। उन्हींके सम्मानार्थ यह हर्ष-ध्वनि हो रही है।"

धृतराष्ट्रने कहा,—"विदुर! मैं धन्य हूँ। कुन्तीके इन पुत्रोंने हमारे कुलका यथेष्ट मान बढ़ाया है।"

जब कोलाहल कुछ कम हुआ, तब अर्जुन, आचार्य्यको प्रणाम कर, अपना अस्त्र-कौशल दिखलाने लगे। उन्होंने आग्नेयास्त्र द्वारा अग्नि, वरुणास्त्र द्वारा जल, वायव्यास्त्र द्वारा पवन और पर्जन्यास्त्र द्वारा मेघोंको अखाड़ेमें उत्पन्न कर दिखाया। भौमास्त्र चलाकर वे पृथ्वीमें समा गये और शैलास्त्र द्वारा उन्होंने पहाड़ोंके टुकड़ोंकी सृष्टि कर दी। तदनन्तर अन्तर्धानास्त्र द्वारा वे अदृश्य होगये। वे क्षणमें बड़े, क्षणमें छोटे, क्षणमें रथके धुरेपर, क्षणमें रथके मध्यमें और क्षणमें पृथ्वीपर घूमते दिखाई देने लगे। इसके बाद वे पुष्प-समान कोमल, घुंघची-समान लघु और पत्थर समान कठोर-से-कठोर वस्तुओंको बाणोंसे बिद्ध करने लगे। फिर

उन्होंने चक्कर खाते हुए एक लोहेके बने शूकरके मुखमें, एकही बार पाँच और रस्सीमें बँधे हुए एक गोश्रृंगमें इक्कीस बाण भर दिये। इसके बाद कई तरहके तलवार तथा गदाके हाथ दिखाकर सबको चकित कर दिया। 'धन्य! धन्य!'की ध्वनि होने लगी।

अभी बाजोंका शब्द बन्द नहीं हुआ था। लोग अभी अर्जुनकी प्रशंसा करही रहे थे, कि इसी बीच, द्वारपर किसी वीरके गर्जनेका शब्द सुनाई पड़ा। सब लोग द्वारकी तरफ़ बड़ी उत्सुकतासे देखने लगे। इसी समय कमरमें तलवार लटकाये, पीठपर तरकस बाँधे और हाथमें धनुर्बाण लिये सूर्य-समान तेजस्वी, महाबली 'कर्ण' ने रङ्ग-भूमिमें प्रवेश किया। परन्तु दर्शकगण यह न जान सके, कि यह वीर कौन है?

कर्णने रङ्ग-भूमिमें प्रवेश करतेही बड़े घमण्डके साथ द्रोणाचार्य्य तथा कृपाचार्य्यको प्रणाम कर, अर्जुनसे कहा,—"अर्जुन! तुमने अपने जो-जो कर्तब दिखाये हैं, उनपर घमण्ड न करो। मैं तुमसे भी बढ़कर काम दिखाऊँगा।"

ऐसा कह, कर्णने गुरु-आज्ञासे वे सारे काम कर दिखाये, जो अर्जुनने किये थे! यह देखकर दुर्योधन मारे हर्षके फूला न समाया; उसने आसनसे उतर, अपने भाइयों-सहित, कर्णका सप्रेम आलिङ्गन करते हुए कहा,—"हे वीराग्रणी! आपका शुभागमन हो। आप मेरे सौभाग्यसेही यहाँ पधारे हैं। मैं आपका हार्दिक स्वागत करता हूँ। आप मेरे इस राज्य-सुखको आनन्द पूर्वक भोगिये।"

इसपर कर्णने कहा,—"वीरवर! मैं केवल आपकी मित्रताका इच्छुक हूँ। मुझे और किसी वस्तुकी इच्छा नहीं है। हाँ, अर्जुनके साथ द्वन्द-युद्धकी इच्छा अवश्य है।"

इस बातसे अर्जुनने अपना अपमान समझ, ललकार कर

कहा,—"कर्ण! जो व्यक्ति बिना बुलाये आता और अनधिकार चर्चा करता है, उसकी बुरी गति होती है। आज मेरे द्वारा तुम अपनी इस धृष्टताका समुचित फल पाओगे।"

कर्णने कहा,—"अर्जुन! इस रङ्ग-भूमिमें सभी वीरोंको आनेका अधिकार है, मैं यदि बिना बुलाये चला आया, तो तुम्हारे मनमें डाह क्यों हुआ? क्षत्रिय-वीर अपने बलपरही सब काम करते हैं। मैं आज इस विशाल जनसमुदाय तथा गुरुजीके सामने, अवश्यही तुम्हारा शिरच्छेद करूँगा।"

अर्जुन, कर्णके ये कटुवाक्य न सह सके और धनुषपर बाण चढ़ाकर युद्धार्थ तैयार होगये। उपस्थित जनता दो भागोंमें विभक्त हो गयी। कौरवगण कर्णकी तरफ हुए और द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य तथा भीष्मादि अर्जुनके पक्षमें हुए। देवी कुन्ती अपने दोनों पुत्रोंको युद्धार्थ उद्यत होते देख, मूर्च्छित हो गयीं।

इसी समय सर्व धर्मज्ञ और द्वन्द-युद्धके पूर्ण पारदर्शी कृपाचार्य्यने कर्णसे कहा,—"वीर-शीरोमणे! जिस राज-वंशमें तुम्हारा जन्म है, उसका परिचय और अपने माता-पिताका शुभ नाम बतलानेकी कृपा करो, इसके बाद अर्जुन तुमसे युद्ध करेंगे। कारण, राजकुमार, समान कुलोत्पन्न और समान आचार-युक्त पुरुषोंसेही युद्ध कर सकते हैं।"

यह सुनतेही कर्णका मुख मारे लज्जाके नीचा हो गया। जैसे वर्षा-ऋतुमें बूँदोंके गिरनेसे कमल झुक जाता है, उसी प्रकार कर्णकी गर्दन भी अवनत दिखाई देने लगी। यह देख, दुर्योधनने कहा,—"आचार्य्य! शास्त्रोंका वचन है, कि राज-पुत्र, शूर और सेना-नायक, ये तीनोंही राजाके समान होते हैं; परन्तु इसपर भी यदि अर्जुन सिवा राजाके और किसीसे युद्ध नहीं कर सकते, तो लीजिये,

मैं कर्णको अभी, इसी समय, आपकी आँखोंके आगेही, अङ्ग-देशका राजा बनाता हूँ। फिर तो अर्जुनको लड़नाही पड़ेगा!"

इतना कहकर दुर्योधनने उसी अखाड़ेमें, मन्त्रज्ञ ब्राह्मणों-द्वारा कर्णको अङ्ग-देशके राज-पदपर अभिषिक्त करा दिया।

इसी समय कर्णके वृद्ध पिता, सारथि 'अधिरथ' ने लकड़ीके सहारे चलते हुए, उस रङ्ग-भूमिमें प्रवेश किया। कर्णने अपने पिताको देखतेही धनुर्बाण परित्याग कर, उनके चरणोंमें मस्तक झुकाया। रथ-सारथि अधिरथने प्रेमसे पुलकित हो "बेटा कर्ण!" कहते हुए कर्णको छातीसे लगा लिया। भीमसेनने कर्णको सारथि-का पुत्र समझ, उसकी दिल्लगी उड़ाते हुए कहा,—"कर्ण! तुम्हारे वंशका पता लग चुका; तुम तो युद्धमें अर्जुनके हाथसे मरनेके योग्य भी नहीं हो। सूत-पुत्रको मारनेसे अर्जुनकी कीर्तिमें बट्टा लग जायेगा। अब जाओ, घोड़ोंकी मालिश करो। लगाम थामना और चाबुक पकड़ना सीखो। यहाँ क्यों व्यर्थ हत्या देने आये हो?"

भीमसेनके ये वाक्य-बाण दुर्योधनके कलेजेमें चुभ गये। दुर्योधन, भीमको लाल-पीला होकर खरी-खोटी सुनाने लगा। अब सूर्यास्त हो चुका था। अतः परीक्षाका कार्य्य बन्द हुआ और सब लोग अपने-अपने घरोंकी ओर जाने लगे। अर्जुन भी भाइयों सहित महलोंमें चले आये।

द्रुपदकी दुर्दशा

द्रोणाचार्य्यने अपने शिष्योंको युद्ध-विद्यामें पूर्ण पण्डित देख, एक दिन उन्हें बुलाकर कहा,—"शिष्यो! अब तुमलोग शस्त्र-विद्याकी पूर्णशिक्षा प्राप्त कर चुके। अब तुम सब लोग मुझे शास्त्रानुमोदित गुरु-दक्षिणा प्रदान करो। मैं गुरु-दक्षिणामें धन, जन, भूमि, वैभव आदिकी

इच्छा नहीं करता। मैं तुम लोगोंसे केवल यही दक्षिणा चाहता हूँ, कि तुम राजा द्रुपदको युद्धमें जीवित पकड़कर मेरे सुपुर्द कर दो। बस, इससे बढ़कर दक्षिणा मेरे लिये और दूसरी नहीं हो सकती।"

शिष्योंने इस बातको स्वीकार कर लिया और हथियार उठाकर, अपने-अपने वाहनोंपर चढ़, द्रोणाचार्य्य सहित पाञ्चाल-देशकी तरफ़ कूच किया। सभी राजकुमार पाञ्चाल-देशमें उपद्रव मचाते हुए, द्रुपदके नगरमें पहुँच, नगर-विनाश करने लगे।

अपने नगरपर शत्रुओंका आक्रमण सुनकर यज्ञसेन द्रुपदने सेना सहित शत्रुओंका सामना किया और दुर्योधन, कर्ण, दुःशासन आदि कौरवोंकी बड़ी दुर्गति करने लगे। उन सबकी दुर्दशा देख, अर्जुनने आचार्य्यसे कहा,—"भगवन्! पहले इन लोगोंको अपने मनकी निकाल लेने दीजिये, फिर हमलोग जाकर निस्सन्देह राजा द्रुपदको पकड़ लावेंगे। यह आप निश्चय समझिये, कि द्रुपद इन लोगोंके हाथ कदापि न आवेंगे, बल्कि वे इन लोगोंके दाँत खट्टे कर देंगे।"

पाण्डव लोग अपने गुरु द्रोणाचार्य्य सहित, नगरसे आधकोसकी दूरीपर खड़े हो, यह दृश्य देख रहे थे। राजा द्रुपदने कौरवोंको ऐसी मार मारी, कि वे सब रोते-झींखते पाण्डवोंके पास लौट आये।

अब पाण्डव आचार्य्यके पैर छूकर रथारूढ़ हुए। तब अर्जुनने अपने बड़े भाई युधिष्ठिरसे कहा,—"पूज्य भाई साहब! आप आचार्य्यकी सेवामेंही रहिये। आपको युद्धमें कष्ट उठानेकी कोई आवश्यकता नहीं। आपकी कृपासे हम चारों भाईही राजा द्रुपदको पकड़ लानेमें समर्थ हैं।"

इस प्रकार युधिष्ठिरको वहीं छोड़ और नकुल तथा सहदेवको अपने चक्र-रक्षक बना, अर्जुनने द्रुपदपर आक्रमण किया। सदा

सेनाके आगे चलनेवाले भीम, अपनी गदा उठाये, अर्जुनके रथके आगे-आगे चलने लगे।

इधर राजा द्रुपद विजयोल्लासमें मग्न थे। सहसा उन्होंने सामनेसे एक मस्त गदाधारी तथा रथको आते देख, भयातुर हो, सैनिकोंको सावधान होनेकी आज्ञा दी। इसी समय भीमसेन भी वहाँ जा पहुँचे। उन्होंने अपनी गदाके प्रहारसे सैकड़ों सैनिकों तथा बड़े-बड़े अनेकों हाथियोंके मस्तकोंको चूर-चूर कर दिया। अर्जुनने भी आतेही द्रुपद-सेनामें बाण-वृष्टिकर, प्रलयसा मचा दिया। पाञ्चाल-वीरगण भी क्रोध-पूर्वक सिंहनादकर, विविध अस्त्रोंद्वारा अर्जुनको समाच्छादित कर, युद्ध करने लगे। अर्जुन उनका सिंहनाद सुन, आग-बबूला होगये। उन्होंने उसी समय एक बड़े भारी शर-जाल द्वारा रण-भूमिको आच्छादित कर दिया। अर्जुनकी हस्तलाघवता और चपलता देखकर विपक्षी वीर भी "धन्य! धन्य!" कहने लगे। यह हाल देख, राजा द्रुपद, सत्यजित-को साथ लिये, अर्जुनपर ऐसे दौड़े, जैसे शम्बरासुर महेन्द्रकी ओर दौड़ा था। परन्तु अर्जुनने तीर मारकर उन्हें बीचमेंही ठहरा दिया। उस समय सारी सेनामें ऐसा कोलाहल मच गया, जैसा यूथपति हाथीपर सिंहके झपटते समय मचता है।

अर्जुनने बड़े वेगसे राजा द्रुपदपर आक्रमण किया। यह देख, सत्यजित राजाकी रक्षाके लिये अर्जुनके सामने आया। अर्जुनने बड़ेही तीखे दस बाण मारकर सत्यजितको घायल कर दिया। सत्यजितने भी क्रुद्ध हो, अर्जुनपर सौ बाण फेंके; परन्तु अर्जुनने सत्यजितके बाणोंको बीचमेंही काट डाला और धनुषकी प्रत्यञ्चा कस कर सत्यजितपर सौ बाण ऐसे छोड़े, कि उसका धनुष कट गया और वह मूर्च्छित हो, रथपर गिर पड़ा।

सत्यजितको मूर्च्छितकर अर्जुन द्रुपदसे लड़ने लगे। इसी समय सत्यजितकी भी मूर्च्छा भङ्ग हो गयी और वह एक दूसरा धनुष उठाकर अर्जुनके सामने आया। आतेही उसने अर्जुनके सारथि और घोड़ोंको बाणोंसे बिद्धकर, अर्जुनको भी व्याकुल कर दिया। यह देख, अर्जुनको बड़ा क्रोध चढ़ आया और उन्होंने सत्यजितके पृष्ठ-रक्षक तथा चक्र-रक्षकोंको तहस-नहस कर, रथके घोड़े और सारथिको भी मार डाला। इस भाँति अर्जुन-द्वारा बार-बार धनुष, घोड़े, सारथी और पृष्ठ-रक्षकोंका नाश होते देख, सत्यजितका साहस टूट गया और वह उसी समय मैदान छोड़ भाग गया।

सत्यजितको भागते देख, राजा द्रुपदने अर्जुनपर प्रबल आक्रमण किया। विजयी अर्जुन भी घोरतर युद्ध करने लगे। उन्होंने द्रुपदके रथकी ध्वजा और उनके हाथका धनुष काटकर गिरा दिया। पाँच बाणोंसे सारथि और घोड़ोंको भी मार गिराया। अब राजा द्रुपद तुरन्तही एक हाथीपर चढ़कर अर्जुनके आगे आये। अर्जुनने तुरतही हाथीको मारकर, द्रुपदको पृथ्वीपर गिरा दिया। ऐसा अच्छा अवसर पाकर, अर्जुन धनुष-बाणको रथमें रख, एक नंगी तलवार हाथमें लिये हुए रथसे कूद पड़े और दौड़कर राजा द्रुपदके पास जा पहुँचे। जैसे गरुड़ किसी बड़े भुजंगको पकड़ लेता है, वैसेही अर्जुनने भी निर्भयहो, राजा द्रुपदको पकड़ लिया। राजाको शत्रुके पञ्जेमें फँसते देख, पांचाल–सैनिक मारे डरके भागने लगे। अर्जुन द्रुपदको रथमें उठाकर, सिंहनाद करते हुए, द्रोणाचार्य्यकी तरफ़ चल पड़े।

भीमसेन अभीतक द्रुपद-सेनाका संहारही कर रहे थे। यह देख, अर्जुनने कहा,—"पूज्य भाई साहब! महाराजा द्रुपदका कुरु-

वंशियोंसे घनिष्ट सम्बन्ध है। इसलिये इनकी सेनाका अब और विनाश न करके चलिये, केवल गुरु-दक्षिणा देकर, हमलोग गुरु-ऋणसे उत्तीर्ण होजायें।

युद्धसे परितृप्त न होनेपर भी, भीमसेन अर्जुनकी बात सुनकर शान्त हो गये। पाण्डवोंने बन्दी द्रुपदको ले जाकर, गुरु-द्रोणाचार्य्यके चरणोंपर, दक्षिणा-रूपमें भेंट कर दिया।

द्रोणाचार्य्य और द्रुपदमें पहलेका बैर था। द्रोणाचार्य्यके पिता भरद्वाज और द्रुपदके पिता पृषत्‌में बड़ी गहरी मित्रता थी। राजा द्रुपदने बचपनमें भरद्वाज मुनिके गुरु-कुलमेंही विद्याध्ययन किया था। द्रोण और द्रुपद समवयस्क तथा सहपाठी होनेके कारण, रात-दिन साथ-ही-साथ रहा करते थे। इस प्रकार साथ रहते-रहते दोनों बालकोंमें बड़ी गहरी मित्रता हो गयी। यहाँतक, कि कुमार द्रुपदने राज्य मिलनेपर, अपने मित्र द्रोणको आधा राज्य देकर सुखी बनाने तथा अपने बराबर कर देनेका वचन भी दे दिया था।

इसके बहुत दिनों बाद, जब दोनों मित्र बाल्यावस्था पार करके गार्हस्थ्य-धर्मका पालन करने लगे, तब एक दिन द्रोणाचार्य्यके पुत्र, अश्वत्थामाने दूध माँगा। परन्तु उस समय द्रोणकी आर्थिक अवस्था इतनी शोचनीय होरही थी, कि उन्हें दोनों वक्त भोजन भी ठीक तरहसे नहीं मिलता था, दूध कहाँसे आता? द्रोणाचार्य्यने बालकके लिये इधर-उधरसे दूध माँगा भी, परन्तु किसीने नहीं दिया। तब आचार्य्य-पत्नी कृपी-देवीने थोड़ासा आटा पानीमें घोलकर अश्वत्थामाको पीनेके लिये दिया। बालक अश्वत्थामाने भी दूध समझकर उसे प्रसन्नता-पूर्वक पी लिया।

द्रोणाचार्य्यने अपने बालमित्र, राजा द्रुपदके पास जाकर एक

दुधारू गाय माँगनेका विचार कर, पाञ्चाल देशकी ओर प्रस्थान किया। राज-दरबारमें उन्होंने अपनी बालमैत्रीकी याद दिलाते हुए द्रुपदसे केवल एक दुधारू गाय माँगी। द्रुपदने आधा राज्य, सहायतार्थ कुछ धन और माँगी हुई गाय देना तो दूर रहा; बल्कि द्रोणाचार्य्यको भरी सभामें दुत्कारते और अपमानित करते हुए कहा,— "मूर्ख वनवासि! क्या तेरे समान जङ्गली मेरे मित्र हो सकते हैं? क्या तू मुझे अपना सखा कहकर अपमानित करना चाहता है? जा, निकल यहाँसे। यदि भोजन मात्रके लिये अन्न चाहता है, तो कह, मैं तुझे भूखा-भिक्षुक समझकर तेरी क्षुधा निवृत्त करनेकी व्यवस्था करा दूँ।"

द्रोणाचार्य्य उसी समय सभासे उठकर बाहर चले गये और द्रुपदसे अपने अपमानका बदला लेनेका विचारकर हस्तिनापुर आगये थे।

समय पाकर, अपने शिष्योंकी सहायतासे, द्रोणाचार्य्यने द्रुपदसे अपना बदला चुका लिया। जब द्रोणाचार्य्यने पराजित और शृङ्खला-बद्ध द्रुपदको अपने पैरोंपर पड़े देखा, तब अपना पहला बैर स्मरणकर कहा,—"द्रुपद! डरो मत। मैं ब्राह्मण हूँ। ब्राह्मणोंका स्वाभाविक गुण क्षमा है। अतः मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ। इस समय तुम्हारे समस्त राज्यका एकमात्र स्वामी मैंही हूँ। तुमने मुझे न दिया सही; पर यह लो, मैंही तुम्हें आधा राज्य देकर अपनी बचपनकी मित्रता पूर्ण करता हूँ। यदि अब भी तुम्हारी इच्छा हो, तो मुझे अपना मित्र मान सकते हो।"

द्रुपदने कहा,—"महात्मन्! आप जैसे तेजस्वी पुरुषोंके लिये यह कोई बड़ी बात नहीं है। मैं आपसे अपने सब अपराधोंकी क्षमा माँगता हुआ, प्रसन्नता-पूर्वक चिरस्थायिनी मित्रताकी प्रार्थना करता हूँ।"



द्रुपदको पराजय ।

राजा द्रुपदके ऐसे विनीत वचन सुनकर, द्रोणाचार्य्यने उसे बन्धन-मुक्त किया और प्रसन्नता-पूर्वक आधा राज्य देकर, उन्हें बिदा कर दिया।

गुरु-दक्षिणा

उपर्युक्त घटनाके एक वर्ष बाद महाराज धृतराष्ट्रने सर्वगुण सम्पन्न, ज्येष्ठ पाण्डव-युधिष्ठिरको, विधि-पूर्वक अपना युवराज बना लिया। इस बीचमें भीमसेनने, श्रीकृष्णके बड़े भाई बलरामजीसे असि-युद्ध, गदा-युद्ध और रथ-युद्धकी शिक्षा पायी। अर्जुन भी नाराच, क्षुर, भल्ल, विपाट आदि अनेक छोटे-बड़े अस्त्र-शस्त्रोंके प्रयोग, तथा दृढ़ मुष्टिका-प्रहारमें अभ्यासकर, लघुता-पूर्वक निशाना मारनेमें पार-दर्शी हुए।

द्रोणाचार्य्यने अपने मनमें पूरा निश्चय कर लिया, कि अर्जुनके समान धनुर्द्धर और शस्त्रास्त्र-कुशल कोई दूसरा वीर, इस पृथ्वीपर नहीं है। यह विचारकर एक दिन द्रोणाचार्य्यने कौरव-सभामें अर्जुनसे कहा,—"पुत्र! कुम्भज नामक विख्यात महर्षिके शिष्य, महात्मा अग्निवेशजी, मेरे गुरु थे। उन्हींसे मैंने यह वज्र-समान कठोर 'ब्रह्म-शिर' नामक अस्त्र प्राप्त किया था। यह अस्त्र अकेलाही सारी पृथ्वीको जला डालनेमें समर्थ है। अग्निवेशजीने मुझे यह अस्त्र प्रदानकर कहा था,—'द्रोण! अल्पवीर्य्य मनुष्योंपर इसे कभी न छोड़ना।' अर्जुन! इसके बाद वही अस्त्र मैंने तुमको दिया है। भूमण्डल-भरमें तुम्हारे सिवा और कोई दूसरा वीर, इसको धारण करने योग्य, मुझे नहीं दिखाई देता। पर यह याद रखना, कि मुनि-कथित नियम कभी भङ्ग न हो। अब तुम अपने गुरु-भाइयोंके साथ मुझे गुरु-दक्षिणा प्रदान करो।"

गुरुके मुखसे यह बात सुनतेही अर्जुनने दोनों हाथ जोड़कर विनीतभावसे कहा,—"भगवन्! गुरुकी आज्ञा होनेपर ऐसी कोई भी वस्तु संसारमें नहीं है, जो शिष्य न देसके। मैं आपकी आज्ञा पातेही प्राणतक दे डालनेको प्रस्तुत हूँ। आप आज्ञा कीजिये, मैं अभी सेवामें भेंट करूँगा।"

द्रोणाचार्य्यने कहा,—"वत्स! यदि मैं संग्राम-भूमिमें कभी तुमसे लड़नेको उद्यत होऊँ, तो तुम उस समय मेरे विरुद्ध अवश्य शस्त्र ग्रहण करना। मैं गुरु-दक्षिणामें केवल तुमसे यही बात चाहता हूँ।"

अर्जुनने "ऐसाही होगा"—कहकर, द्रोणाचार्यके चरणोंपर मस्तक रख दिया। उस समय सर्वत्र यह समाचार फैल गया, कि इस भूतलपर अर्जुनके समान न तो कोई धनुर्द्धर हुआ, न है और न होगाही। इतनाही नहीं, अर्जुन गदा-युद्ध, खड्ग-युद्ध मल्ल-युद्ध रथ-युद्ध असि-संचालन, भल्ल-निक्षेपण तथा और भी कितनेही विषयोंमें निपुण थे।

अर्जुनके बाहु—बलपर पाण्डवोंने एक बड़ा भारी यज्ञ प्रारम्भ किया और उसे तीन वर्षतक निर्विघ्न चलाते रहे। उन्हें गन्धर्व्वोंके विद्रोहाचरणकी ज़रा भी चिन्ता न थी। जिन यवन-राज्योंको अर्जुनके पिता, राजा पाण्डु भी अपने अधीन न कर सके थे, उनको भी अर्जुनने अपना वशवर्त्ती बनाया! सौवीर-देशाधिपति 'वितुल' सर्वदा कौरवोंके साथ गर्व-प्रकाश किया करता था और वह विशेष बलवान् भी था। अर्जुनने उसे तथा उसी देशके एक दूसरे वीरको, जिसका नाम 'दत्तामित्र' था, युद्धमें मार डाला और पूर्व देशीय सब राज्योंको अपने अधीन कर लिया। फिर दक्षिण प्रान्तको विजयकर वे असंख्य धन-रत्न लाये।

इस भाँति बहुसंख्यक राष्ट्रोंको पराजित कर मानव-श्रेष्ठ अर्जुनने अपने राष्ट्रकी आशातीत उन्नति की। परन्तु पाण्डवोंको इस प्रकार बल-वीर्य्य-सम्पन्न देख, दुर्योधन मन-ही-मन कुढ़ने लगा। दुर्योधनको मारे चिन्ताके आठों पहर बेचैनी रहने लगी। वह पाण्डवोंके बल-वैभवसे महान् दुःखी हुआ। उसे न भोजन अच्छा लगता था और न मारे चिन्ताके उसे रात्रिको नींदही आती थी।

अग्निसे प्राण-रक्षा

अर्जुनकी अद्भुत वीरता और महान् कीर्तिका हाल सुन-सुनकर महाराज मन-ही-मन कुढ़ने लगे। पाण्डव उनके हृदयमें शूलकी तरह खटकने लगे। धृतराष्ट्रने अपने कणिक नामक मन्त्रीसे, अपने दिलकी बात कही। कणिक बड़ाही दुष्ट था, उसने धृतराष्ट्रको ऐसी पट्टी पढ़ायी, कि वे पाण्डवोंसे सोलहो आने विरुद्ध होगये।

एक दिन दुर्योधन, दुःशासन, शकुनि और कर्णने गुप्त सभा-कर, पाण्डवोंके विरुद्ध एक घोर षड्यन्त्रकी रचना की। उनलोगों-ने यह निश्चय किया, कि पाण्डवोंको धोकेसे, उनकी माता सहित किसी मकानमें जलाकर, सदाके लिये उनका नाम-निशानही मिटा दिया जाये। इस बातमें धृतराष्ट्रने सलाह दे दी। पाण्डवोंके चिर-हितैषी विदुरजीने गुप्त रीतिसे उनकी बातें सुन ली थीं। उन्होंने सारी बातें तो नहीं सुनीं, परन्तु थोड़ा-बहुत सुन तथा मुँह-हाथके भावसे कुछ समझकर वे असली बात ताड़ गये। इस भाँति बातचीत हो चुकनेपर, धृतराष्ट्र, पाण्डवोंसे प्रतिदिन वार-णावत नगरकी प्रशंसा कर और उन्हें वहाँ जाकर रहनेके लिये उत्साहित करने लगे।

नीचाशय दुर्योधनने पुरोचन नामक एक व्यक्तिको बुला उसे

एकान्तमें ले जाकर कहा,—"पुरोचन ! इस समय सारी पृथ्वी मेरे अधिकारमें है ; परन्तु तुम्हारे जैसा विश्वासी पुरुष इस पृथ्वी-भरमें मुझे कोई भी दिखाई नहीं देता। इसलिये तुम मेरे कथनानुसार मेरी सहायता करो। महाराज धृतराष्ट्रने पाण्डवोंको वारणावत नगरमें जाकर रहनेके लिये राज़ी कर लिया है। अतएव तुम जल्दी जाओ और वहाँ लाख, राल, सन, तेल, बारूद आदि विस्फोटक पदार्थोंका एक अच्छा मकान तैयार कर रखो। उसीमें पाण्डवोंको ठहराना और किसी दिन, रात्रिके समय चुपचाप उसमें आग लगाकर, सबको जला डालना। उसके लिये मैं तुम्हें मुँह-माँगा पुरष्कार दूँगा और जीवनभर तुम्हारा आभारी बना रहूँगा।"

दुर्योधनके कहे-अनुसार पुरोचनने वारणावत नगरमें पहुँच, कुछही दिनोंमें बड़ाही सुन्दर लाक्षा-गृह बनाकर तैयार कर दिया। पाण्डवोंने धृतराष्ट्रके आज्ञानुसार फाल्गुण कृष्ण अष्टमीको वारणावत नगरके लिये प्रस्थान किया। भीष्म, विदुर तथा अनेक नगर-निवासी उन्हें दूरतक पहुँचाने आये। मार्गमें विदुरजीने युधिष्ठिरको म्लेच्छ-भाषामें समझा दिया, कि तुम लोग सावधानीसे रहना। तुम्हारे रहनेके लिये लाखका घर बनवाया गया है और उसमें आग लगायी जायेगी। इत्यादि।

यथासमय पाण्डव वारणावत नगरमें पहुँच गये। पुरोचनने उन्हें बड़े आदर-सत्कारसे लेजाकर, उसी लाक्षा-गृहमें ठहरा दिया। लाख, राल और चर्बी आदिकी गन्धसे पाण्डवोंको भी विदुरजीकी बातपर पूरा बिश्वास होगया। विदुरजीने पहलेसेही अपने कुछ विश्वस्त आदमी भेजकर उस घरसे बाहर निकल जानेके लिये ज़मीनके भीतर-ही-भीतर एक सुरङ्ग खुदवा दी थी।

उस मकानमें पाण्डव अपनी माता सहित एक वर्षतक बहुत सावधानीके साथ रहे। दुष्ट पुरोचन यह जानकर मन-ही-मन प्रसन्न होता, कि पाण्डवोंको इस षड्यन्त्रका कुछ भी ज्ञान नहीं है और वे अच्छी तरह भुलावेमें आगये हैं।

एक दिन रात्रिके समय भीमसेनने सोते हुए पुरोचनके घरमें आग लगादी और फिर लाक्षा-गृहमें आग लगाकर अपनी माता तथा भाइयों सहित, सुरङ्ग द्वारा बाहर हो, अपनी प्राण-रक्षा की।

विदुरजीने गङ्गा-पार होनेका प्रबन्ध भी कर दिया था। अतः पाण्डव एक नाव द्वारा शीघ्रही गङ्गा-पार होगये।

लाक्षा-गृहको जलता देख, वारणावत-वासी दौड़ पड़े। उन्हें पूरा निश्चय होगया, कि पाण्डव अपनी माता सहित इस घरमें जलमरे हैं।

उसी दिन कुन्ती देवीने बहुतसे दीन-दुःखियों और वेदज्ञ ब्राह्मणोंको न्योतकर भोजन कराया था। उसमें एक भीलनी भी अपने पाँच पुत्रों सहित जीमने आयी थी। बेचारे भीलोंको भला ऐसे मिष्टान्न कहाँ मिलते? अतएव उन्होंने भर पेट खाया और रात होजानेके कारण उसी लाक्षा-गृहके पीछे छहों व्यक्ति सो गये। वे इतने अचेत होकर सोये, कि लाक्षा-गृह जलनेका उन्हें कुछ भी पता नहीं लगा और वे उसी जगह जल मरे। उन छहोंकी जली हुई ठठरियाँ देख, लोगोंको पाण्डवोंके मरनेका और भी दृढ़ विश्वास होगया। दूतोंने जब यह संवाद महाराज धृतराष्ट्रको सुनाया, तब वे मन-ही-मन बड़े खुश हुए; परन्तु दिखानेके लिये खूब रो-पीटकर शोक प्रदर्शित करने लगे।

रोने-पीटनेके बाद धृतराष्ट्रने आज्ञा दी, कि इसी समय परिवारके लोग अशौच मनानेके लिये गङ्गा-स्नान करने चलें, वहीं उन्हें पिण्डोदक दिया जायेगा।

आज्ञा पातेही परिवारके सारे लोग, इष्ट-मित्र, बन्धु-बान्धव तथा समस्त उच्च राजकर्मचारीगण महाराज पाण्डुके पाँचों पुत्रों और उनकी विधवा पत्नी, देवी कुन्तीका श्राद्ध-कर्म करने चले। कितनेही आदमी इस समय भी रो-रोकर पाण्डवोंका गुण-गान कर रहे थे; उनमें दुर्य्योधन 'हू-हू' करके बड़े ज़ोरसे रो रहा था। मानो इसके पाण्डवगण अत्यन्त प्यारे थे! ख़ैर, गङ्गा-तटपर पहुँच जानेपर सबने स्नानकर पाण्डवोंको पिण्डोदक दिया और श्राद्ध-कर्ममें दिल खोलकर दान-पुण्य किये।



तीसरा अध्याय

वन-गमन

हिडिम्ब-वध

गङ्गा-पार होकर पाण्डव, एक बड़े निविड़ वनमें दक्षिण-दिशाकी ओर चलने लगे। चलते-चलते थक जाने तथा अतिशय तृषित होनेके कारण, वे सब एक बड़े भारी बरगदके वृक्षके नीचे बैठ गये। भीमसेन पानी लाने चले गये। उन्होंने लौटकर देखा, तो माता तथा सब भाइयोंको नींदमें सोते पाया। यह देख, वे वहीं बैठकर पहरा देने लगे।

उस वनमें नर-मांस-भोजी, भीषणाकृति हिडिम्ब नामक बड़ाही क्रूर एक राक्षस, अपनी बहिन हिडिम्बा-सहित रहता था। उसने मनुष्योंकी गन्ध पातेही अपनी बहन हिडिम्बाको, इन पाँचों पाण्डवोंको मार डालनेके लिये भेजा। हिडिम्बा ख़ूब सुन्दर रूप धरकर वहाँ आयी और असीम बलशाली, अद्भुत सौन्दर्य्य-सम्पन्न भीमसेनको देखतेही काम-पीड़िता हो, कहने लगी,—"हे नरवीर!

मैं आपसे प्रार्थना करती हूँ, कि आप मुझे अपनी पत्नी-रूपमें स्वीकार कीजिये।"

भीमसेनने उससे साफ इन्कार कर दिया। इसी समय, अपनी बहनको न लौटते देख, हिडिम्ब भी वहाँ आ पहुँचा और हिडिम्बाको खरी-खोटी सुनाकर भीमसेनसे भिड़ गया। भीमसेन भी उसे कुछ दूर घसीट लेगये और उससे मल्ल-युद्ध करने लगे। उस भयानक राक्षसके भीषण गर्ज्जनसे पुत्रों सहित देवी कुन्ती जाग पड़ीं और सामनेही उस देवी-स्वरूपा हिडिम्बाको खड़ी देख, आश्चर्य्यसे उसका परिचय पूछने लगीं। हिडिम्बाने अपना परिचय देनेके बाद सारा वृत्तान्त कह सुनाया। उसकी बात सुनतेही अर्जुन दौड़कर वहाँ जा पहुँचे, जहाँ भीमसेन उस राक्षससे मल्ल-युद्ध कर रहे थे। भीमसेनको थका जान, अर्जुनने हँसकर कहा,—"भाई! आप डरें नहीं। मैं रास्तेका थका हुआ था और नींदने आ घेरा था, इसीलिये मुझे तुम्हारे इस पाप-मूर्त्ति राक्षससे लड़नेका हाल न मालूम होने पाया। यदि आप थक गये हों, तो छोड़ दीजिये; मैं इससे लड़नेको उद्यत हूँ। मैं अवश्य इसका वध करूँगा। सहदेव और नकुल माताकी रक्षाके लिये उनके पास मौजूदही हैं।"

भीमने कहा,—"तुम कुछ चिन्ता न करो। मेरी भुजाओंमें फँस जानेपर क्या यह पामर बच सकता है?"

अर्जुनने कहा,—"भैया! इस पापात्मा राक्षसको अधिक समयतक जीवित रखनेसे लाभही क्या है? अब थोड़ीही देरमें सन्ध्योपासनका समय होनेवाला है। रौद्र-मुहूर्त्तमें राक्षस प्रबल हो जाते हैं, अतएव आप शीघ्रता कीजिये। इसके साथ अधिक खिलवाड़ करना व्यर्थ है। इसके विनाशमें अब देर न कीजिये, नहीं तो यह अपनी माया रचेगा।"

अर्जुनकी बात सुन, भीमने उस राक्षसको कई बार पृथ्वीपर पटक-पटककर जर्जरित कर डाला। यह देख, अर्जुनने कहा,—"भैया! यदि आप इसे युद्धमें नहीं मार सकते, तो मैं आपकी सहायता करनेको तैयार हूँ। परन्तु इसे आप शीघ्रही समाप्त कर डालिये। अथवा आप हट जाइये, मैं अकेलाही इसे यमालय भेज दूँगा। आप बहुत देरसे लड़ते-लड़ते थक भी गये हैं। थोड़ा आराम कर लीजिये।"

यह सुन भीमसेनको बड़ा क्रोध चढ़ आया। तब उन्होंने राक्षसको पटक और उसकी छातीपर चढ़कर, उसका गला घोट दिया, जिसके साथही वह छटपटा-छटपटाकर मर गया।

यह देख, माता सहित चारों भाइयोंने, बड़े प्रेमसे भीमको गले लगा लिया। अब हिडिम्बा बार-बार भीमसे प्रार्थना करने लगी, कि तुम किसी प्रकार मुझे अपनी स्त्री बना लो।

उसकी प्रार्थना और नम्रता देख, कुन्ती और युधिष्ठिरके हृदयमें दयाका सञ्चार हुआ। उन्होंने भीमको आज्ञा दी, कि वे उससे 'गान्धर्व-विवाह' कर लें। भीम राज़ी हो गये और उन्होंने उसे प्रणयका वचन दे दिया। हिडिम्बा प्रसन्न हो, भीमको लेकर आकाशमें उड़ गयी। कभी देव-पुरी, कभी नन्दन-कानन, कभी रमणीक वन-वाटिकाओ और कभी सुन्दर सरोवरोंमें वह भीमके साथ-साथ विहार करती फिरी। यथासमय भीमके औरससे उसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम 'घटोत्कच' पड़ा।

कुछ दिनों बाद हिडिम्बा पुत्रके साथ और पाण्डव माताके साथ अपने निवास योग्य स्थानकी खोजमें चल पड़े। घटोत्कचने जाते समय कुन्ती सहित पाँचों पाण्डवोंको प्रणाम करके कहा,—"हे तात! जरूरत पड़नेपर जब कभी आप मुझे याद करेंगे, तभी मैं उसी समय

आपकी सेवामें आ उपस्थित हूँगा।" इसके बाद पाण्डव अनेक वन-उपवनोंको पार करते हुए आगे बढ़े। चलते-चलते एकदिन रास्तेमें महर्षि वेदव्याससे अचानक उनकी भेंट हो गयी। कुशल-प्रश्नादिके बाद व्यासजीने उनसे कहा,—"मुझे तुम लोगोंका सारा हाल मालूम हो चुका है। तुम लोगोंके हित-साधनार्थही मैं यहाँ आया हूँ। अब जबतक मैं वापस न लौटूँ, तबतक तुम्हें पासहीके नगरमें मेरी मार्ग-प्रतीक्षा करनी चाहिये।"

ऐसा कह व्यासजीने उन्हें 'एकचक्रापुरीमें एक ब्राह्मणके घर ले जाकर टिका दिया। इसके बाद वे उन्हें आशीर्वाद दे, जिधरसे आये थे, उसी ओर लौट गये। पाण्डव लोग भिक्षा-वृत्ति कर अपना पेट पालने लगे।

बहुत दिनोंतक एकचक्रामें रह, पाण्डव पाञ्चालदेशकी ओर गये।

गन्धर्वसे मैत्री

माता सहित पाण्डव उत्तर दिशाकी ओर बढ़ने लगे। रात हो जानेके कारण अर्जुन एक जलता हुआ काष्ठ लेकर सबको रास्ता दिखाते हुए आगे-आगे चले। चलते-चलते कुछ देर बाद सब लोग गङ्गाके किनारे जा पहुँचे।

दैवात् वहाँ 'अङ्गारपर्ण' नामक एक गन्धर्व, अपनी स्त्रियों सहित, जलमें क्रीड़ा कर रहा था। सामनेसे हाथमें पलीता लिये अर्जुनको आते देख, वह धनुषपर बाण चढ़ाकर क्रोध-पूर्वक कहने लगा,—"ओ आनेवाले! सावधान हो। यदि अपनी कुशल चाहता है, तो वहीं ठहर जा ; एक क़दम भी आगे न बढ़ना। रात्रि, यक्ष-गन्धर्व और राक्षसोंके घूमनेके लिये नियत है और दिन मनुष्योंके कार्यके लिये है। जो मनुष्य हमारे विचरण-समयमें वाधा

डालते हैं, हम उन दुष्टोंको मार डालते हैं। ख़बरदार! भूलकर भी इधर न आना। क्या तुम्हें सूझता नहीं है, कि मैं गङ्गाके जलमें स्त्रियों-सहित केलि कर रहा हूँ? मैं कुबेरका मित्र हूँ और अपनी भुजाओंमें अजेय बल रखता हूँ। मैं कभी किसीको क्षमा नहीं करता। यह सारा वन मेरेही अधिकारमें है। लक्षणोंसे दिखाई देता है, कि तुम गन्धर्व, राक्षस अथवा यक्ष भी नहीं हो। तब तुम किस साहसपर हमारे पास आनेका प्रयत्न करते हो?"

यह सुन अर्जुनने कहा,—"दुर्मते! समुद्र, हिमालयपार्श्व और गङ्गा—ये सब स्थान किसी समय भी मनुष्यके लिये रुद्ध नहीं हो सकते। गङ्गापर आनेके लिये कोई समय निर्द्धारित नहीं है। हम लोगोंको ईश्वरने बाहु-बल दिया है। हम तुझ जैसे अल्पज्ञ व्यक्तिकी बातोंका कुछ भी ख़याल नहीं करते। जो युद्ध-विद्या नहीं जानता, वही तेरी इस बन्दर-घुड़कीसे डर सकता है। रे गन्धर्व! तेरी क्या मजाल है, जो तू हमें गङ्गामें घुसनेसे रोक सके! यदि तुझमें कुछ बल है, तो ले रोक, हम आगे बढ़ते हैं।"

ऐसा कहकर अर्जुन आगे बढ़े। यह देखकर गन्धर्व पाण्डवोंपर बाण-वर्षा करने लगा। परन्तु अर्जुनने उस जलते हुए काष्ठ-खण्डको घुमाकर उसके सारे बाण बेकार कर दिये और कहा,—"रे गन्धर्व! वीर पुरुषोंके लिये तेरे ये बाण पुष्पोंके समान हैं। वे ऐसे बाणोंको कुछ भी नहीं समझते। ले सम्हल जा, अब मैं तुझसे दिव्यास्त्र द्वारा युद्ध करूँगा। पूर्व समयमें यह आग्नेयास्त्र देवाचार्य वृहस्पतिने, महर्षि भरद्वाजको प्रदान किया था, भरद्वाजसे अग्निवेशने पाया था, अग्निवेशने मेरे गुरु द्रोणाचार्यको दिया था और उन्होंने यह उत्कृष्ट अस्त्र मुझे प्रदान किया है।"

ऐसा कहकर अर्जुनने गुरु-प्रदत्त वह महान् तेजस्वी आग्नेयास्त्र उस गन्धर्वपर फेंक दिया। अस्त्रके लगतेही गन्धर्वका रथ जो गङ्गा-तटपर खड़ा था, जलकर राख हो गया। साथही गन्धर्व भी मूर्च्छित हो, पृथ्वीपर गिर पड़ा। तब अर्जुन उसके बाल पकड़-कर उसे घसीटते हुए दूर ले गये।

यह देख, गन्धर्व-पत्नी 'कुम्भीनसी'ने, अपने पतिकी रक्षाके लिये युधिष्ठिरकी शरणमें जाकर बड़े विनीत भावसे कहा,—"प्रभो! मेरी रक्षा कीजिये, मेरे पतिको जीवन-दान दीजिये।"

कुम्भीनसीकी ऐसी आर्त्त-प्रार्थना सुन, युधिष्ठिरने दयार्द्र हो, अर्जुनसे कहा,—"अर्जुन! जो शत्रु युद्धमें पराजित, पराक्रम-शून्य, यशोहीन तथा भार्या द्वारा रक्षित होता है, उसे कदापि न मारना चाहिये। इसलिये तुम इसे अभी छोड़ दो।"

अपने बड़े भाईकी आज्ञा पातेही अर्जुनने गन्धर्वको छोड़ दिया और कहा,—"गन्धर्व! महाराज युधिष्ठिरने तुम्हें छुड़ा दिया है; नहीं तो आज तुम्हारा जीवित रहनाही असम्भव हो जाता। जाओ, अब तुम निश्चिन्त होकर घरका रास्ता लो।"

अर्जुनकी ऐसी अभय-वाणी सुन, गन्धर्वने हाथ जोड़कर कहा,—"वीरवर! मेरा रथ विचित्र होनेके कारण लोग मुझे चित्र-रथके नामसे पुकारते थे। परन्तु आज वही सुविख्यात रथ दग्ध होजानेसे मुझे दग्ध-रथ नाम प्राप्त हुआ है। यह जानकर मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ, कि मुझे आप जैसा एक दिव्यास्त्रधारी सखा प्राप्त हुआ। इस मित्रताके चिह्न-स्वरूप मैं आपको गान्धर्वी विद्या सिखाना चाहता हूँ। इस विद्याको "चाक्षुसी विद्या" कहते हैं। इस विद्या द्वारा आप तीनों लोकोंकी जिन-जिन वस्तुओंको देखना चाहेंगे, उन सबको देख सकेंगे। लगातार छः महीनेतक एक पैरसे

खड़े हो, तपश्चर्य्या करनेसे यह विद्या प्राप्त होती है; परन्तु मैं आपको बिना तपस्याकेही उसे प्रदान करूँगा यही नहीं, वरन् कई बहुमूल्य घोड़े भी आपको भेंट करूँगा।"

अर्जुनने बिना कारणके यह सब लेना स्वीकार नहीं किया। तब गन्धर्वने कहा,—"ख़ैर, इसके बदलेमें मैं आपसे आग्नेयास्त्र लूँगा।"

अर्जुनने कहा,—"तब ठीक है। मैं आग्नेयास्त्र देकर आपसे अश्व ले सकता हूँ। ईश्वर करे, हमलोगोंकी मित्रता चिर-स्थायिनी हो।"

इसके बाद गन्धर्व्वने अर्जुनसे अनेक प्राचीन बातें कहकर, धौम्य नामक ऋषिको अपना पुरोहित बनानेकी सलाह दी। अर्जुनने चित्रसेन गन्धर्वको प्रयोग और संहार सहित आग्नेयास्त्र दे दिया। जब गन्धर्व उन्हें घोड़े देने लगा; तब अर्जुनने कहा,—"मित्र! अभी इन्हें आप अपनेही पास रहने दें, जब आवश्यकता पड़ेगी, तब मैं आपसे लेलूँगा।"

इसके बाद पाण्डवोंने मुनिके आश्रममें जाकर उन्हें अपना पुरो-हित बनाया और पाञ्चाल देशकी ओर प्रस्थान किया।

द्रौपदी-स्वयंवर

जब चलते-चलते द्रुपद-नगर थोड़ी दूर रह गया, तब पाण्डव एक वृक्षके नीचे बैठकर आराम करने लगे। उसी समय एक ओरसे बहुतसे ब्राह्मणोंका दल वहाँ आ निकला। प्रणाम-आशीर्वादके बाद, उन्होंने पाण्डवोंसे पूछा,—"आपलोग कहाँ जाते हैं?"

युधिष्ठिरने कहा,—"हम पाँचों भाई सदा अपनी माता सहित भ्रमण किया करते हैं। इस समय हमलोग एकचक्रा नगरीसे आरहे हैं और द्रुपद-नगरको जारहे हैं।"

ब्राह्मणोंने कहा,—"तब आप लोग आजही द्रुपद-नगरीमें पहुँच जाइये ; क्योंकि वहाँ बड़े समारोहके साथ राज-कन्याका स्वयंवर होनेवाला है। हमलोग भी उसी महोत्सवको देखनेके लिये जारहे हैं। आपलोग हमारे साथही चलिये। स्वयंवर देखनेही योग्य होगा। वहाँ देश-विदेशोंके यज्ञशील, स्वाध्याय-निरत ब्राह्मण ; परम पवित्र, धर्मनिष्ठ, महात्मा; तरुण-वयस्क, सौन्दर्य्य-शाली राजकुमार ; अस्त्र-विद्या-विशारद, महारथी वीर और बड़े-बड़े राजा-महाराज उपस्थित होंगे। वे लोग वहाँ-पर विजय-प्राप्तिके लिये धन-रत्न, भूमि, गौ और तरह-तरहके भोजनादि दान करेंगे। हमलोग गौ, धन आदि भी लेंगे और उत्सव भी देख आयेंगे। वहाँ देश-देशान्तरोंके विविध वेशधारी मनुष्य गायक, वैतालिक, पुराण-वक्ता, मागध, बड़े-बड़े बलशाली पहलवान और अनेक तरहके खेल दिखानेवाले बाजीगर भी आयेंगे। आप लोग भी यह उत्सव देखकर हमारे साथही चले आना। स्वयंवरमें आपलोगोंको देखकर यह भी सम्भव है, कि राज-कन्या द्रौपदी आपमेंसे किसी एकको वरण करले ; क्योंकि आपलोग देवकुमारोंके समान सुन्दर और सर्वगुण-सम्पन्न मालूम होते हैं।"

ब्राह्मणोंकी उत्साह-वर्धक बातें सुन, माता सहित पाँचों पाण्डव उनके साथ हो लिये और यथा समय द्रुपद-नगरीमें जा पहुँचे। वहाँ एक कुम्हारके घरमें पाण्डवोंने डेरा डाला और वे भिक्षा-वृत्तिसे अपना उदर-पोषण करने लगे। यही कारण था, कि इनका आना किसीपर प्रकट न हुआ।

राजा द्रुपदकी बहुत दिनोंसे यह इच्छा थी, कि मैं अपनी पुत्री तृतीय पाण्डव अर्जुनको प्रदान करूँ। परन्तु उन्होंने अपनी

मनोगत इच्छा किसीपरभी प्रकट न होने दी और स्वयंवरके समय एक ऐसा मज़बूत धनुष बनवाकर स्वयंवर-शालामें रखवा दिया जिसकी प्रत्यञ्चा सिवा अर्जुनके और कोई भी नहीं चढ़ा सकता था। साथही एक घूमती हुई मछलीका यन्त्र भी ऊपर शून्यमें टँगवा दिया था, जिसे सिवा अर्जुनके और कोई वेधनेकी शक्ति नहीं रखता था।

नियत समयपर इस स्वयंवरमें देश-देशान्तरोंके राजा-महाराज, शूर-सामन्त, ऋषि-मुनि और ब्राह्मण—सभी श्रेणीके लोग आ इकट्ठे हुए। कर्ण और दुर्योधन आदि कौरवगणभी वहाँ आ पहुँचे थे। राजा द्रुपदने सब लोगोंका यथायोग्य सत्कार कर, सबोंको यथायोग्य आसनोंपर ला बैठाया, ब्राह्मण वेश-धारी महावीर अर्जुन भी अपने भाइयों सहित ब्राह्मण-मण्डलीमें जा बैठे और राजा द्रुपदका ऐश्वर्य्य देखने लगे।

स्वयंवरके निमित्त रची गयी रङ्ग-भूमिकी शोभा अति अपूर्व थी। साफ़-सुथरी समभूमिमें, सुदृढ़ प्राचीरसे परिवेष्टित, चन्दनोदक, गुलाबजल तथा इत्र आदि सुगन्धित पदार्थोंसे अभिषिक्त और रङ्ग-बिरङ्गी पुष्प-मालाओंसे सुसज्जित वह रङ्ग-भूमि बड़ीही भव्य मालूम होती थी; उसके द्वारोंपर तोरण लगे हुए थे। जहाँ-तहाँ ध्वजा-पताकाएँ फहरा रहीं थीं। चारों ओर पुष्प-मालाओं और वन्दनवारोंका जाल बड़ेही अनूठे ढंगसे लगा हुआ था। बड़े-बड़े फर्श, ग़लीचे, तकिये, मसनद, तख़्त, सिंहासन, काष्ठासन मृगचर्म, व्याघ्रचर्म, आदि यथा स्थान बिछे हुए थे। अतिथियोंके स्वागतके लिये जहाँ-तहाँ सेवकोंका उचित प्रबन्ध था। रङ्ग-भूमिमें घुसनेके लिये सैकड़ों लम्बे-चौड़े द्वार बनवाये गये थे, जिसमें अतिथियोंको आने-जानेमें किसी प्रकारका कष्ट न हो सकता था,

देख, पाण्डु-नन्दन अर्जुनसे न रहा गया और वे अँगड़ाई लेते हुए, ब्राह्मण-मण्डलीसे उठ खड़े हुए। मेघ-तुल्य अर्जुनको उठता देख, ब्राह्मण लोग अपना मृग-चर्म हिलाते हुए महा कोलाहल करने लगे। कुछ ब्राह्मण आपसमें कहने लगे,—"भाई! ज़रा देखो तो, जिस धनुषको कर्ण और शल्य जैसे धनुर्द्धर लोग भी नहीं उठा सके, उसी धनुषपर रोदा चढ़ाकर, क्या यह अस्त्र-विद्या-विहीन, निर्बल ब्राह्मण, लक्ष्यको बेध सकेगा? कदापि नहीं। असम्भव है। यदि यह उस धनुषपर डोरी चढ़ाकर निशाना न मार सके, तो सारे ब्राह्मण-समाजको नीचा देखना पड़ेगा। लोग हम-लोगोंकी हँसी उड़ायेंगे। यह ब्राह्मण गर्व और उत्तेजना-वश ऐसा गुरुतर कार्य करनेके लिये आगे बढ़ा है। इसे मना करो, जिसमें यह ऐसा दुःसाहस न करे।"

यह सुन एक ब्राह्मणने कहा,—"इसमें अपनी हँसी कदापि न होगी और न हमलोग राजाओंके द्वेष-भाजनही बनेंगे। ऐसे कठिन कार्य्यके लिये साधारण व्यक्ति तो कभी साहसही नहीं कर सकता। यह ब्राह्मण-कुमार शुरूसेही देख रहा था, कि बड़े-बड़े बलवान् राजालोग भी धनुषपर डोरी नहीं चढ़ा सके। जब इस ब्राह्मणमें कुछ शक्ति है, तभी तो इसने सब कुछ देखकर भी उठनेकी हिम्मत की है। इसके स्कन्ध भी वृषभ-समान ऊँचे हैं; छाती चौड़ी और भुजाएँ लम्बी हैं। साथही इस बातको भी आप लोग अच्छी तरह जानते हैं; कि त्रिभुवनमें ऐसा कोई कामही नहीं है, जो ब्राह्मणोंके लिये असाध्य हो! दृढ़व्रत ब्राह्मण फला-हार, वायु-भक्षण तथा अनाहारके कारण दुर्बल होनेपरभी अपने तपोबलसे बलवान् होते हैं। देखो, जमदग्निके पुत्र, परशु-रामने क्षत्रियोंका वंश किस वीरतासे विनाश किया था। इस-



"नीचे भरे जलके कुण्डमें, उस चक्कर खाते हुए यन्त्रका प्रतिबिम्ब देखकर अर्जुनने लक्ष्यको वेध दिया।"

[पृष्ठ—६५]

लिये इसे रोको मत, वरन् आशीर्वाद दो, कि उसमें कृतकार्य होकर यह ब्राह्मणोंका नाम उज्ज्वल करे।"

ब्राह्मण लोग इस प्रकार आपसमें बातें कर रहे थे, कि अर्जुन मदमत्त गजराजकी भाँति उस धनुषके पास जाकर खड़े होगये। फिर उन्होंने अपने इष्टदेवका स्मरणकर उस धनुषकी प्रदक्षिणा की और अन्तमें मन-ही-मन भगवान् श्रीकृष्णको प्रणाम कर धनुषको उठा लिया! जिस धनुषकी डोरी कर्ण, सुनीथ, वक्र, दुर्योधन, शल्य और शाल्व आदि धनुर्वेद-विशारद वीरगण भी नहीं चढ़ा सके थे, उसी धनुषपर अर्जुनने बात-की-बातमें रोदा चढ़ाकर तीर तान दिया और पलक झपकते-न-झपकते नीचे भरे जलके कुण्डमें, उस चक्कर खाते हुए यन्त्रका प्रतिबिम्ब देखकर लक्ष्यको वेध दिया। साथही रङ्ग-शालामें बड़ा होहल्ला मच गया और अर्जुनके सिरपर फूलोंकी वर्षा होने लगी। ब्राह्मण लोग विजय-पताका स्वरूप अपने-अपने दुपट्टे हिलाने लगे। जो लोग धनुष नहीं चढ़ा सके थे, उनकी छातीपर तो मानों साँप सा लोट गया। लज्जासे सब राजाओंके मस्तक झुक गये। गगनतल-स्पर्शिनी वाद्य-ध्वनि होने लगी। मागध, सूत और वन्दी-जन स्तुति-गायन करने लगे। द्रौपदीने प्रसन्न मनसे अर्जुनके गलेमें वर-माल्य पहना दिया।

क्षणिक युद्ध

अर्जुनके गलेमें माला डालते देख, स्वयंवरमें आये हुए राजा लोग मारे क्रोधके आग-बबूला होगये और गर्व-पूर्वक ज़ोरसे चिल्लाकर कहने लगे :—

भाइयो! राजा द्रुपदने हमलोगोंको बुलाकर, हमारा भीषण

अपमान किया है। हमारे जीतेजी हमारी आँखोंके सामने एक मामूली ब्राह्मण राज-कन्याको लिये जाता है। हम आज द्रुपदको किसी तरह भी जीता नहीं छोड़ेंगे और इसके पुत्र धृष्टद्युम्नको भी मार डालेंगे, क्योंकि पहले तो इसने भोजनादि सुख-सामग्रियों द्वारा हमलोगोंका सम्मान किया और अब अपमान कर रहा है। क्या इतने राजाओं और राज-कुमारोंमेंसे एक भी इसकी कन्याके योग्य वर नहीं निकला? क्षत्रिय-कन्याके स्वयंवरमें ब्राह्मणोंको हस्त-क्षेप करनेका कुछ अधिकार नहीं है। यदि द्रुपद-राज-कन्या किसी क्षत्रिय-बालकको अपना पति बनायेगी, तो उसे भी प्रज्ज्वलित अग्निमें डालकर हमलोग अपने-अपने देशोंको लौट जायेंगे। यद्यपि इस ब्राह्मणने लोभ और घमण्डके वशीभूत हो, यह गर्हित कार्य किया है, तथापि उसे मारना अनुचित होगा; क्योंकि हमारा राज्य, धन, पुत्र-पौत्रादि जो कुछ सम्पत्ति है, वह सब ब्राह्मणोंकी-ही कृपा का फल है। किन्तु आज इस स्वयंवरमें दोषियोंको पूरा दण्ड मिल जानेसे भविष्यमें ऐसी घटनाएँ, कभी न होंगी।"

आपसमें इस तरह बक-झक करते हुए राजा लोग, अपने-अपने हथियार उठाकर, द्रुपदपर टूट पड़े। द्रुपदने इस आकस्मिक आपत्तिको आया देख, ब्राह्मणोंकी शरण ली। राजा लोगोंको द्रुपदपर अस्त्र-शस्त्र लिये झपटते देखकर अर्जुन और भीम, दोनों भाई आगे बढ़े। राजाओंने इन दोनोंपर दूरसेही बाण-वर्षा करनी आरम्भ करदी। भीमकर्मा भीमसेनने, झपटकर-एक वृक्ष उखाड़ लिया और उसे पत्र-शाखा-हीनकर हाथमें ले, अर्जुनके पास डटकर खड़े होगये। कृष्ण-बलरामको यह अद्भुत कार्य देखकर पूर्ण निश्चय होगया, कि ये लोग निश्चयही पाण्डव हैं और उस कपट-गृहमें जलनेसे बच गये हैं।

अर्जुन और भीमसेनको इस तरह समर-क्षेत्रमें डटा देखकर, ब्राह्मण लोग अपने-अपने मृगचर्म, व्याघ्रचर्म और कमण्डलु हिलाते हुए, ज़ोर-ज़ोरसे कहने लगे :—

"डरना मत, निर्भय होकर युद्ध करना; हम लोग तुम्हारे लिये शत्रुओंसे युद्धकर, उन्हें अवश्य परास्त करेंगे। हम सभी लोग तुम्हारे पक्षमें हैं।"

ब्राह्मणोंके उक्त आश्वासन-वचनोंको सुनकर अर्जुनने हँसते हुए कहा,—"भूदेवो! आपकी इस कृपाके लिये हमलोग अत्यन्त आभारी हैं। आपलोग निश्चिन्त रहें और केवल दर्शक होकर अपने-अपने आसनोंपर बैठे रहें। आपलोगोंको कष्ट करनेकी आवश्यकता नहीं। आपलोगोंके चरणोंकी कृपासे मैं अकेलाही सबके देखते-देखते इन घमण्डी राजाओंकी बुद्धि ठिकाने लगाये देता हूँ। ये लोग अभी भागते नज़र आयेंगे।

इस प्रकार ब्राह्मणोंको आश्वासन देकर महावीर अर्जुन अपना धनुष सम्हालकर कर्णपर झपटे। कर्ण पहलेसेही तैयार थे। अतः दोनों आपसमें भिड़ गये। उधर शल्य भीमसेनसे भिड़ गये। रहे दुर्योधनादि राजगण, ये ब्राह्मणोंसे युद्ध करने लगे।

अर्जुनने कुछही देर बाद, कर्णको अपने बाणोंसे व्याकुल कर दिया। अर्जुन कर्णके आक्रमणोंका बड़ी सुविधासे संहार करते हुए बड़ी सावधानीसे अपना वार करने लगे। अर्जुन और कर्ण दोनोंही अपूर्व समर-कुशल योद्धा थे। उन दोनोंने इतना शीघ्रता-पूर्वक बाण छोड़ना आरम्भ कर दिया, कि किसने कब तरकससे बाण निकालकर धनुषपर चढ़ाया, यह कोई भी न देख सका लड़ते-लड़ते अर्जुनने कर्णको सम्बोधन कर कहा,—"सूत-पुत्र! अब तनिक सम्हल जाओ, मेरा बाहुबल देखो। अबतक तुमने

मन-माने वार किये हैं एवं मैंने उन सभीका वारण किया है, अब मेरे वार करनेकी पारी है। सावधान हो उन्हें ओटो।" इतना कहकर अर्जुनने विद्युद्वेगसे कर्णपर आक्रमण किया। कर्ण इस आक्रमणसे बेतरह घबरा गये।

अर्जुनको अपनेसे अधिक बलवान् देखकर कर्णने कहा:—

"हे द्विजोत्तम! मैं आपके पराक्रम तथा हस्त-लाघवको देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। इस समय मुझे ऐसा मालूम हो रहा है, कि आप ब्राह्मणरूपमें मानो साक्षात् धनुर्वेद, इन्द्र, राम अथवा विष्णु हैं; क्योंकि मुझसे सिवा इन्द्र या अर्जुनके कोई दूसरा मनुष्य युद्ध नहीं कर सकता। इसलिये आप ब्राह्मण-रूपमें कोई महापुरुष मालूम होते हैं।"

कर्णकी बातें सुनकर अर्जुन बोले :—

"हे वीर! मैं, जैसा कि आप अनुमान कर रहे हैं, धनुर्व्वेद, रामचन्द्र, इन्द्र या विष्णु नहीं हूँ, वरन् एक साधारण ब्राह्मण हूँ। मैंने यह विद्या गुरुकी कृपासे प्राप्त की है। ठहरो, आज मैं तुम्हें अवश्यही पराजित करूँगा।"

कर्ण ब्रह्मतेजको अजेय समझकर युद्ध-क्षेत्रसे अलग होगये। दूसरी ओर भीमसेन और शल्यमें मल्ल-युद्ध होरहा था। युद्ध करते थोड़ी देर बीती होगी, कि भीमसेनने शल्यको ऊपर उठाकर ज़मीन-पर पटक दिया। यह देखकर सब ब्राह्मण हँसने लगे।

राजा लोग कर्ण और शल्यको इस प्रकार पराजित होता देख अर्जुन और भीमसेनको घेरकर धन्यवाद देते हुए पूछने लगे :—

"हे ब्राह्मण-कुमारो! आपका निवास-स्थान कहाँ है? आपने किस कुलको अपने जन्मसे पवित्र किया है। आप अद्वितीय वीर हैं। इस पृथ्वीपर राम, द्रोण, अर्जुन, कृष्ण और कृपके सिवा

किसीमें इतनी क्षमता नहीं, जो कर्णका सामना कर सके। बल-देव, भीमसेन तथा दुर्योधनके अतिरिक्त ऐसा कोई भी वीर नहीं है, जो शल्यको पराजित कर सके। हमें आपका परिचय जाननेके लिये अत्यन्त उत्कण्ठा होरही है, अतएव आप कृपाकर अपना नाम धाम बताइये। हमलोग बिना जाने अब कदापि युद्धमें संलग्न न होंगे।"

अर्जुनने बड़ी शान्तिसे उनकी बातें सुनकर गम्भीरभावसे कहा,—"हे राजालोगो! आप लोगोंको इस प्रकार वचन कहते हुए लाज नहीं आती? संग्राम-भूमिमें अपने शत्रुको प्रसन्न करनेवाली बातें बनाकरही क्या युद्धसे भागना चाहते हैं? हमारा परिचय लेना था, तो युद्ध करनेके पूर्वही पूछा होता! इस समय ऐसा कहना आपकी कायरताका द्योतक है। यदि लड़ने आये हैं, तो आइये, आगे बढ़िये। व्यर्थकी बातें बनाकर अपने क्षात्र-धर्म्मको धूलमें मत मिलाइये।"

उपस्थित राजाओंने शत्रुसे अपनेको कमज़ोर देखकर सारी बातें चुपचाप सहन करलीं और अन्तमें यह कहते हुए कि, "धर्मानुसार द्रौपदी ब्राह्मणोंने ही पायी है, इसलिये इनपर क्रोध नहीं करना चाहिये" अत्यन्त उदास मुँह किये अपने-अपने देशोंको लौट गये। पाण्डव भी द्रौपदी सहित ब्राह्मणमण्डलीसे घिरे हुए अपने निवास-स्थानकी ओर चले।

घरपर बैठी माता पुत्रोंके लौटनेमें विलम्ब हुआ देख, बड़ी चिन्ता कर रही थीं। सोच रही थीं,—"आज उन लोगोंने भिक्षा लेकर लौटनेमें बड़ा विलम्ब किया! किसी विपत्तिमें तो नहीं फँस गये? मैं उन्हें कहां ढूँढूँ।"

इसी समय पाण्डवोंने राज-पुत्री द्रौपदीके साथ अपने निवास-

स्थानमें प्रवेश किया। माता कुन्ती दूसरी ओर दृष्टि किये किसी काममें संलग्न थीं। अर्जुनने घरके दरवाज़ेसे ही कहा—"माँ! आज हम अपूर्व भिक्षा लाये हैं।"

देवी कुन्तीने बिना देखे और बिना सोचे-विचारे कह दिया,—"पुत्रो! उसे पाँचों भाई आपसमें बांटलो।"

जब कुन्ती देवीको मालूम हुआ, कि भिक्षा खाद्य-वस्तु नहीं, वरन् एक राज-कन्या है, तो उन्हें बड़ा पश्चात्ताप हुआ; किन्तु अब क्या हो, बड़ोंके मुँहसे निकली बात अन्यथा थोड़े हो सकती है। अतः माताके आज्ञानुसार द्रौपदी पांचों पाण्डवोंकी ही भार्या हुई।

धीरे-धीरे असली बात कौरवोंको भी मालूम होगयी। वे जान गये, कि पाण्डव लोग लाक्षा-गृहमें नहीं जले और जीवित हैं। उन्हें यह भी मालूम होगया, कि द्रुपद-राजके स्वयंवरमें लक्ष्यभेद कर द्रौपदीको जीतनेवाला पुरुष ब्राह्मण-रूपमें अर्जुनही था। यह जान कर कौरवोंको बड़ाही दुःख हुआ। उन्होंने एक बड़ीसी अन्तरङ्ग सभा करके पाण्डवोंके नाश करनेका फिर विचार किया। दुर्योधनने पाण्डवोंको छल-कपट द्वारा परास्त करनेका उपाय बताया। कर्णने युद्धमें वध करके झगड़ा मिटानेका विचार प्रकट किया। परन्तु भीष्म, विदुर और द्रोण इनके विरुद्ध रहे। उन्होंने कहा,—"पुत्रो! अब पाण्डवोंको सम्मान-पूर्वक आधा राज्य देनेमेंही तुम्हारा भला है।" धृतराष्ट्रको भी यही ठीक मालूम हुआ। अतः हार-मान कर उन्होंने विदुर द्वारा पाण्डवोंको माता और पत्नी सहित हस्तिनापुर बुलवा लिया।



चौथा अध्याय



राज्य-प्राप्ति

खाण्डवप्रस्थ-वास

जब कुछ दिन पाण्डवोंको हस्तिनापुरमें रहते बीत गये, तब धृतराष्ट्रने एक दिन राज-सभामें पाण्डवोंको बुलाकर उनसे कहा,—"पुत्रो ! भविष्यमें तुम्हारे और हमारे बीचमें फिर विवाद न हो; इसलिये हम तुम्हें राज्यमेंसे आधा भाग खाण्डव-प्रस्थ देते हैं। तुम लोग आनन्द-पूर्वक वहाँ राज्य-स्थापनकर निवास करो। जिस प्रकार देव-राज द्वारा देवगण रक्षित होते हैं, उसी प्रकार तुम चारो भाई भी अर्जुन द्वारा सुरक्षित हो, वहां निवास करो।"

धृतराष्ट्रके आज्ञानुसार पाण्डव लोग खाण्डवप्रस्थमें राज्य-स्थापनकर, वहाँ सुख-पूर्वक रहने लगे। उनकी राजधानी इन्द्रप्रस्थ इन्द्रपुरीके समान शोभा-सम्पद्पूर्ण होनेसे कुछही दिनोंमें भुवन-विख्यात हो उठी। पाण्डवोंके राज्यमें अनेक भाषाओंके जाननेवाले सर्व वेदज्ञ ब्राह्मण तथा व्यापार-कुशल वणिक् धनार्ज्जनकी इच्छा-

से आ-आकर रहने लगे। नगरके चारों ओर आम्र, कदम्ब, अशोक, पुन्नाग, चम्पक, लकुच, नागकेशर, पनश, ताल, शाल, तमाल और नकुल आदि पुष्प-वृक्ष तथा आमलक, लोध्र, अस्कोल, जम्बू, पाटल, करवीर, पारिजात और माधवीलता आदि अनेक वृक्ष लगे हुए थे। इन वृक्षोंपर विविध विहङ्गगण, मत्त मयूर-मण्डली और मदाकुल कोकिल जहाँ तहाँ विचरण कर उनकी शोभा बढ़ाते थे।

एक दिन पाण्डवोंकी सभामें देवर्षि नारद पधारे। युधिष्ठिरने उनको, अत्यन्त आदरपूर्वक पूजनकर, अपने सिंहासनपर बैठाया। कुशल-प्रश्नके बाद धर्म्मराजने हाथ जोड़कर उनके आनेका कारण पूछा। देवर्षि नारदने कहाः—

"राजन्! मैं तुम्हें एक आवश्यक उपदेश देनेके लिये आया हूँ। तुम पांच भाइयोंमें एक भार्य्या होनेके कारण भ्रातृ-प्रेम किसी दिन अन्तर आजाना संभव है। अतएव तुम कोई ऐसा नियम बनालो जिससे, कि आपसमें कभी मनमुटाव न होने पाये।"

पाण्डवोंने नारदजीकी सलाह उचित जानकर आपसमें यह निश्चय कर लिया, कि—"हममेंसे किसी एकके द्रौपदीके भवनमें होनेपर अगर दूसरा भाई देखेगा, तो वह दोषी माना जायेगा। और उसे ब्रह्मचर्य्य व्रतपूर्वक बारह वर्ष वनवास करना पड़ेगा।"

इस नियमको बने अभी थोड़े ही दिन बीते थे कि, एक दिन किसी ब्राह्मणके घर कुछ चोर आघुसे और उसकी गौएँ हरणकर ले गये। दस्युओं द्वारा अपनी गौएँ हरी जाती देख, वह ब्राह्मण रातके समय पाण्डवोंके महलोंके नीचे आकर, क्रोध पूर्वक पुकार-पुकारकर कहने लगाः—

"हे महाराज! आपके राज्यमें रहनेवाले मुझ ग़रीब ब्राह्मणका

गो-धन आज नीचकर्म्मा नृशंस दस्युगणों द्वारा बलपूर्वक हरण किया गया है। आप लोग शीघ्रही मेरी रक्षा करें। हाय! कितने आश्चर्य्यकी बात है, कि ब्राह्मणोंके होम-यज्ञ आदि दैनिक कर्म्म-काण्डोंके लिये दूध घी प्रदान करनेवाली परम पवित्र गाय नीच पुरुष ले जा रहे हैं। अब मेरा यज्ञ-कार्य्य कैसे चलेगा? अब मैं कैसे अपनी गृहस्थीका निर्वाह करूँगा? सिंहकी कन्दराको सूनी पाकर उसमें गीदड़ घुस गये हैं। जो राजा-प्रजाकी आयका छठाँ अंश लेकर उसकी रक्षा नहीं करता, वह घोर पापका भागी होता है। चोर-डाकू हम दीन ब्राह्मणोंका धन हरणकर ले जाते हैं, पर राजा लोग उसका कोई प्रतिकार नहीं करते। धर्म्म-कर्मका लोप हो रहा है! मैं शोक-सागरमें गोते खारहा हूँ। आप मेरा हाथपकड़कर बाहर निकालिये।"

उस ग़रीब ब्राह्मणका ऐसा करुण-क्रन्दन सुन, अर्जुनकी नींद खुल गयी। वे ब्राह्मणको धैर्य्य दिलाते हुए कहने लगे—"महाराज! धैर्य्य रखिये। मैं आपकी गौएँ अभी छुड़ा लाता हूँ और उन दुष्टोंको इस पापकर्मका उचित फल चखाता हूँ।"

दैव गति विचित्र होती है! जिस भवनमें पाण्डवोंके अस्त्र-शस्त्र रखे हुए थे, दैवात् आज उसी भवनमें धर्मराज युधिष्ठिर, द्रौपदीके सहित अवस्थित थे। अतएव अर्जुन उस ब्राह्मणके आर्त्तनादसे उत्तेजित होनेपर भी अपने निर्धारित नियमको उल्लङ्घन करनेमें हिचकिचाने लगे। इसी समय फिर ब्राह्मणकी रुदन-ध्वनि सुन, वे मन-ही-मन सोचने लगेः—"इस तपस्वी ब्राह्मणका जो धन चोरी होगया है, उसकी रक्षाकर, इसके आँसू पोंछना तथा चोरोंको उचित दण्ड देना मेरा प्रधान कर्त्तव्य है। यह ब्राह्मण हमारे द्वार-पर आकर रो रहा है। यदि मैं इसकी रक्षा न करूँ, तो मुझे घोर

पापका भागी होना पड़ेगा। परन्तु इस समय अस्त्रागारमें घुसनेसे महाराज युधिष्ठिरका अनादर हो सकता है। यह मेरा उनके प्रति असद्व्यवहार समझा जायेगा, नियमका उल्लङ्घन होगा और मुझे बारह वर्षतक वन-वास करना पड़ेगा। अस्तु; अब चाहे भलेही महाराजका अनादर हो, नियमोंका उल्लङ्घन हो या मृत्यु भी क्यों न हो जाये—मैं सब कुछ सहनेको तैय्यार हूँ, परन्तु धर्म्मको कदापि नहीं छोड़ सकता। कर्तव्यसे मुँह नहीं मोड़ सकता; क्योंकि धर्महो अन्त समयका सच्चा साथी है।"

इतना सोच, दीनजनोंकी रक्षाको अपना परम धर्म मानने वाले, उनके हित-साधनके लिये सब प्रकारके कष्ट सहने वाले, कर्मवीर अर्जुन, अस्त्र-शस्त्र लेनेके लिये युधिष्ठिरके भवनमें घुस गये और उन्हें सब बातें समझानेके बाद धनुर्बाण लिये महलोंके बाहर आकर, उस ब्राह्मणसे कहने लगे:—

"आइये ब्राह्मणदेव! मेरे साथ चलिये। आपका गो-धन चुरा-लेजानेवाले नीच डाकुओंको अधिक दूर न जाने देकर, मैं मार्ग-मेंही उनसे आपका गो-धन छीन लूँ। शीघ्र बतलाइये, वे लोग किस दिशामें गये हैं?"

ब्राह्मणने उन्हें वह दिशा दिखादी, जिधर डाकू उसका गो-धन लेगये थे। अर्जुनने एक शीघ्रगामी रथपर चढ़, डाकुओंका पीछा किया और मार्गमेंही उन्हें मारकर ब्राह्मणका गो-धन, उसे लादिया।

अर्जुनका वन-वास

अर्जुन ब्राह्मणकी गौएँ छुड़ाकर, सीधे बड़े भाई युधिष्ठिरकी सेवामें पहुँचे और कहने लगे,—"राजन्! मैंने जान-बूझकर, विवश हो, अपने बनाये नियमको भङ्ग किया है, इसलिये मुझे अपनी की

हुई प्रतिज्ञाके अनुसार बारह वर्षतक वनमें व्रतानुष्ठान करनेकी आज्ञा प्रदान कीजिये। मैं वन-वासके लिये खुशीसे तैय्यार हूँ। अतएव आप किसी बातका सोच-विचार किये बिना मुझे प्रसन्नता-पूर्वक वन जानेकी आज्ञा दीजिये।"

युधिष्ठिर अपने भाई अर्जुनकी उक्त बातें सुनकर, घबरा गये और व्याकुल होकर कहने लगे :—

"अर्जुन! मेरी समझमें नहीं आता कि, तुम वन क्यों जाते हो! तुमने जो कुछ किया, उसका नाम नियम-भंग नहीं है; क्योंकि तुमने तो एक विपद्ग्रस्त ब्राह्मणकी सहायता करनेके लिये ही अस्त्रागारमें प्रवेश किया था। इस बातसे मैं तनिक भी असन्तुष्ट नहीं हूँ। देखो, इस बारेमें तुमसे एक बात कहता हूँ, उसे ध्यान देकर सुनो। यह एक परम्परागत नियम है, कि जब बड़ा भाई स्त्रीके साथ घरमें हो,तो वहाँपर छोटा भाई बिना किसी प्रकारकी वाध्यताके जा सकता है। हाँ, बड़े भाईका ऐसी अवस्थामें छोटेके घरमें जाना नियम-विरुद्ध है। अतएव इस कार्यसे न तो तुम्हारीही धर्म-हानि हुई है और न हमारीही मर्यादा घटी है।"

अर्जुनने ध्यान-पूर्वक उनकी बातें सुनीं और बड़ी नम्रता से कहा,—"धर्मराज! क्षमा कीजिये, मैंने आपहीके मुँहसे कईबार सुना है, कि छलसे धर्माचरण करना अनुचित है। इस समय आप ऐसा उपदेश केवल भ्रातृ-मोह-वश दे रहे हैं। अतएव मैं जान-बूझ कर कदापि सत्यपथसे विचलित नहीं हो सकता। मैं सत्य और धर्मके बलपरही शस्त्र ग्रहण करता हूँ। यदि मैं इस समय ऐसा अधर्म पूर्ण आचरण करूँगा, तो युद्धके समय भी मुझसे अधर्म हो सकता है।

अर्जुनकी उक्त युक्ति-युक्त बात सुनकर युधिष्ठिर चुप हो रहे। उन्होंने अब निरुपाय होकर बड़े कष्टसे उन्हें वन-गमनकी आज्ञा दी। अर्जुन युधिष्ठिरसे आज्ञा लेकर ब्रह्मचारीका वेश धारणकर बारह वर्षतक वनमें रहनेके लिये चल पड़े। उनके साथ अनेकों महात्मा, ब्राह्मण, वेद-वेदाङ्ग-विशारद, पुराणवक्ता, भगवद्भक्त, ऊर्ध्वरेता वनवासी और नगरवासी भी हो लिये। इस प्रकार भरतवंश चूड़ामणि, महावीर अर्जुन अनेकों रमणीय वन, सरोवर नदियाँ विविध देश और पुण्यतीर्थोंमें पर्य्यटन करते हुए गङ्गाके निकासस्थान-गंगोत्रीमें जा पहुँचे। वहाँ नित्य संध्या, अग्निहोत्र और वेद-पाठ इत्यादि सत्कार्य करते हुए सुखपूर्वक ब्राह्मणों-सहित निवास करने लगे।

उलूपी

एक दिनकी बात है, कि अर्जुन ब्राह्मणों सहित गङ्गा स्नान कर रहे थे। इसी समय पाताल लोककी रहनेवाली, नाग राज-कन्या उलूपी भी वहाँ स्नानार्थ आयी। वहाँ साक्षात् कामदेव स्वरूप महावीर अर्जुनको स्नान करते देख, उसका मन कामपीड़ित होगया। वह उन्हें अपने साथ पातालमें ले गयी। पातालमें वे कौरव्य नामक नाग-राजके भवनमें गये। वहाँ अग्निहोत्रादि आवश्यक कार्यसे निवृत्त होकर अर्जुनने उलूपीसे हँसते हुए कहा :—

"मुझे यहाँ लाकर तुमने बड़ेही परिश्रमका कार्य्य किया है। अच्छा, मुझे यह बताओ, कि यह कौनसा देश है और तुम किसकी कन्या हो?"

उलूपीने कहा,—"महात्मन्! यह देश नागलोक है। यहाँके राजाका नाम कौरव्य है। मैं उन्हींकी उलूपी नामक प्रिय कन्या

हूँ। मैं गङ्गा-तटपर स्नान करती हुई, आपके भुवन-मोहन रूपको देख, उसपर मोहित हो गयी हूँ। मैं अविवाहिता हूँ; अतएव मेरी इच्छा है, कि आप मेरा पाणि-ग्रहण कीजिये।"

अर्जुन बोले,—"सुनो नागबाला! मैंने अपने बड़े भाईकी आज्ञासे, बारह वर्षतक ब्रह्मचर्य्य-व्रत लिया है। जबतक मेरा यह व्रत पूर्ण न हो जायेगा, तबतक तुम्हारा प्रस्ताव माननेमें मैं असमर्थ हूँ। तथापि जब तुम इतना कष्ट उठाकर मुझे यहाँतक लायी हो, तब मैं तुम्हें भी निराश या दुःखित करना नहीं चाहता। अतएव तुम्हीं सोच-विचारकर कोई ऐसा उपाय बताओ, जिससे तुम्हारी भी अभीष्ट-सिद्धि हो जाये और मेरा भी व्रत भङ्ग न हो।"

उलूपीने कहा,—"हे नरश्रेष्ठ! आप जिस लिये पृथ्वीपर भ्रमण कर रहे हैं और महाराज युधिष्ठिरने आपको जो-जो आज्ञाएँ दी हैं, वे सब मुझे अच्छी तरह मालूम हैं। आप लोगोंने यह नियम किया था, कि पाँचों भाइयोंमेंसे द्रौपदीके पास किसी एकके होनेपर यदि दूसरा कोई ग़लतीसे वहाँ चला जायेगा, तो उसे बारह वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य्य पूर्वक वनमें रहना पड़ेगा। आप एक समय धर्म-सङ्कटमें पड़कर युधिष्ठिरके भवनमें जा पहुँचे थे। परन्तु वैसा करकेभी आपने उस नियमका उल्लङ्घन नहीं किया; आप आजकल केवल धर्म-रक्षाके लिये प्रवास कर रहे हैं। ऐसी दशामें आपके धर्म-लोपकी कोई सम्भावना नहीं है। दुःखित आत्माका दुःख-निवारण करना आपके जीवनका प्रधान कर्तव्य है, इस लिये मुझे दुःखी समझकर मेरा दुःख दूर करनेमें आपका धर्म कदापि नहीं जायेगा। यही सब सोचकर मैंने आपसे प्रार्थना करनेकी धृष्टता भी की है। यदि आप मेरी प्रार्थना स्वीकार नहीं करेंगे, तो आप निश्चय जानिये, मैं अपने प्राणोंका परित्यागकर दूँगी; क्योंकि

अब मैं आपकी शरण आ चुकी हूँ और मन-ही-मन आपको पति-रूपमें वरण कर चुकी हूँ। यदि आप मेरी प्रार्थनाको अस्वीकार कर देंगे, तो मैं कहींकी न रहूँगी; इसलिये आप अधिक सोच-विचार न कर, मेरी प्रार्थना स्वीकार कीजिये।

इस प्रकार अर्जुनने उलूपीके बहुत कुछ गिड़गिड़ाने तथा रोने-गानेसे करुणार्द्र हो उसकी बात मान ली। उनके साथ उलूपीका विवाह होगया। विवाह होजानेपर अर्जुन कितनेही दिनोंतक सानन्द नाग-लोकमें निवास करते रहे। अर्जुनके बहुत आग्रह करनेपर कुछ दिनों बाद उलूपीने उन्हें भारतवर्षमें लाकर गङ्गोत्रीके तटपर खड़ा कर दिया। जब अर्जुन गङ्गातटपर आपहुँचे, तब उलूपीने उन्हें वरदान दिया,—"हे महावाहो! मैं आपसे प्रसन्न होकर यह वर देती हूँ, कि आप जल-युद्धमें सदा अजेय रहें।"

इतना कहकर उलूपी अपने लोकको लौट गयी।

चित्राङ्गदा

अर्जुनके गङ्गा-स्नान करते-करते सहसा ग़ायब हो जानेसे, उनके साथी ब्राह्मणोंको बड़ी चिन्ता हो गयी थी। इस समय उनके सानन्द लौट आनेसे सबको बड़ी प्रसन्नता हुई। कुशल-प्रश्नके बाद अर्जुनने उन्हें अपने ग़ायब होनेकी सारी कथा कह सुनायी। कुछ दिन यहाँ और रहकर अर्जुन उन ब्राह्मणोंके साथ हिमालयकी ओर चले गये। वहाँके अगस्त्य-बटसे वशिष्ठ-पर्वत-पर होते हुए वे तुङ्गनाथ पर्वतपर जा पहुँचे। वहाँ दो-चार दिन रह, वे हिरण्य-बिन्दु स्थानमें पहुँचे। फिर यहाँसे भी चलकर नैमि-सारण्यमें पहुँचे और वहाँकी उत्पलिनी, गया, महा, कौशिकी, नन्दा और अपरनन्दा आदि नदियोंके किनारे-किनारे अनेक सुन्दर-

आश्रमों तथा प्रकृतिके मनोहर दृश्योंको देखते हुए सबलोग सानन्द विचरण करने लगे। इसके अतिरिक्त उन्होंने अङ्ग, बङ्ग, कलिङ्ग आदि अनेक देश, खूब अच्छी तरह घूम-फिर कर देखे। कलिङ्ग-देशसे वे सब ब्राह्मण, जो अर्जुनके साथ इस प्रवासमें घूम रहे थे, अपने-अपने घरोंको लौट गये। अब यहाँसे महावीर अर्जुन, कुछ थोड़ेसे नवीन साथियों सहित, महेन्द्र-पर्वतको पार-कर, आसाम-प्रान्तके मणिपुर-राज्यमें जा पहुँचे और वहाँ उन्होंने महाराज चित्रवाहनसे भेंट की *।

महाराज चित्रवाहन बड़ेही धर्मज्ञ थे। उनके एक पुत्री थी, जिसका नाम चित्राङ्गदा था। वह बड़ीही रूपवती,लावण्यमयी और विविध विद्या-विशारद थी। एक दिन राजकुमारी चित्राङ्गदा नगरमें सहेलियों सहित घूमने निकली। अर्जुनने उसे देखा और देखतेही उसपर मोहित हो गये। अब तो उसको प्राप्त करनेके लिये उनके प्राण अत्यन्त व्याकुल हो उठे। बहुत कुछ सोचा-विचारा, पर उन्हें कोई सहज उपाय न सूझ पड़ा। अन्तमें अर्जुनने, चित्राङ्गदाके पिता, राजा चित्रवाहनके पास जाकरही, अपनी आन्तरिक इच्छा प्रकट करनेका निश्चय किया।

दूसरे दिन, यथा समय, अर्जुनने महाराज चित्रवाहनके पास पहुँचकर अपनी मनोभिलाषा प्रकट की। वे बोले,—"राजन्! मैं आपसे एक प्रार्थना करने आया हूँ। यद्यपि उसके कहनेमें मुझे लज्जा आती है, तथापि बिना कहे आपपर उसका प्रकट होना भी असम्भव है। अतएव मैंने उसको आपसे स्पष्ट कह देनेमेंही मङ्गल समझा है। सुनिये, मैं आपको विश्वास दिलाकर कहता हूँ, कि मैं

---

* मणिपुर-राज्यका पूरा-पूरा इतिहास जाननेके लिये हमारे यहाँकी "टिकेन्द्रजितसिंह" नामक पुस्तक मँगा देखिये। मूल्य १) रुपया।

एक कुलीन क्षत्रिय हूँ। यदि आप अपनी प्यारी कन्याके साथ मेरा विवाह कर दें, तो मैं आपका अत्यन्त आभारी हूँगा।"

राजा चित्रवाहनने कहा,—"ठीक है। परन्तु पहले यह तो बतलाइये, कि आप किस कुलमें उत्पन्न हुए हैं? किसके पुत्र हैं? और आपका शुभ नाम क्या है?"

अर्जुनने कहा,—"हे नरेन्द्र! मेरा जन्म संसार-प्रसिद्ध कुरु-कुलमें हुआ है। मैं चक्रवर्ती महाराज पाण्डुका तीसरा पुत्र और धर्मराज युधिष्ठिरका मँझला भाई हूँ। मेरा नाम अर्जुन है।"

यह बात सुन, राजा चित्रवाहनने अत्यन्त प्रसन्न होकर कहा:—"वीरवर! मैं आपका परिचय पाकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। मुझे आपके इस प्रस्तावको स्वीकार करनेमें परम प्रसन्नता है; किन्तु इस सम्बन्धमें मैं आपसे एक निवेदन करूँगा; सुनिये, हमारे पूर्वपुरुषोंमें प्रभञ्जन नामके एक महात्मा हो गये हैं। उनके एकभी सन्तान न होनेके कारण, उन्होंने एकबार घोर तप किया। उनकी तपस्यासे प्रसन्न होकर श्रीमहादेवजीने उन्हें यह वरदान दिया, कि पुरुषानुक्रमसे तुम्हारे कुलमें एक सन्तान अवश्य उत्पन्न होती रहेगी। तदनुसार मेरे सब पूर्व-पुरुषोंके एक-एक पुत्र उत्पन्न होता रहा, पर मुझे परमात्माने यह एक मात्र कन्याही प्रदान की है। मैं इसेही पुत्रवत् समझता हूँ। यदि आप मेरी एक प्रार्थना स्वीकार करें, तो मैं आपको अपनी पुत्री दे सकता हूँ; वह प्रार्थना यह है, कि इस कन्याको जो पुत्र-सन्तान होगी, वही मेरे वंशकी रक्षक होगी। अतः वह सन्तान आपको मुझे प्रदान कर देनी पड़ेगी और आपको भी सन्तान होने तक यहीं रहना पड़ेगा।"

अर्जुनने राजा चित्रवाहनकी यह बात सहर्ष मान ली। राजाने भी अपनी कन्याका विवाह महावीर अर्जुनके साथ खूब

धूमधामसे कर दिया। अर्जुन लगभग तीन वर्ष तक मणिपुरमें निवास करते रहे। जब चित्राङ्गदाके एक पुत्र उत्पन्न हो गया; तब वे राजासे आज्ञा प्राप्तकर देश-भ्रमण करने चले गये।

अप्सरा-उद्धार

भ्रमण करते-करते अर्जुन दक्षिण-समुद्रके निकटस्थ अगस्त्य, सौभद्र, पौलोम, कारन्धम और भारद्वाज नामक पञ्च सरोवरोंपर गये। वहाँ जाकर उन्होंने देखा, कि सुन्दर, रम्य उपवन और मनोहर सरोवर आदि रहनेपर भी वहाँ ऋषि-मुनियोंका निवास नहीं है! यह क्या रहस्य है? आखिर इसका कारण उन्होंने कुछ दूरीपर रहनेवाले ऋषि-मुनियोंसे जाकर पूछा।

तपस्वियोंने कहा,—"वत्स अर्जुन! उन सरोवरोंमें बड़े-बड़े पाँच मगर रहते हैं, जिन्होंने कई तपस्वियोंको खा डाला है। इसी लिये मुनिगण उस स्थानको छोड़कर अन्यत्र चले गये हैं।"

यह सुनतेही अर्जुन फिर उन सरोवरोंकी ओर जाने लगे। तपस्वियोंने उन्हें अनेक तरहसे समझाया-बुझाया; परन्तु उन्होंने किसीकी कुछ नहीं सुनी और वे सौभद्र नामक तालाबमें कूद पड़े। अर्जुनका कूदनाथा, कि एक विशाल मगरने आकर उनका पैर पकड़ लिया। महाबलवान् अर्जुन, उस प्रबल जल-जन्तुको खींचते हुए जलके बाहर लेआये; किन्तु शुष्क भूमिपर आतेही वह मगर, मगर नहीं रहा; वरन् एक परम सुन्दरी स्त्रीके रूपमें बदल गया! यह अद्भुत काण्ड देखकर अर्जुन आश्चर्य्य-चकितसे हो रहे। कुछ देरके बाद उन्होंने उस सुन्दरीको लक्ष्यकर कहा,—"हे सुन्दरी! तुम कौन हो और किस लिये इस सरोवरमें मगर-रूपमें रहती हो?"

स्त्रीने कहा,—"मैं देवारण्य विहारिणी एक अप्सरा हूँ। मेरा

नाम वर्गा है। मुझे धन-देव कुवेर अत्यन्त प्यार करते थे! एक दिन मैं अपनी चार सखियोंके साथ कहीं जा रही थी, कि मार्गमें मैंने एक परम रूपवान्, तपोलीन ब्राह्मणको देखा। वे उस समय स्वाध्यायमें लगे हुए थे। हम सबोंने उनके मनको चञ्चल कर, उन्हें अपनी ओर आकर्षित करनेका विचार किया। इसके बाद हम वहाँ गयीं और नाच-गाकर उनका मन अपनी ओर खींचने लगीं। परन्तु उन वेद-पाठी ब्राह्मणने हमें आँख उठा कर भी नहीं देखा—उनका मन बराबर स्वाध्यायमें ही लगा रहा। जब हमने उन्हें बहुत दिक़ किया, तब उन्होंने क्रुद्ध होकर हमें श्राप दिया, कि जाओ, तुम पाँचों मगरका शरीर धारण कर जलमें रहो।

"उन ब्राह्मणदेवताके मुँहसे इस भयङ्कर श्रापको सुन हमने हाथ जोड़, प्रार्थना करते हुए कहा,—'महात्मन्! हमने रूप-यौवन तथा कामके वशीभूत हो, आपका यह महान् अपराध किया है; इस-लिये हमें आप क्षमा कीजिये। आप जैसे यति पुरुषोंको लुभाना, मानो अपनी मृत्युसे आलिङ्गन करना है। महाराज! धार्मिक लोग कहा करतेहैं, कि स्त्रियाँ अवाध्य होती हैं; अतएव आप धर्मका विचार करके भी हम सबकी हिंसा न कीजिये। पण्डि-तोंको कहते सुना है, कि ब्राह्मण सब प्राणियोंके मित्र और क्षमाशील होते हैं। साधु लोग शरण आयेकी सदा रक्षाही करते हैं। हम सब आपकी शरण हैं, इसलिये हमारी रक्षा कीजिये।

"ब्राह्मणने कहा,—'मेरा श्राप विफल तो हो नहीं सकता; पर तुम लोग सौ वर्ष तक ग्राह-रूपमें रहोगी, पश्चात् जब तुम्हें एक वीर पुरुष जलसे खींच कर निकालेगा, तब तुम अपना यह रूप फिर पाजाओगी।'

"हे पाण्डु-नन्दन! यह स्थान रहनेके लिये हमें स्वयं देवर्षि नारद बता गये हैं। हम उन्हींके आज्ञानुसार यहाँ आयी थीं। अब आप चलकर मेरी उन चार सखियोंका भी इसी तरह उद्धार कीजिये, जिस तरह आपने मुझपर कृपा की है।"

यह सुन अर्जुन अन्य तालाबोंमें भी गये और जिस तरह पहली अप्सराका उद्धार किया था, उसी तरह उक्त चारों अप्सराओं-को भी, उन्होंने ग्राह-शरीरसे मुक्त किया। इस भाँति उन पाँच सरोवरोंका झगड़ा निपटाकर अर्जुन चित्राङ्गदाको देखनेके लिये फिर मणिपुर गये। वहाँ अपने पुत्र बभ्रुवाहन*से मिलकर अर्जुन गोकर्ण तीर्थकी ओर चल दिये।

गोकर्ण तीर्थ पश्चिम दिशामें है। अर्जुन यहाँ घूम-घूमकर दर्शनीय स्थानोंकी सैर करने लगे और घूमते-फिरते प्रभास-क्षेत्रमें जापहुँचे। इनके यहाँ आनेकी बात महात्मा श्रीकृष्ण-चन्द्रको भी मालूम हो गयी। वे उनसे मिलनेके लिये आये। अर्जुनसे मिलकर श्रीकृष्णको महान् आनन्द हुआ। वे पूछने लगे,—"अर्जुन! तुम किस लिये तीर्थ-भ्रमण कर रहे हो? तुमने अपने आनेकी कोई सूचना भी हमें नहीं दी। तुम अचानक इधर कैसे आ निकले?"

यह सुन, अर्जुनने श्रीकृष्णको अपने भ्रमणका पूरा-पूरा वृत्तान्त कह सुनाया। श्रीकृष्णने अर्जुनकी प्रशंसा करते हुए कहा,—"मित्र! तुमने बहुतही उचित कार्य किया है।"

---

*"बभ्रुवाहन" अर्जुनसे भी बलवान योद्धा था। उसने एकबार सम्मुख युद्धमें अपने पिताको भी हरा दिया था। उसका पूरा हाल जानना हो, तो हमारा "वीर-पञ्चरत्न" नामक २२ चित्रोंवाला सचित्र ग्रन्थ मँगा देखिये, दाम रंगीन जिल्द ३) और रेशमी जिल्दका ३।) रु० है।

कुछ दिनोंतक प्रभासक्षेत्रमें रहनेके बाद, श्रीकृष्णचन्द्र अपने मित्र अर्जुनको साथ लेकर रैवतक पर्वतपर चले गये और वहीं रहने लगे ।

इसके पूर्वही श्रीकृष्णके आज्ञानुसार उनके नौकरोंने विविध प्रकारकी सुखद सामग्री उस पर्वतपर पहुँचा दी थी । जब श्रीकृष्ण और अर्जुनने वहाँ रहना आरम्भ कर दिया, तब नट और नर्तकीगण उनका मन बहलानेके लिये नित नये तमाशे दिखाने लगे । इस प्रकार कुछ दिनों तक रैवतकपर ये लोग बड़ेही आनन्दसे रहे। अनन्तर एकदिन श्रीकृष्ण अर्जुनको अपने रथपर बैठाकर द्वारकामें ले गये । द्वारका-वासियोंने श्रीकृष्णके परम मित्र अर्जुनका बड़े ठाटबाटसे स्वागत किया । यहाँ भी अर्जुन कई दिनोंतक रहे ।

एक दिन रैवतक पर्वतपर, किसी पर्वके उपलक्ष्यमें, बड़ा भारी मेला लगा । उसे देखनेके लिये श्रीकृष्ण और अर्जुन भी आये । दोनों इधर-उधर घूम रहे थे, कि इसी समय अर्जुनकी दृष्टि नाना अलङ्कार-विभूषिता, शुभलक्षण-सम्पन्ना, वसुदेव-नन्दिनी सुभद्रा पर जा पड़ी । अर्जुन उसे देखते ही मोहित हो गये ।

श्रीकृष्णचन्द्रने अर्जुनको सुभद्राकी तरफ टकटकी लगाये देखते हुए देखकर कहा,—“अर्जुन ! यह क्या ? क्या वन-वासो व्यक्तियोंका मन भी कामदेवके वाणोंका शिकार हो जाता है ? यह कन्या मेरी बहन है । इसका नाम सुभद्रा है । यदि तुम इसे अपनी भार्या बनाना चाहते हो, तो कहो, मैं इस विषयमें पिताजीसे परामर्श करूँ ।”

अर्जुनने कहा,—“मित्रवर ! मुझे स्पष्ट कहते लज्जा आती है । अच्छा हो, यदि आप पूज्य पिताजीसे इस विषयमें पूछ लें । यदि आप मेरी इच्छा-पूर्त्तिके लिये मुझे कुछ सहायता दे सकेंगे तो बड़ी कृपा होगी ।”



"रथके समीप पहुँचतेही अर्जुनने कूदकर सुभद्राको अपने रथमें बैठा लिया !"

श्रीकृष्णने कहा,—"धनञ्जय! क्षत्रियोंके लिये विवाहकी स्वयंवर-विधिही उचित होती है; परन्तु शास्त्रोंमें शूर क्षत्रियोंके लिये तो बल-पूर्वक कन्याको हरण कर, उसका पाणिग्रहण करनाही श्रेष्ठ कहा गया है। तुम इसी नियमके अनुसार मेरी बहिन सुभद्राको बलपूर्वक क्यों न हरण कर ले जाओ? स्वयंवर आदि झगड़ोंमें न फँसनाही अच्छा है। क्योंकि न जाने सुभद्रा देवीकी आंतरिक इच्छा क्या हो?"

इस प्रकार आपसमें बातचीत हो जानेपर, अर्जुनने एक शीघ्र-गामी दूत इन्द्रप्रस्थ भेजकर, अपने बड़े भाई धर्मराजकी भी आज्ञा प्राप्त करली। धर्मराजकी अनुमति आ जानेपर अर्जुन खड्ग, कवच, गोधा, अङ्गुलित्राण और धनुर्बाण धारणकर, सुन्दर और शीघ्रगामी घोड़ोंसे जुते हुए रथमें बैठकर, शिकारके बहाने द्वारकासे चल पड़े। उस समय देवी सुभद्रा रैवतक पर्वतकी प्रदक्षिणा तथा ऋषि-पूजासे निपटकर, द्वारकाको लौट रही थीं। सामनेसे सुभद्राके रथको आते देखकर अर्जुनने भी अपना रथ उसी तरफ बढ़ाया। रथके समीप पहुँचतेही अर्जुनने कूदकर बलपूर्वक सुभद्राको अपने रथपर बैठा लिया और इन्द्रप्रस्थकी ओर चल दिये। सुभद्राकी सखियाँ तथा रक्षकगण चिल्लातेही रह गये; पर महावीर अर्जुनने किसीकी भी न सुनी।

थोड़ी देर बाद यह समाचार सारी द्वारका नगरीमें बिजलीकी तरह फैल गया। सेनापतिने भेरी बजाकर सेना तय्यार कर दी। योद्धा लोग, "पकड़ो-पकड़ो, जल्दी रथोंको बढ़ाओ—" इत्यादि कहते हुए सिंहनाद करने लगे। इसी समयश्री कृष्णके बड़े भाई बलरामने आकर कहा,—"वीरो! आपलोग विना कृष्णकी सम्मति लिये क्यों इस भाँति तय्यार होरहे हैं? पहले उनसे सम्मति

लो, फिर जैसी वे आज्ञा दें, वैसा करो।" इतना कह बलराम कृष्णके पास आकर बोले:—

"भाई कृष्ण! कुछ सुना है? तुम्हारे परम मित्र अर्जुन, बहिन सुभद्राको उड़ा लेगये! अब बताओ, क्या किया जाये?"

कृष्णने बलरामकी इस व्यङ्ग-भरी उक्तिका कुछ भी जवाब नहीं दिया। वे मौन साधे खड़े रहे। यह देख, बलराम झल्ला उठे; बोले,—"क्या यह समय इस प्रकार चुप्पी साधनेका है? हमने तुम्हारेही कारण अर्जुनका इतना सत्कार किया था, नहीं तो हम उस दुर्बुद्धि कुलाङ्गारकी सूरत भी नहीं देखते। मुझे यह सोचकर महान् दुःख होता है, कि अपनेको कुलीन कहनेवाले व्यक्ति भी ऐसा नीच कार्य कर डालते हैं। वे जिस पात्रमें खाते हैं, उसीमें छेद करते हैं। इस कृतघ्नी पाण्डवने मेरी अवज्ञा और तुम्हारा निरादरकर, अपनी मृत्यु-स्वरूपा, हमारी बहिन सुभद्राका हरण किया है। गोविन्द! उसने हमारे सिरपर पैर रखा है। जिस तरह सर्प अपने सिरपर किसीका पाद-प्रहार नहीं सह सकता, उसी तरह मैं भी इसे कदापि नहीं सहन करूँगा। आज मैं अकेलाही इस पृथ्वीको कौरव-हीन करके छोड़ूँगा। मैं अर्जुनके इस नीच कार्यको कदापि नहीं सह सकूँगा। ओह! उसने हमारे साथही ऐसा नीच बर्ताव किया? छिः! कितनी भारी कृतघ्नता है!"

बलरामके इस कथनका अनुमोदन, भोज, वृष्णि और अन्धक आदि सभी यादवोंने किया। सब सुनकर श्रीकृष्ण कहने लगे:—

"भाइयो! अर्जुनने जो कुछभी किया है, उससे अपना अपमान नहीं, वरन् मानही हुआ है। अर्जुन जानते हैं, कि हम लोग धन-लोलुप नहीं हैं; अतएव उन्होंने धन देकर सुभद्रा प्राप्त

करनेका प्रयत्न नहीं किया। स्वयंवरमें कौन जाने सुभद्रा किसकी हो, अतः उन्होंने स्वयंवरकी प्रतीक्षा करनी उचित नहीं समझी। अब कहिये, यदि अर्जुनने अचानक सुभद्राको हर लिया, तो क्या बुरा किया? उन्होंने क्षत्रियोचित कार्यही किया है। सुभद्रा जैसी यशस्विनी है, अर्जुनभी वैसेही सर्वगुण-सम्पन्न हैं। मेरे विचारसे यह सम्बन्ध भी अयोग्य नहीं है। इसके अतिरिक्त यह तो बताइये, कि इस संसारमें ऐसा कौन व्यक्ति है, जो अर्जुनसे मित्रताकी इच्छा न रखता हो। सिवा महादेव और इन्द्रके, अर्जुनसे कोई युद्ध नहीं कर सकता! फिर वे इस समय मेरे रथपर सवार हैं, जिसके घोड़े हवासे बातें करते हैं। उन्हें तुम लोग कदापि नहीं जीत सकते। और यदि हार गये, तो बड़ी लज्जाकी बात होगी। इसलिये यदि आप लोग मेरा कहा मानें, तो शीघ्र जाकर अर्जुनको सादर लौटा लायें और विधिपूर्वक उनके साथ सुभद्राका पाणिग्रहण करा दें।"

यह सलाह यादवोंको अच्छी लगी; अतः वे लोग दौड़कर अर्जुनको लौटा लाये। उसी दिन वेद-विहित विधिसे देवी सुभद्राका विवाह अर्जुनके साथ हो गया। अर्जुन सुभद्रा सहित, लगभग एक वर्ष तक बड़े आनन्दपूर्वक, द्वारकामें रहे। पश्चात् यहाँसे चलकर उन्होंने अपनी अवधिके बाक़ी दिन पुष्करमें बिता दिये।

पुत्रोत्पत्ति

बारह वर्ष पूरे हो जानेपर अर्जुन इन्द्रप्रस्थमें लौट आये। आकर उन्होंने पहले अपने बड़े भाई युधिष्ठिरके पैर छुए। अनन्तर सब बन्धु-जनोंसे मिलकर वे अन्तःपुरमें द्रौपदीके पास गये। द्रौपदीने उन्हें देख, कुछ मुस्कराकर व्यङ्गके साथ कहा,—"जीव-

नेश्वर ! आज यह असमय सूर्योदय कैसे हुआ ? आजकल तो आप नये प्रेम-पाशमें फँसे हुए हैं ! अब मेरी आपको क्या परवा है ? नयी चीज़ पा जानेपर पुरानी चीज़को सभी लोग त्याग दिया करते हैं। इस समय आप एक नये प्रेम-बन्धनमें फँस गये हैं ; अब मेरे प्रति आपका प्रेम कम हो जाना स्वाभाविकही है।"

द्रौपदीको इस भाँति दुःखित देखकर अर्जुन उसे सान्त्वना देने लगे। फिर सुभद्राके पास जाकर उन्होंने उसे माता कुन्ती तथा प्रिय पत्नी द्रौपदीकी सेवामें प्रणाम कर आनेके लिये भेजा। सुभद्राने सबसे पहिले अपनी सास देवी कुन्तीके चरणोंमें मस्तक झुकाया। कुन्तीने परम प्रसन्न हो, नववधू सुभद्राका मस्तक सूँघकर, उसे अनेक आशीर्वाद दिये। यहाँसे सुभद्रा सीधी द्रौपदीके महलमें गयी और उसे प्रणाम कर बोली,—"महारानी ! मैं आपकी सेवाके लिये दासी होकर आई हूँ। मुझे अपने चरणोंमें स्थान दीजिये।"

द्रौपदीने उठकर प्रेमपूर्वक सुभद्राको गलेसे लगाते हुए कहा,—"बहिन ! विश्वास रखो, तुम्हारे और हमारे बीचमें कभी झगड़ा न होगा। सदा एकसा प्रेम बना रहेगा। ईश्वर हम दोनोंका सुहाग अचल करे।"

अर्जुनके इन्द्रप्रस्थ पहुँचनेका समाचार सुनकर श्रीकृष्ण और बलराम बहुतसे प्रतिष्ठित पुरुषों सहित दहेज लेकर आये। अपने बहिन-बहिनोईको बहुतसा धन, वस्त्रादि देकर बलराम तो अन्य प्रतिष्ठित पुरुषों सहित द्वारका लौट गये, पर श्रीकृष्णचन्द्र, अर्जुनके बहुत अनुरोध करनेपर, इन्द्रप्रस्थमेंही रह गये। अब दोनों मित्रोंकी खूब घुटने लगी और दोनों यमुनाके किनारे मृग-वराहों-का शिकार करते हुए आनन्दपूर्वक समय व्यतीत करने लगे।

कुछ काल बीत जानेपर जिस प्रकार इन्द्राणीने जयन्तको प्रसव

किया था, उसी प्रकार देवी सुभद्राने प्रशस्त ललाट, विशाल वक्ष-स्थल, आजानुबाहु, वृषभ-स्कन्ध, नरश्रेष्ठ, अरिन्दम, वीर अभिमन्युको प्रसव किया। अभिमन्युके उत्पन्न होनेकी खुशीमें महाराज युधिष्ठिरने ब्राह्मणोंको प्रभूत धन-दान किया। श्रीकृष्णने उसके जात-कर्मादि सभी संस्कार वैदिक रीतिसे यथाविधि कराये। अभिमन्यु दिन-दिन शुक्लपक्षके चन्द्रमाकी तरह वृद्धि पाने लगा। यथासमय अभिमन्युने अपने पितासे आदान, सन्धान, मोक्षण, विनिवर्तन, स्थान, मुष्टि, प्रयोग, प्रतिकार, मण्डल और रहस्य, इन दशाङ्गों सहित; तथा मंत्र-मुक्त, पाणिमुक्त, मुक्तामुक्त और अमुक्त आदि दिव्य धनुर्वेदकी शिक्षा प्राप्त की। अर्जुनने उसे अस्त्र-विज्ञान, शस्त्र-विज्ञान आदि सभी गूढ़-गुप्त बातें सिखा दीं और अपने समानही योद्धा बना लिया। पुत्रकी इस असाधारण सफलतापर अर्जुनको बड़ी प्रसन्नता हुई।

समय पाकर द्रौपदीकेभी एक-एक वर्षके अन्तरसे पाँच पतियों द्वारा, पाँच पुत्र उत्पन्न हुए, जिनका नाम क्रमशः प्रतिविन्ध्य, श्रुत-सोम, श्रुतशर्मा, शतानिक और श्रुतसेन रखा गया। पुरोहित धौम्यने उनकेभी जात-कर्म, चूड़ा-कर्म, उपनयन आदि सभी संस्कार कराये। आगे जैसेही वे किसी लायक़ हुए, वैसेही अर्जुनने उनकी शिक्षाका भारभी अपनेही ऊपर ले लिया।

गाण्डीव-धनुषकी प्राप्ति

अर्जुन और श्रीकृष्णचन्द्रको एक साथ इन्द्रप्रस्थमें रहते बहुत समय होगया। जब ग्रीष्मकाल आया, तब अर्जुनने श्रीकृष्णसे कहा,—"मित्र! आजकल विशेष गर्मी पड़ने लगी है। उसके तापसे मनमें सदा बेचैनीसी बनी रहती है। यदि आपकी इच्छा हो, तो

चलिये, कुछ दिन यमुना-किनारे रहकर चित्तको, शान्त करें। जब धूपकी तेज़ी कम होकर ठण्ढ पड़ने लगेगी, तब लौट आयेंगे।"

श्रीकृष्णने अर्जुनकी बात मानली ; अतः दोनों यमुना-विहारके लिये चल दिये। साथमें डेरे-तम्बू, दास-दासियाँ भी चले। वहाँ पहुँचकर आनन्दपूर्वक दोनों वन-क्रीड़ा और जल-क्रीड़ा करने लगे। एक दिन कृष्ण और अर्जुन, दोनों एक वृक्षकी शीतल छायामें एक शिलापर बैठे कुछ बातचीत कर रहे थे, कि इसी समय शाल-वृक्षके समान लम्बे, अग्निके समान रक्तवर्ण, सूर्य्यके समान तेज-युक्त, सुफेद दाढ़ी और जटाजूटधारी एक ब्राह्मण उनके सामने आकर खड़े होगये। उन्हें देखकर कृष्ण और अर्जुनने, खड़े होकर प्रणाम किया। आशीर्वाद देकर ब्राह्मण कहने लगे:—

"तुम दोनों सब लोकोंमें अद्वितीय वीर गिने जाते हो। मैं अतिभोजी ब्राह्मण हूँ, सदा अपरिमित भोजन किया करता हूँ। तुमलोग मुझे इच्छित भोजन देकर परितृप्त करो।"

कृष्ण और अर्जुनने कहा,—"महात्मन्! आज्ञा कीजिये, कि आप किस प्रकारका भोजन करेंगे? हम उसीके अनुसार प्रबन्ध कर आपकी भूख शान्त करेंगे।"

इतना कहकर कृष्ण और अर्जुन आपसमें सलाह करने लगे, कि इन देवताके लिये कैसा भोजन बनवाना चाहिये? इसी बीचमें ब्राह्मण बोल उठा:—

"वीरवरो! जैसा कि आप सोच रहे हैं, मैं वैसा अन्न भोजन करनेवाला ब्राह्मण नहीं हूँ। मैं आपसे स्पष्ट कहे देता हूँ, कि मैं कौन हूँ। मेरा नाम अग्नि है। मैं साधारण भोजन नहीं चाहता। जो मेरे योग्य भोजन है, आपलोग उसीके देनेका प्रयत्न कीजिये। सुनिये, मेरी इच्छा कई दिनोंसे यह 'खाण्डव-वन' जलानेकी है।

इसे मैंने कईबार पहले भी जलाना आरम्भ किया, परन्तु इन्द्र जल-वृष्टि करके मेरे कार्यमें बाधा डाल देते हैं और मेरी इच्छा पूर्ण नहीं होने देते। ऐसा सातबार होचुका है। इसका कारण यह है, कि इस वनमें इन्द्रका मित्र तक्षक रहता है। उसीकी रक्षाके लिये देवराज इन्द्र मेरी आशा पूरी नहीं होने देते! आप दोनों, अस्त्र-विद्या-विशारद हैं। यदि मुझे आपकी सहायता मिल जाये तो मैं इस वनको आसानीसे जला सकता हूँ। खाण्डव-दाहके समय, जो जीव इधर-उधर निकल भागें, उन्हें तथा बादलोंकी जल-वृष्टिको रोकनेका कार्य आपलोगोंको करना पड़ेगा; बस, मैं केवल आपसे यही भोजन-भिक्षा माँगता हूँ।"

अर्जुन बोले,—"अग्निदेव! मेरे पास अनेकानेक दिव्य अस्त्र हैं और मैं इन्द्रदेवसे भी युद्ध करनेको तय्यार हूँ; परन्तु मेरे पास ऐसा कोई धनुष नहीं है, जो मेरे बल और पराक्रमको सह सके। विशेषतः मुझे आपके कार्य्यमें बहुत जल्दी-जल्दी बाण छोड़ने पड़ेंगे, इसलिये बहुसंख्यक अक्षय वाणोंके तूणीरोंकीभी आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त वेगवान् अश्वोंका एक उत्तम दृढ़ रथ चाहिये। फिर कृष्णचन्द्रके पासभी कोई उत्तम हथियार नहीं है। येभी इस काममें कैसे मदद कर सकेंगे? बिना उत्तम अस्त्रोंके कोई भी महावीर सफलता नहीं पा सकता। यदि आप मेरी कही हुई इन आवश्यकताओंको पूरा करनेका प्रबन्ध कर सकें, तो हमलोगआपकी इच्छा पूर्ण करनेके लिये सहर्ष तैयार हैं।"

अर्जुनकी बात सुन, अग्निदेवने क्षणभरमें वरुणलोक जाकर, वहाँसे शत्रु-सैन्यको विध्वंस कर देनेवाला, देव-दानव और गन्धर्वादिकोंसे सम्मानित, कोटि धनुष-समान 'गांडीव' नामक एक सुदृढ़ विशाल धनुष और दो अक्षय तूणीर, जो रात-दिन तीर

निकालते रहनेपर भी खाली नहीं होसकते थे ; अर्जुनको लाकर दे दिये ; तथा जिस रथको देव-शिल्पी विश्वकर्माने बहुत दिनोंमें और बड़े परिश्रमसे तैयार किया था; जिसका रूप सूर्यके समान कान्ति-युक्त था, जिसमें प्रभु सोमने आरूढ़ होकर एक समय दानवोंको पराजित किया था, जिसका घर-घर शब्द बहुत दूरसेही सुनाई देकर, शत्रुओंके मनमें आतङ्क उत्पन्न कर देता था और जिसके ऊपर इन्द्र-धनु-तुल्य विराजमान सुमनोहर वीर वानरका चिह्न था, ऐसा "कपि-ध्वज" नामका एक अति उत्तम रथ भी दिया।

अनन्तर अग्निने श्रीकृष्णको "सुदर्शन" नामका एक दिव्य चक्र तथा आग्नेय नामका एक शस्त्र समर्पित किया।

इस प्रकार इच्छानुसार, दिव्य युद्ध-सज्जा पाकर अर्जुनने खड्ग कवच, गोधा, अङ्गुलित्राण आदि धारण कर, उस भव्य रथकी प्रदक्षिणा की, अनन्तर परमात्माका नाम स्मरणकर पुण्यात्मा पुरुषकी भाँति वे उसमें सवार होगये। फिर अर्जुनने ब्रह्माके बनाये हुए गाण्डीव धनुषको रोदा चढ़ाकर टङ्कारा। उस समय जिसने भी गाण्डीवकी टङ्कारका शब्द सुना, उसका हृदय अन्तस्तल तक काँप उठा। इस तरह अर्जुन रथ, धनुष और दो अक्षय तूणीर, तथा श्रीकृष्ण सुदर्शन चक्र और आग्नेयास्त्र पाकर अग्निकी सहायताके लिये सहर्ष तय्यार होगये।

उस समय अग्निदेव कहने लगे,—"हे माधव! आप इन अस्त्रोंसे युद्ध-भूमिमें अपने समस्त शत्रुओंको बातकी बातमें परास्त कर सकेंगे। ये अस्त्र शत्रुओंका नाशकर तत्काल आपके पास लौट आयेंगे। यद्यपि आप इन अस्त्रोंसे मेरी इच्छा पूर्ण करनेमें समर्थ हैं, तथापि यह एक दैत्य-कुल-संहारिणी कौमोदकी नामकी गदा मैं आपको और देता हूँ, कृपया इसे भी ग्रहण कीजिये।"

उस समय अर्जुन और कृष्णने प्रसन्नता-पूर्वक कहा,—"हे अग्निदेव! आपकी कृपासे अब हम देव-दानवोंसे भी युद्ध करनेमें समर्थ हैं। इस समय हम इन्द्रसे तनिकभी भय नहीं करते। अतः अब आप सानन्द खाण्डव वन जलाकर मनमाना भोजन कीजिये। हमलोग आपकी सहायता करते हैं।"

अर्जुन और श्रीकृष्णकी आज्ञा पाकर अग्निदेवने बड़ा विकराल रूप धारणकर, खाण्डव वनमें प्रवेश किया। वनमें जा और अपनी सप्त शिखाओंका विस्तारकर, वे खाण्डव-वन दग्ध करने लगे। उस समय, उनके उस रूपको देखनेसे, ऐसा मालूम होता था, मानो यह प्रलयाग्नि शीघ्रही सारे संसारको भस्म कर देगी।

जब अग्निदेव उस वनको जलाने लगे, तब कृष्ण और अर्जुन वनके दोनों ओर रहकर भागे हुए प्राणियोंका दमन करने लगे। जो कोई प्राणी अग्निसे निकल, अपने प्राण लेकर भागता, वही अर्जुन और कृष्णके वाणोंका शिकार होता था। अग्निकी प्रचण्डता इतनी भीषण थी, कि उस वनके जलाशयोंका पानी भी अत्यन्त गर्म हो गया था; अतएव मछली, कछुए, मगर आदि जल-जीवोंके मृत शरीर पानीपर तैरते हुए दिखाई देने लगे। यदि वहाँसे कोई पक्षी उड़कर आकाशमें जाता, तो अर्जुन उसे वाण मारकर वहीं गिरा देते थे। इस समय सारे वनमें, जैसा समुद्र-मन्थनके समय भयङ्कर शब्द सुनाई देता था, वैसाही शब्द होने लगा। आगकी लपटोंसे समस्त दिशाएँ भर गयीं; देखनेपर ऐसा मालूम होता था, मानो अग्नि उड़कर आकाशको भी भस्म कर देगी। यह प्रलयकारी दृश्य देख, देवताओंने इन्द्रसे जाकर कहा:—

"राजन्! क्या अग्निदेव आज समस्त लोकोंको भस्मही कर

देंगे? क्या अब प्रलयका समय आ पहुँचा है? देखिये न, भूलोकमें खाण्डव-वन भयङ्कर रूपसे जल रहा है।"

यह सुन, इन्द्रने अग्नि बुझानेके लिये, खाण्डव-वनपर मेघोंकी सृष्टि की। मेघ मूसल-धारासे बरसने लगे; परन्तु अग्निका इतना प्रचण्ड ताप था, कि जल आकाशमेंही सूख गया और एक बूँद भी अग्निमें नहीं पड़ने पायी। इसपर देवराज इन्द्रने क्रुद्ध होकर महावृष्टि आरम्भ कर दी। इस वृष्टि-वेगको देखकर अर्जुनने इतने वाण छोड़े, कि सारे खाण्डव वनको ढाँक दिया। उन्होंने उस समय, वाणोंकी छतसी बना दी और एक बूँद पानी भी आगमें नहीं गिरने दिया।

इन्द्रका मित्र तक्षक उन दिनों वहाँ नहीं था; वह कुरुक्षेत्र गया हुआ था; परन्तु उसका पुत्र अश्वसेन वहीं था। उसने वहाँसे निकल भागनेके लिये करोड़ों उपाय किये, परन्तु उस बेचारेकी क्या ताक़त थी, जो अर्जुनके सामनेसे निकल जाता! आख़िर अश्वसेन-की माता प्राण-भय त्यागकर उसे ले भागी। यह देखकर अर्जुन और भी क्रुद्ध हुए और उन्होंने एक तीक्ष्ण-वाण द्वारा उसकी माताका सिर उड़ा दिया; परन्तु ईश्वर-कृपासे अश्वसेन बाल-बाल बच गया और इन्द्रके पास जा पहुँचा। इन्द्रने उसका उप-चारकर, उसके प्राण बचा लिये।

इन्द्रकी इस चालाकीसे चिढ़कर, अर्जुनने अपने अत्यन्त तीक्ष्ण वाणों द्वारा इन्द्रसे घोर युद्ध करना आरम्भ कर दिया। यह देख, इन्द्र भी उनसे भिड़ गये। उस समय अर्जुनने वायव्यास्त्रका प्रयोगकर, इन्द्र तथा मेघ, दोनोंका बल क्षीण कर दिया। जल-धाराएँ सूख गयीं; बिजली बुत गयी और आकाश स्वच्छ होगया। अतः अग्निदेव, चर्बी आदि विविध वस्तुओंको जलानेके कारण अनेक रूप धारणकर, पूर्ण प्रचण्डता प्रदर्शित करने लगे।

अर्जुन और कृष्णकी सहायतासे, खाण्डव वनको जलते देख, सुपर्ण आदि कई वन-वासी वीर, युद्धार्थ सामने आये; अर्जुनने उन्हें तत्काल मारकर अग्निके समर्पण कर दिया। थोड़ी देर बाद असंख्य राक्षस और गन्धर्वगण युद्ध करनेकी इच्छासे खूब होहल्ला मचाते हुए अर्जुनके आगे आये और भीषण वेगसे उनपर अयःकण्य (बन्दूकें) छोड़ने तथा चक्राश्म नामक यंत्र (तोप) द्वारा पत्थरोंके गोले बरसाने लगे। भिन्दिपाल (गोफन) काभी प्रयोग किया गया। यह देख, अर्जुन उनपर बेतरह क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने उनका युद्ध-प्राबल्य देखकर, वाणों द्वारा, बात-की-बातमें उनका विनाश कर दिया। श्रीकृष्णने भी उनके इस कार्य्यमें पूर्ण सहायता दी।

इसी समय एक सफ़ेद हाथीपर चढ़े, अनेकानेक अमोघास्त्र लिये, देव-राज इन्द्र आपहुँचे। आतेही वे कृष्ण और अर्जुनपर यह कहते हुए दौड़े, कि अब तुम दोनों अपना जीवन शेष हुआ समझो। उनके पीछे काल-दण्ड-धारी यमराज, वरुण-पाश-धारी जलदेव और शक्ति-धारी स्कन्द भी थे। विधाताने भी उस समय धनुष उठा लिया। अर्यमा परिघ उठाये घूमने लगे और अश्विनीकुमार औषधियाँ लेकर युद्धमें घायल होनेवालोंकी चिकित्सा करनेके लिये आपहुँचे। इस प्रकार सब देवता युद्धार्थ तैयार होकर अर्जुन तथा श्रीकृष्णपर झपट पड़े। इधर कृष्ण और अर्जुनभी डटकर खड़े होगये और दोनों ओरसे भीषण युद्ध छिड़ने लगा। अर्जुनने दिव्यास्त्रोंके प्रयोगसे देखते-देखते देवताओंको मार भगाया। यह देखकर इन्द्रने ऐसे भीषण रूपसे पत्थर बरसाना आरम्भ कर दिया, कि अर्जुन चारों ओरसे घिर गये। तथापि उन्होंने इसकी कुछ परवा नहीं की और अपने पैने वाणोंसे इन्द्रके आक्रमणोंको व्यर्थ कर दिया। इस भाँति अपने सारे प्रयत्नोंको निष्फल देखकर इन्द्रको

अत्यन्त क्रोध हो आया। उन्होंने झुँझलाकर अर्जुनपर मन्दार शिखरका एक विशाल खण्ड पटक दिया। किन्तु अर्जुनने उसके भी कई टुकड़े करके अपनी प्राण-रक्षा करली। यह देखकर इन्द्र मुक्तकण्ठसे अर्जुनकी प्रशंसा करने लगे।

उसी समय इन्द्रको आकाशवाणी द्वारा मालूम हुआ,—"तुम्हारा मित्र तक्षक कुरुक्षेत्र गया हुआ है। तुम कृष्ण और अर्जुन-से युद्धकर व्यर्थ अपनी हँसी करा रहे हो। तुम उनको युद्धमें कदापि नहीं हरा सकोगे।" यह सुनकर इन्द्र अपने स्थानको लौटने लगे। चलते समय उन्होंने कृष्णार्जुनसे कहा,—"हे वीरो! आप दोनों वास्तवमें अजेय हैं; मैं आपलोगोंपर अत्यन्त प्रसन्न हूँ; आप मुझसे वर माँगो।"

अर्जुनने कहा,—"देवराज! यदि आप हमपर प्रसन्न हैं, तो हमें अनेक प्रकारके आयुध प्रदान कीजिये।"

इन्द्र बोले,—"वत्स! तुम जैसे आयुध चाहते हो, वैसे मेरे पास नहीं हैं। उन्हें प्राप्त करनेके लिये तुम महादेवकी तपस्या करो।"

जिस समय वन जल रहा था, उसी समय उसमेंसे "मय" नामक एक अत्यन्त निपुण शिल्पी निकलकर भागने लगा। यह देखकर श्रीकृष्णने उसपर अपना चक्र फेंका। अपने पीछे चक्रको आते देख, मयने अर्जुनकी शरण ली और बोला,—"महाराज! आप किसी तरह मेरी रक्षा कीजिये; मैं आपकी शरण हूँ।"

अर्जुनने दौड़कर उसकी रक्षा की और अभय देकर उसे अपने पास रथपर बैठा लिया। इस तरह अर्जुन और कृष्णकी सहायतासे अग्निने पन्द्रह दिनतक उस वनको जलाकर अपनी चिर-इच्छित क्षुधा पूर्ण की। इस वन-दाहसे मय शिल्पी, अश्वसेन और

साङ्गर्क नामक चार पक्षी—इन छःजीवोंके अतिरिक्त और कोई प्राणी जीवित नहीं बचा।

अपनी इच्छा पूर्ण हो जानेपर अग्निदेव कृष्ण और अर्जुनपर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने दोनोंकोही मनमाने वर दिये और इच्छित वर देकर उनसे विदा ली।

अग्निदेवके चले जानेपर 'मय' सहित अर्जुन और श्रीकृष्ण भी इन्द्रप्रस्थमें चले आये।

विजय-यात्रा

एक दिन श्रीकृष्ण तथा अर्जुन, मय-दानव सहित यमुनाके किनारे बैठे थे। उसी समय मयने हाथ जोड़कर अर्जुनको बारम्बार प्रणाम करते हुए कहा,—"स्वामिन्! आपने मेरे प्राणोंकी रक्षा की है; कहिये मैं आपकी क्या सेवा करूँ?"

अर्जुनने कहा,—"मय! मैं तुमसे अपने उपकारका प्रत्युपकार नहीं चाहता। मुझे तुमसे कोई काम नहीं लेना है, परन्तु तुम्हारी अभिलाषा है, तो इन महात्मा श्रीकृष्णका कोई कार्य सम्पादन करो। इनका काम करना मानो मेरे साथही उपकार करना है।"

मयने श्रीकृष्णसे हाथ जोड़कर कुछ कार्य बतानेकी प्रार्थना की; तब श्रीकृष्णने कहा,—"हे शिल्पिन्! यदि तुम मेरा कोई कार्य करना चाहते हो, तो युधिष्ठिरके लिये अपनी इच्छाके अनुसार एक ऐसा उत्तम सभाभवन बनादो, जो विश्वभरमें विख्यात हो।"

आज्ञा पाकर शुभदिनमें, पाँच हज़ार हाथ लम्बी-चौड़ी भूमि नापकर मयने सभा-भवनकी नींव डाल दी। अनन्तर वह अर्जुनसे आज्ञा लेकर कैलासके उत्तर, मैनाक पर्वतके पास, 'विन्दुसरोवर' पर चला गया और वहाँसे सभा-भवन बनानेके लिये तरह-तरहके

मणि स्फटिक आदि पाषाण तथा और भी कितनीही उपयोगी वस्तुएँ ले आया। इनके अतिरिक्त वह वरुणका देवदत्त नामक शङ्ख और दैत्य-राज वृषपर्वाकी सहस्र गदा-समान वज्रगदा भी ले आया*। उसने वह शङ्ख अर्जुनको और गदा भीमसेनको अर्पण की।

चौदह महीनेंमें मयने, भुवन-विख्यात, एक मणिमय, दिव्य सभागृह बनाकर तय्यार कर दिया। वास्तवमें यह गृह ऐसा बना, कि इसकी समताका भवन तीनों लोक और चौदहों भुवनोंमें भी न निकला। उसकी विस्तीर्णता, निर्मलता, चित्र-विचित्रता और सुदृढ़ता देखने योग्य थी। उस भवनमें मयने एक ऐसा अद्भुत सरोवर बनाया था, जिसे देखकर सभी दङ्ग रह जाते थे। मयकी शिल्प-चातुरी बहुतही विचित्र थी। जहाँ द्वार थे, वहाँ दीवारें और जहाँ दीवारें थीं, वहाँ द्वार दृष्टि आते थे। जिस जगह सूखी ज़मीन थी, वहाँ पानी भरा हुआ दिखाई पड़ता और जहाँ पानी भरा हुआ था, वहाँ सूखी ज़मीन दिखाई देती थी।

इस प्रकार सभा-भवनके तय्यार हो जानेपर, महाराज युधिष्ठिरने, शुभ घड़ी और शुभ मुहूर्त्तमें बड़े समारोहके साथ उसमें प्रवेश किया।

एकदिन इसी सभा-भवनमें महाराज युधिष्ठिर अपने भाइयों तथा ऋषि-मुनियोंके साथ बैठे हुए थे, कि उसी समय देवर्षि नारद वहाँ आ पहुँचे। युधिष्ठिरने उठकर उनका सत्कार किया और पाद्य-अर्घ्यद्वारा विधि पूर्वक पूजा की। नारदने युधिष्ठिरको आशीर्वाद दिया और कुछ समयतक उन्हें राजनीतिका उपदेश देते रहे।

---

* दैत्यराज वृषपर्वाका पूरा हाल जानना हो, तो हमारे यहाँसे 'शर्मिष्ठा' नामक सचित्र ग्रन्थ मँगा देखो।

चलते समय उन्होंने महाराज युधिष्ठिरको राजसूय यज्ञ करनेकी भी सलाह दी।

नारदजीके उक्त सत्परामर्शको सुनकर, राजसूय यज्ञ करनेके लिये युधिष्ठिरने अपने भाइयोंसे भी सलाह की। भला महाराज युधिष्ठिरके भाइयोंको इस शुभ अनुष्ठानमें क्या उज्र था? उन सबोंने इस बातके लिये हर्ष प्रकट करते हुए सम्मति देदी। इन दिनों श्रीकृष्ण यहाँ नहीं थे। वे बहुत दिनोंसे द्वारका चले गये थे। इस यज्ञके विषयमें उनकी भी सम्मति जाननेके लिये, अर्जुनने एक शीघ्रगामी दूत द्वारा, उन्हें द्वारकासे बुला लिया। श्रीकृष्ण महाराज युधिष्ठिरकी इस शुभ अभिलाषाकी बात सुनकर परम प्रसन्न हुए। सबकी सम्मति मिल जानेपर धर्मराज यज्ञकी तय्यारियाँ करने लगे। सबसे पहले कृष्णने जरासंधको विजय करनेकी सलाह दी।

राजसूय यज्ञमें देशके सब राजाओंका आना और युधिष्ठिरका आधिपत्य स्वीकार करना एक मुख्य बात थी। जरासन्ध उस समय महाबलवान् प्रतापशाली राजा था। उसने अपने बाहुबलसे छियासी राजाओंको परास्तकर गिरि-दुर्गमें क़ैद कर रखा था। अतएव सबसे पहले जरासन्धको जीतकर, उन राजाओंको छुड़ा लाना निश्चय किया गया। परन्तु युधिष्ठिर जरासन्धकी अजेयताका अनुमान कर श्रीकृष्णसे कहने लगे,—"हे श्रीकृष्ण! जरासन्ध बड़ा बलवान् राजा है। उससे समर-क्षेत्रमें पार पाना बड़ा कठिन है। यदि कहो, कि भीम और अर्जुन उससे लड़ेंगे, तो भीम और अर्जुन मेरे दोनों नेत्र हैं, आपको मैं अपना प्राण समझता हूँ। अतएव नयन-प्राणहीन होकर मैं किस तरह जी सकूँगा? जरासन्धकी महाबलवती सेनाको यमराज भी नहीं जीत सकते। अतएव मेरी सम्मतिसे इस समय यज्ञ करनेका विचारही छोड़ देना उचित है।"

अर्जुनने कहा,—"महाराज! ईश्वरकी कृपासे मुझे अपनी आवश्यकताके अनुसारही, अस्त्र-शस्त्र और सैन्य-सामन्त प्राप्त हुए हैं। साथही साधु-समाजमें बैठे हुए विद्वान् लोगभी हमारी कुल-मर्यादाकी प्रशंसा किया करते हैं; किन्तु मेरे विचारमें इन बातोंसे हमारा गौरव नहीं बढ़ता। गौरव बढ़ता है, कर्त्तव्य-पालनसे। हम वीर हैं, हमारे पूर्वजगण महावीर थे। वीरोंके वंशमें उत्पन्न होकर जो वीर्य-हीन होता है, वह कुल-कलङ्की कहाता है। वीर्य-हीन कुलमें उत्पन्न हुआ शूर-वीर उससे कहीं उत्तम है। जो क्षत्रिय शत्रुको जीतकर उच्चपद पाता है, वही श्रेष्ठ कहलाता है। सर्व गुण-सम्पन्न होनेपरभी, यदि क्षत्रिय वीर्य-हीन हो, तो किसी कामका नहीं। पराक्रमके सामने सभी गुण तुच्छ हैं। यज्ञके लिये जरासन्धको मारकर क़ैदी राजाओंको छुड़ा लानेसे बढ़कर और हमारे लिये कौनसा काम होगा? यदि हम लोगोंने जरासन्धको मार, बन्दी राजाओंकी जीवन-रक्षाकर, राजसूय यज्ञ नहीं किया, तो हममें और नपुंसकोंमें भेद ही क्या रहा? जिस प्रकार शान्तिकी इच्छाकर मुनि होजानेसे कषाय वस्त्रोंका मिलना कोई बड़ी बात नहीं; उसी तरह प्रबल शत्रुओंको जय करनेसे हमें सहजमेंही समस्त पृथ्वीका साम्राज्य मिल जायेगा। इसलिये हम लोग जरासन्धसे अवश्य युद्ध करेंगे।"

कृष्णने भी अर्जुनकी बातका अनुमोदन करते हुए कहा,—"महाराज! अर्जुन ठीक कह रहे हैं। उनकी बात क्षत्रियोचितही है। अतः हमलोग जरासन्धको अवश्य मारेंगे। आप इसमें किसी प्रकारका सन्देह न करें।"

इस प्रकार श्रीकृष्ण और अर्जुनके उत्तेजना देनेसे, युधिष्ठिरके मनकी सारी जड़ता जाती रही और उन्होंने भीम, अर्जुन तथा श्रीकृष्ण-

को जरासन्ध-वधकी आज्ञा दे दी। तदनुसार भीम, अर्जुन तथा श्रीकृष्ण, तीनों ब्रह्मचारीका वेश-बनाकर मगधकी ओर चल पड़े और जङ्गलको राहसे पद्म-सरोवर, कालकूट पर्वत, गण्डकी, शर्करावर्त, सरयू, पूर्णकौशल, मिथिला, चर्मण्वती, गङ्गा एवं शोण आदि नद-नदियोंकी पार करते हुए, तीनों मगध-राज्यमें जा पहुँचे। वहाँ पहुँचकर उन्होंने नगर-द्वारपर रखा चैत्यक श्रृङ्ग तोड़ डाला और तीन उत्तम भेरियाँ, जो एक बार फूँकनेसे एक मासतक बजती रहती थीं, तोड़ डालीं। मार्गमें एक मालीसे पुष्पमालाएँ छीनकर अपने-अपने गलोंमें पहन लीं। इस प्रकार उपद्रव करते हुए तीनों वीर, जरासन्धके दरबारमें जा पहुँचे। जरासन्धने उठकर उन तीनों ब्राह्मणोंका स्वागत किया और कहा,—"महोदयो! पधारिये। आपलोगोंका आना शुभ हो।"

उस समय अर्जुन और भीम तो चुप रहे; परन्तु श्रीकृष्णने कहा,—"राजन्! ये लोग आजकल नियमस्थ हैं। इसलिये ये अभी कुछ नहीं बोलेंगे, आधी रातके बाद बातचीत करेंगे।"

यह सुन जरासन्धने उन्हें ठहरनेके लिये उचित स्थान बता दिया और आधी रात बीत जानेपर, वह उन लोगोंके पास गया। उस समय उनकी कलाइयोंपर धनुषकी डोरीकी फटकारोंके चिह्न देखकर वह समझ गया, कि ये लोग स्नातकके वेशमें कोई योद्धा हैं। यह देख उसने पूछा,—"हे वीरो! तुमलोग सत्य-सत्य कहो, कि कौन हो और मेरे पास आनेका क्या प्रयोजन है?"

यह सुन श्रीकृष्णने अपना, अर्जुनका और भीमसेनका वास्तविक परिचय देकर उससे युद्धकी भिक्षा माँगी। तदनुसार जरासन्धने उनमेंसे भीमसेनके साथ युद्ध करना स्वीकार किया।

कार्तिक कृष्ण प्रतिपदाको युद्ध आरम्भ हुआ और चतुर्दशीकी रात्रिको भीमसेनने जरासन्धका प्राण-संहार किया।

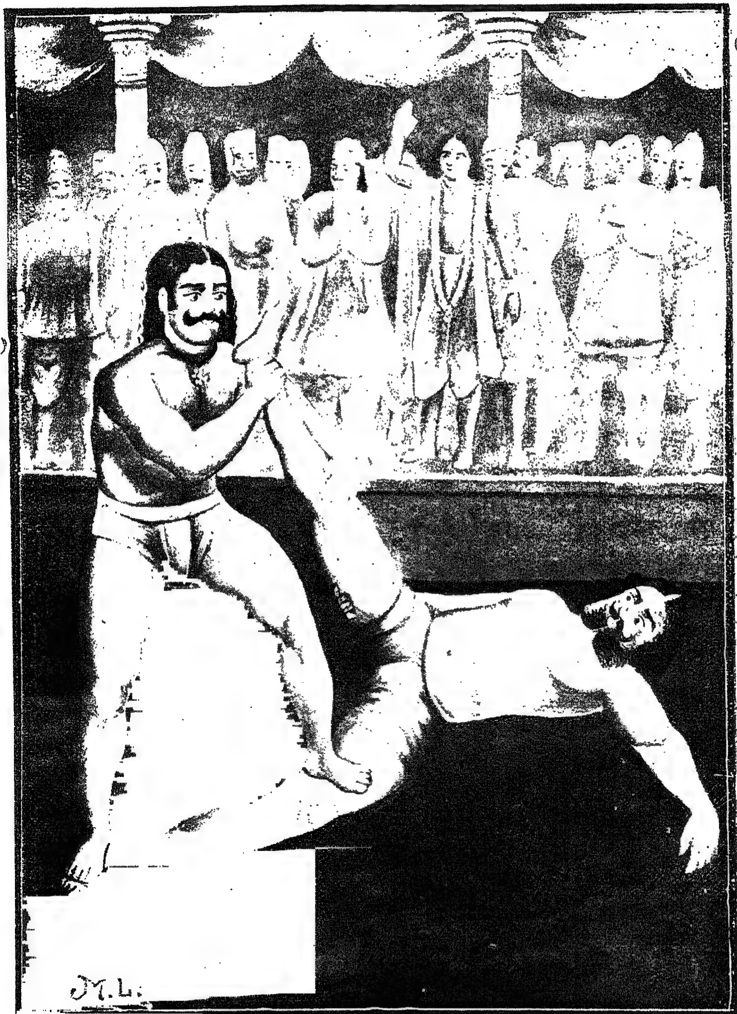
जरासन्धके मरजानेपर, कृष्णादिने क़ैदी राजाओंको कारागारसे मुक्त किया और उन सबको महाराजा युधिष्ठिरके राजसूय यज्ञमें शीघ्र पहुँचनेका निमंत्रण दे, जरासन्धके उस उत्तम रथपर, जो उसे इन्द्रसे प्राप्त हुआ था, सवार होकर, सबलोग इन्द्रप्रस्थको लौट आये।

दूसरे दिन अर्जुनने युधिष्ठिरसे कहा,—"महाराज! धनुष-वाण, अस्त्र, बल, यश और सेना आदि सभी इच्छित अथच दुष्प्राप्य वस्तुएँ मैंने प्राप्त की हैं। इस समय ख़ज़ानेकी वृद्धि करना मुझे अत्यावश्यक कर्त्तव्य जान पड़ता है। इसलिये मैं सभी राजाओंको अपना करद बनाना चाहता हूँ। सबसे पहले मेरा विचार उत्तर दिशाको विजय करनेका है।"

यह सुन युधिष्ठिरने कहा,—"अर्जुन! तुम प्रसन्नतापूर्वक विजय-यात्रा करो। मैं तुम्हें सहर्ष दिग्विजयार्थ जानेकी आज्ञा देता हूँ। आशा है, तुम अवश्य अभीष्ट-लाभ करोगे।"

युधिष्ठिरकी आज्ञा पा, अर्जुन बहुतसी सेना लेकर, अग्निके दिये कपिध्वज रथपर आरूढ़ हो, विजयके लिये चल पड़े। साथही भीमसेनने पूर्व, सहदेवने दक्षिण और नकुलने पश्चिम दिशाको विजय करनेके लिये सेना-सहित यात्रा की।

पहले-पहल अर्जुनने कुलिन्द देशके राजाओंसे युद्धकर उन्हें अपने अधीन किया। अनन्तर अनर्त-कालकूटको जीतकर सुमण्डल-को पराजित किया। यहांसे अर्जुनने अपने साथ सुमण्डलको ले लिया और शाकलद्वीप तथा प्रतिविंध्यको अपने अधिकारमें किया। पश्चात् शाकलद्वीपके राजाओंको साथ लेकर प्राग्-



जरासन्ध-वध ।

"चतुर्दशीकी रात्रिको भीमसेनने जरासन्धका प्राण-संहार किया ।"

Burman Press, Calcutta.

[पृष्ठ—१०२]

ज्योतिषकी ओर गये। यहाँपर भगदत्त नामका एक महाबलवान् राजा राज्य करता था। उसके साथ अर्जुनको बड़ा विकट युद्ध करना पड़ा। अन्तमें भगदत्तने अर्जुनसे हार मानली और हँसते हुए कहा,—"पाण्डव वीर! आप इन्द्रके पुत्र हैं, अतएव इन्द्रके समानही युद्ध-विद्या-विशारद योद्धा हैं। आपकी समता मैं क्या, पृथ्वीका कोई भी वीर नहीं कर सकता। मैं आपकी सेवामें उपस्थित हूँ, आज्ञा कीजिये।"

अर्जुनने कहा,—"हे नरेन्द्र! हमारे पूज्य भ्राता महाराजा युधिष्ठिर, प्रसिद्ध राजसूययज्ञ सानन्द समाप्तकर, सार्वभौम राजा हो चक्रवर्ती कहलायें, यही मेरी एकान्त अभिलाषा है। इसलिये आप उनका आधिपत्य स्वीकार करके उन्हें कर दीजिये। आप मेरे पिताके मित्र हैं। विशेषतः आप मुझसे प्रसन्न हैं; इसी कारण मैं आपको अन्य आज्ञा नहीं दे सकता।"

भगदत्तने कहा,—"हे वीरेन्द्र! जैसे आप मुझे प्यारे हो, वैसेही युधिष्ठिर भी मुझे प्यारे हैं। मैं अवश्य आपका आज्ञा-पालन करूँगा। इसके अतिरिक्त और जो कुछ सेवा हो, सो कहिये?"

अर्जुनने कहा,—"बस, और आपकी कृपा चाहिये।"

इस प्रकार भगदत्तसे निपटकर अर्जुन और आगे बढ़े। आगे बढ़कर उन्होंने अन्तर्गिरि, बहिर्गिरि और उपगिरिको जीता। यहाँसे अर्जुन जीते हुए सब राजाओं सहित उलूकवासी बृहन्तराजके नगरमें पहुँचे। बृहन्त चतुरङ्गिणी सेना लिये अर्जुनसे लड़ने आया। दोनों तरफसे ख़ूब लोहा बरसा; किन्तु थोड़ीही देरमें बृहन्त घबरा गया और अर्जुनका विक्रम देरतक न सह सका। अन्तमें हारकर उसने पाण्डवोंकी अधीनता स्वीकार कर ली। यहाँसे चलकर अर्जुनने सेनाविन्दुको राज्य-च्युत किया। इस प्रकार

अनेक राजाओंको अपने बाहु-बलसे अधीनस्थ बनाकर अर्जुनने राजा सेनाबिन्दुकी राजधानी देव-प्रस्थमें अपनी छावनी डाल दी।

यहाँसे अर्जुन कुछ चुने हुए पराक्रमशाली सामन्तोंको साथ ले, विश्व-गश्व और पर्वतवासी डाकुओंको जीतनेके लिये चल पड़े। इन्हें जीतकर उन्होंने उत्सव-संकेत नाम्नी सात तरहकी म्लेच्छ जातियोंको परास्त किया। इसके बाद काश्मीर देशके क्षत्रिय वीरों और दश शूद्र राजाओं सहित लोहित-राजको पराजित किया। यहाँसे चलकर उन्होंने त्रिगर्त, दारु और कोकनद आदि कितनेही देशोंको विजय किया और यहाँसे भी आगे बढ़कर वे अभिसारी नगरीपर आक्रमण करने गये। अभिसारीपर आक्रमणकर अर्जुनने उसे तथा उरगा-वासी रोचमनको भी लड़ाईमें हराया। इसके बाद सिंहपुरको नष्ट-भ्रष्टकर सिंह और सुमालियोंको भी परास्त किया। तदनन्तर उन्होंने वाल्हीकोंको भी भीषण आक्रमण द्वारा अपने वशमें कर लिया। यहाँसे प्रधान-प्रधान सेनापतियों सहित, सेना लेकर वे दरद और कम्बोजोंको अपने अधीन करने गये। उन सबको जीतकर अर्जुनने पूर्वोत्तर दिशाके कितनेही नामी-नामी डाकुओंको जीता। उस समय लोह, पश्चिम कम्बोज और उत्तर ऋषिक, ये तीनों राज्य मिलकर उनसे युद्ध करने आये। अर्जुनने भीषण संग्रामकर, उन्हें भी अपना वशवर्त्ती बना लिया। ऋषिकोंने तोतेके परोंके समान सुन्दर, हरे रंगके आठ घोड़े और मोरके रंगके कई घोड़े अर्जुनको भेट किये। अनन्तर अर्जुनने हिमालयको अच्छा स्थान समझकर, अपनी एक छावनी निष्कूट गिरिपर डाल दी।

वहाँसे कुछ योद्धा अपने सङ्ग लेकर अर्जुनने, किन्नरोंकी आवास-भूमि, किंपुरुषवर्षपर भयङ्कर आक्रमण किया और महा भयङ्कर युद्ध द्वारा किन्नरोंको पराजितकर, किंपुरुषवर्षको भी अपना करद राज्य

बना लिया। यहाँसे चलकर उन्होंने सीधे हाटक देशपर चढ़ाई कर दी। उसे जीतकर, मानसरोवरको पार करते हुए वे गन्धर्वों द्वारा रक्षित समस्त देशोंको जीतने लगे। यहाँसे उन्हें तित्तर, मण्डूक और कल्माष नामक कई अच्छे-अच्छे घोड़े करमें मिले।

अब अर्जुनने हरिवर्षपर चढ़ाई करनेकी ठानी और उसे विजय करनेके लिये कूचका डङ्का बजाया। यथासमय उनकी सेना वहाँ जा पहुँची; परन्तु उस नगरमें जो मनुष्य घुसता था, वह तत्काल-ही मर जाता था! मनुष्य-शरीरको वहाँ कुछ सूझता भी नहीं था। अतएव वहाँके द्वारपालोंने अर्जुनको समझाकर लौटानेके उद्देश्यसे, उनके पास आ प्रार्थना की :—

"वीरवर! हमलोग आपकी आज्ञा माननेको उद्यत हैं; क्योंकि आप एक महान् वीर हैं, इसी लिये हम आपपर प्रसन्न भी हैं। अतः यदि आप अपना कल्याण चाहते हैं, तो लौट जायें।"

अर्जुनने कहा,—"मैं धर्मराज युधिष्ठिरको माण्डलीक या सम्राट् बनाना चाहता हूँ। तुम्हारा यह देश, यदि मनुष्योंके लिये अगम्य है, तो मैं इसमें कदापि प्रवेश न करूँगा; परन्तु मेरी इच्छा है, कि तुम लोग कुछ थोड़ा-बहुत कर अवश्य प्रदान करो।"

अर्जुनकी यह बात सुनकर द्वारपालोंने कर-स्वरूप कितनेही वस्त्रालङ्कार उन्हें ला दिये। इस प्रकार उत्तर-दिशाके सभी राजाओं तथा दस्युओंको जीत और उनसे विपुल धन-रत्न तथा अनेक प्रकार-के हाथी-घोड़े लेकर, चतुरङ्गिणी सेनासहित महावीर अर्जुन, इन्द्र-प्रस्थमें लौट आये।

इसी तरह भीमसेन, नकुल और सहदेव भी, पूर्व, पश्चिम और दक्षिण-दिशाको जीतकर अपने साथ विपुल धन ले आये।

अब राजसूय यज्ञका अनुष्ठान आरम्भ हुआ। उसमें सभी देशोंके

राजा श्रीकृष्ण, भीष्म, विदुर, धृतराष्ट्र और दुर्योधन आदि धार्तराष्ट्रगण; कर्ण, द्रोण, कृप इत्यादि योद्धा तथा व्यास, नारदादि महर्षिगण भी पधारे। उस यज्ञमें प्रधान अर्घ्य, महात्मा भीष्मने योगिराज श्रीकृष्णको समर्पित किया। इस कार्यमें चेदि-राज शिशुपालने बाधा डाली और वह श्रीकृष्णके हाथों मारा गया। यज्ञ बड़ेही समारोहके साथ सम्पन्न हुआ और इस प्रकार राजा युधिष्ठिर अब सम्राट् कहलाने लगे।*

जन्मसेही पाण्डवोंके सुखपर कुढ़नेवाला नीचाशय दुर्योधन, उनके इस सुख, आनन्द, वैभव, यश, राज और लक्ष्मीपर चिढ़, मन-ही-मन जल भुनकर खाक हो गया। उसका मन मारे बेचैनीके मुर्झा गया। वह मारे फ़िक्रके दिन दिन दुर्बल होने लगा। मुँह पीला पड़ गया, आँखें माथेमें घुस चलीं, क्योंकि वह रात-दिन पाण्डवोंका नाश करनेके उपाय सोचनेमेंही निमग्न रहता था।



---

*इस कथाका पूरा-पूरा हाल जाननेके लिये हमारे यहाँसे हिन्दी 'महाभारत' मँगा देखिये। इसमें सुन्दर-सुन्दर २२ रंगीन चित्र दिये गये हैं और अठारहों पर्व बड़ी दिलचस्प भाषामें लिखे गये हैं। मूल्य रंगीन जिल्दका ३) और सुनहरी रेशमी जिल्दका ३।) रुपया है।

पाँचवाँ अध्याय

सर्वनाशका सूत्रपात

द्यूत-क्रीड़ा

पाण्डवोंके राज्य-सुखसे महा दुःखी हो दुर्योधन रात-दिन मलिन मनसे जीवन बिताने लगा। अन्तमें उसने शकुनीकी सहायतासे जूएमें पाण्डवोंका सर्वस्व जीत लेनेका विचार दृढ़ किया। उसने उलटा-सीधा समझाकर धृतराष्ट्रसे भी इस कार्यकी आज्ञा लेली। भीष्म, विदुर और द्रोण आदिने बहुत कुछ मना किया, परन्तु उसने किसीकी भी बातपर ध्यान नहीं दिया।

दुर्योधनने एकदिन एक दूतको इन्द्रप्रस्थ भेजकर पाण्डवोंको द्रौपदी सहित हस्तिनापुर बुलवा भेजा। छल-प्रपञ्च-हीन, सरल-हृदय पाण्डवगण, निमन्त्रण पातेही अपनी पत्नी सहित हस्तिनापुर चले आये और वहाँ कुछ दिनोंतक आमोद्-प्रमोदमें लगे रहे।

दुर्योधन अपना दाँव-पेंच देख रहा था। एकदिन मौक़ा पाकर उसने चौपड़ खेलनेकी बात उठायी। युधिष्ठिर चौपड़ खेलनेके

बड़े शौक़ीन थे ; परन्तु उन्हें जूएकी धूर्त्तता नहीं आती थी। अस्तु ; इधर कौरवोंकी तरफसे जूएमें अत्यन्त दक्ष मामा शकुनी बैठे और पाण्डवोंकी ओरसे युधिष्ठिर। बस, खेल आरम्भ होगया। कुछ देर तक तो ये सब बिना किसी शर्त या दाँवके खेलते रहे, परन्तु अब धीरे-धीरे कुछ द्रव्य भी दाँवपर रखा जाने लगा। शकुनी बड़ा धूर्त्त था ; वह पहले पाण्डवोंको भुलावा देनेके लिये आप हार खाने लगा। जब उसने देख लिया, कि पाण्डव लोग प्रसन्नतापूर्वक खेलमें संलग्न होगये हैं, तब उसने एक-एक करके, धन, जन, गऊ, भूमि, दास, दासी, राज्य इत्यादि सभी वस्तुएँ पाण्डवोंसे जीत लीं। कहते हैं जूएकी हार, जीतसे भी ज़ियादः दिलचस्प होती है। इसीलिये इतना हारनेपर भी राजा युधिष्ठिर पाँचों भाइयोंको दाँवपर रखकर हार गये ! अन्तमें उन्होंने अपनी प्रियतमा देवी द्रौपदीको भी दाँवपर लगा दिया ! पाँसे फेंके गये और कौरवोंकी जीत हो गयी ! इस तरह पाण्डवोंको चौपड़ने पूरा चौपट बना दिया।

पाण्डवोंको हारा हुआ देख, दुर्योधन मारे प्रसन्नताके फूला न समाया। उसने उचित-अनुचितका कुछभी ख़याल न कर, तत्काल दुःशासनको भेजकर द्रौपदीको राज-सभामें बुला लिया और उसे पाण्डवोंके सामनेही अपमानित करनेकी धृष्टता करने लगा ! किन्तु यह अपमान भीमसेनसे नहीं सहा गया। वे कहने लगे :— "युधिष्ठिरने द्रौपदीको दाँवपर रखकर बहुतही नीच कार्य किया है। जाओ, सहदेव ! शीघ्र अग्नि लेआओ, जिससे धर्मराजके दोनों हाथ जलाकर इस पाप-कर्मका प्रायश्चित्त कर दूँ।"

यह सुन अर्जुनने कहा,—"भाई भीमसेन ! आजतक आपने धर्मराजके प्रति कभी ऐसे कटु वाक्य नहीं कहे थे। मालूम होता है,

कि शत्रुओंने आपके धर्म-गौरव तकको नष्ट कर दिया है। यदि आपने ऐसा किया, तो शत्रुओंको महान प्रसन्नता होगी। अपने धर्मनिष्ठ बड़े भाईके साथ ऐसा वर्त्ताव करना क्या किसी भी मनुष्यके लिये उचित समझा जा सकता है? शत्रुओं द्वारा ललकारे जानेपर महाराजने अपने क्षात्र-धर्म्मके अनुसार जो कुछ भी किया है, वह सबकी दृष्टिमें बड़ाही कीर्त्तिप्रद है। आप ऐसा अधर्माचरण न कीजिये।"

अर्जुनके मुखसे यह बात सुनकर भीमसेन चुप रह गये। दुःशासनके इस कार्यसे, सिवा कर्ण,शकुनी और दुर्योधनके कोई भी प्रसन्न नहीं था। अतः द्रौपदीको बुरी तरह रोते देखकर धृतराष्ट्रने दुःशासनको खूब डाँटा और इन नीचोंके पञ्जेसे छुड़ाकर द्रौपदीको अभय देते हुए कहा,—"बेटी! रोओ मत! शान्त होकर, तुम्हारी जो इच्छा हो, वही मुझसे माँग लो; मैं उसे सहर्ष देनेको तय्यार हूँ।"

यह सुनकर द्रौपदीने केवल अपने पतियों, अक्षय तूणीरों, गाण्डीव धनुष और कपिध्वज रथको माँगा! परन्तु धृतराष्ट्रने प्रसन्न होकर, जो कुछ दुर्योधनने जीत लिया था, वह सब पाण्डवोंको दे दिया और कहा,—"पुत्रो! जाओ और आनन्दपूर्वक इन्द्रप्रस्थमें जाकर राज्य करो।"

पाण्डव इन्द्रप्रस्थकी ओर चल दिये। यह देखकर दुर्योधन, कर्ण, दुःशासन और शकुनीको महान् दुःख हुआ। अबकी बार उन्होंने पाण्डवोंको मार्गसेही वापस बुलाकर, फिर जूआ खेल, उन्हें नीचा दिखानेकी सलाह की। इसके लिये दुर्योधन अपने पिता धृतराष्ट्रके पास गया और रो-रोकर अपने भाग्यको कोसने लगा। पुत्रके इस करुण-क्रन्दनको सुनकर महाराजका मन दयार्द्र हो उठा। उन्होंने कहा,—"बेटा! तुम जो चाहोगे, होगा।"

यह सुन दुर्योधनने, खूब चापलूसीकी बातें कर, उन्हें अपनी

बातपर राज़ी कर लिया और एक बार फिर जूआ खेलनेकी आज्ञा प्राप्त करली।

पुत्रके अनुरोधसे धृतराष्ट्रने, एक दूत दौड़ाकर, पाण्डवोंको मार्ग-सेही वापस बुला लिया और फिर जूआ खेला जाने लगा। शकुनीने छल और बेईमानी कर, इस बार भी, पाण्डवोंका राज्य, सेना, धन, जन आदि सभी जीत लिये।—अबकी बार यह दाँव रखा गया, कि जो कोई हारे, वह बारह वर्ष वन-वास और एक वर्ष अज्ञात-वास करे। यदि अज्ञातवासमें वह देख लिया जायेगा, तो फिर बारह वर्ष वन-वास और एक वर्ष अज्ञातवास करेगा। दोनों ओरसे स्वीकृति मिल जानेपर फिर पाँसे फेंके गये और पाण्डव हार गये!

दुर्योधनके मनकी बात पूरी होगयी। वह, पाण्डवोंको सर्वस्व-हीन हुआ देख, अत्यन्त प्रसन्न हुआ। तदनुसार पाण्डव लोग राज-वस्त्र परित्याग-पूर्वक, मृगचर्म आदि मुनि-वस्त्र धारणकर, बारह वर्ष वन-वास करनेके लिये वनकी ओर चल पड़े।

चलते समय भीमसेनने कहा,—"आजसे तेरह वर्ष बाद, युद्धमें, मैं दुर्योधनको, अर्जुन कर्णको और सहदेव शकुनीको मारेंगे। दुर्योधनका मस्तक मैं अपने पैरोंसे कुचलूँगा और दुःशासनके हृदयका रक्त-पान कर अपने हृदयकी आग बुझाऊँगा!"

अर्जुनने कहा,—"हे भीम! आजसे तेरह वर्ष बाद जैसा भीषण हत्याकाण्ड होगा; उसे देखकरही इन लोगोंके कलेजे काँप जायेंगे। आपके कथनानुसार समरमें मैं इस कटुभाषी, विद्वेषी, आत्म-प्रशंसक कर्णका अवश्यही वध करूँगा। भीमके प्रिय कार्यको पूरा करनेकी इच्छासे अर्जुन आज यह प्रतिज्ञा करता है, कि वह समरमें बाणों द्वारा कर्ण और उसके सभी सहायक-राजाओंको यमराजके घरका अतिथि बनायेगा—हिमालय अपने स्थानसे विचलित हो

जाये, सूर्य अपना प्रकाश त्याग दे और चन्द्रमा अपनी शीतलता छोड़ दे ; परन्तु आजसे तेरह वर्ष बीत जानेपर यदि दुर्योधनहमें, हमारा राज्य न लौटायेगा, तो उक्त प्रतिज्ञा अवश्यमेव पूर्ण होगी !"

मार्गमें चलते समय युधिष्ठिर और सहदेवने अपने मुख कपड़ेसे ढाँक लिये। भीमसेन अपनी भुजाओंको देखते हुए और अर्जुन बालू बिखेरते हुए चलने लगे। अर्जुन बालू उड़ाकर इस बातकी सूचना दे रहे थे, कि युद्धमें इस बालूके सूक्ष्म कणोंकी भाँतिही मेरे बाण बरसेंगे। नकुल सारे बदनमें धूल लपेटे और द्रौपदी बालोंसे मुखको ढाँके वनकी ओर जाने लगी। पाण्डवोंके वन-गमनके समय बिना बादलोंकेही, हस्तिनापुर पर, बारम्बार बिजलीकी कड़कड़ाहटका शब्द सुनाई देने लगा; बिजली गिरने लगी ; पृथ्वी हिलने लगी और कुत्ते तथा गधे कर्कश स्वरमें रोने लगे! इस प्रकार उस समय वहाँ अनेक अशुभ सूचक उत्पात होने लगे।

पाण्डवोंका वन-वास

पाण्डव, हस्तिनापुरसे चलकर, तीसरे दिन काम्यक वनमें पहुँचे और यहाँसे द्वैतवनके लिये चल पड़े। महात्मा श्रीकृष्णको जब इस बातका पता लगा, तब वे, कौरवोंपर अत्यन्त क्रुद्ध हो, पाण्डवोंसे मिलनेके लिये वनमें आये। वे पाण्डवोंसे कहने लगे,—"मैं कौरवों द्वारा तुम्हारे साथ किये गये इस अन्यायको नहीं सह सकता। आज मैं उन पापी धार्तराष्ट्रोंको, उनके सहायकों सहित, अकेलाही वध करूँगा।"

अर्जुनने कृष्णको अत्यन्त क्रोधित देख, भाँति-भाँतिसे समझाया और उनका क्रोध शान्त किया। श्रीकृष्ण अपने मित्र अर्जुनके कहनेपर शान्त हो कहने लगे :—

"अर्जुन! तुम मेरे और मैं तुम्हारा हूँ। जो लोग मेरे हैं, वे सब तुम्हारे भी हैं। जो तुमसे द्वेष करते हैं, वे मुझसे भी द्वेष करते हैं। भला मैं चुपचाप तुम्हारे साथ यह अन्याय देखूँ! मुझसे तुम्हारा यह अपमान नहीं देखा जाता; क्योंकि जिस प्रकार तुम मुझसे भिन्न नहीं हो, उसी तरह मैं भी तुमसे भिन्न नहीं हूँ।"

इसी बीच कृष्णके सामने द्रौपदीने, विलाप करते हुए, आकर कहा,—"भगवन्! मैं तुम्हारी मित्र-पत्नी, महावीर पाण्डवोंकी भार्या और धृष्टद्युम्नकी बहन, रजस्वला होनेके कारण, शोणित-सिक्ता तथा एक-वस्त्रा होनेपर भी, सभामें अपमानित की गयी! मैं पाण्डवों-की निन्दा करती हूँ और अर्जुनके गाण्डीव धनुषको शतबार धिक्कारती हूँ! इन लोगोंने मुझे बल-हीन लोगों द्वारा अपमानित देखकर भी चुपचाप उस अपमानको सह लिया है! गोविन्द! तुम्हीं बताओ, इससे बढ़कर कायरता और क्या हो सकती है?"

श्रीकृष्णने द्रौपदीको सान्त्वना देते हुए कहा,—"देवि! जिन लोगोंपर तुम क्रुद्ध हो, उनकी स्त्रियाँ अपने पतियोंको अर्जुनके बाणोंसे मरा और रक्ताक्त-कलेवरसे समर-भूमिमें पड़ा देख, छाती पीट-पीटकर रोयेंगी। अब तुम शोक न करो।"

द्रौपदीने श्रीकृष्णके मुखसे यह बात सुन, सजल नेत्रोंसे अर्जुनकी ओर देखा।

अर्जुनने कहा,—"प्रिये! अब तुम न घबराओ। जो बात गोपालने कही है, वह अक्षर-अक्षर सत्य होगी। युद्धमें धृष्टद्युम्न—द्रोणाचार्यको, शिखण्डी—भीष्मको, भीमसेन—दुर्योधन तथा दुःशासनको और मैं कर्णको वध करूँगा!"

इसके बाद श्रीकृष्ण पाण्डवोंसे विदा ले, अपनी भगिनी सुभद्रा तथा भागिनेय अभिमन्यु सहित, द्वारकाको चले गये। इस वनमें



किरातार्जुन-युद्ध

भीलने कहा,—"तू झूठ बोलता है। यह राक्षस-रूपी बराह मेरेही बाणसे मरा है।"

Burman Press, Calcutta

सैकड़ों इन्द्रप्रस्थ-वासी लोग आ जमा हुए थे। वे भी रोते हुए पाण्डवोंके साथ-साथ चलने लगे। यह देख, अर्जुनने उन सबोंको समझा कर कहा,—"भाइयो! हमलोगोंको १२ वर्ष वनमें बिताने हैं। इसलिये आपलोग अपने-अपने घरोंको लौट जाइये। हमारे साथ, आप लोगोंको कष्ट होता देखकर, हमें विशेष दुःख होगा। सुनिये, महाराज युधिष्ठिर इस वन-वास द्वारा शत्रुओंका सब यश-ग्रहण करेंगे। अब आपलोग धर्मज्ञ तपस्वियोंको एकत्रकर, या प्रथक्-प्रथक् उनके पास जाकर, उनलोगोंसे ऐसी प्रार्थना कीजिये, जिससे हमलोगोंका प्रयोजन सिद्ध हो और हमें विजय मिले।"

अर्जुनकी बात मानकर सबलोग अपने घर लौट आये। पुर-वासियोंके चले जानेपर युधिष्ठिरने अपने भाइयोंसे पूछा,—"हम लोगोंको अब बारह वर्ष वनमेंही बिताने हैं। इसलिये कौनसे वनमें जाकर रहना ठीक होगा?"

अर्जुनने कहा,—"महाराज! भारतवर्षमें ऐसा कौनसा स्थान है, जिसे आप न जानते हों! कारण, कि आप हमसे ज्ञान वृद्ध और वयोवृद्ध हैं तथा रात-दिन महर्षियोंसे इस विषयकी बातचीत किया करते हैं। आपने सर्वत्र घूमने-फिरने वाले देवर्षि नारदसे भी सब स्थानोंका वर्णन सुन रखा है। इसलिये जहाँ आप निवास करनेकी इच्छा करें, वहाँही हम भी रहनेको तैयार हैं।"

युधिष्ठिरने कहा,—"मेरे विचारसे तो द्वैतवनही रहने योग्य उत्तम स्थान है।"

इसके बाद सब लोग द्वैतवनके लिये चल दिये और कितनेही जङ्गल-पहाड़ पारकर, अनेकानेक सुन्दर वृक्षोंसे सुशोभित, उस द्वैत वनमें पहुँचकर, एक सुन्दर सरोवरके किनारे, आनन्दपूर्वक रहने लगे। पाण्डवोंके यहाँ रहनेका समाचार पाकर सारा बन ब्राह्म-

गोंसे भर गया और उनकी सुमधुर, पवित्र वेद-ध्वनिसे ब्रह्मलोकके समान प्रतीत होने लगा। ब्राह्मणगण तरह-तरहके धार्म्मिक कार्य्योंसे पाण्डवोंका मन बहलाने लगे।

एक दिन, रात्रिके समय, द्रौपदीने राजा युधिष्ठिरसे कहा,—"धर्मराज! आप सदा सुकोमल शय्यापर लेटनेवाले और रेशमीवस्त्र पहननेवाले हैं, पर आज चर्म-वस्त्र पहने, कुशासनपर पड़े हैं! मेरी दशा मैंही जानती हूँ। मैंने कभी पलँगपरसे नीचे पैर नहीं रखा था, परन्तु आज, कुश-कंटकोंमें, पैदल चलना तथा पृथ्वीपर सोना पड़ता है। न जाने आपने क्या सोच-समझकर चुप्पी साध रखी है? भीमसेन सरीखे बलवान् भाइयोंके होते हुए भी, आपका इस प्रकार चुप्पी साधना, मुझे आश्चर्यमें डाल रहा है। अकेले भीमसेनही कौरवोंको विनाश करनेकी शक्ति रखते हैं। जो दो भुजावाले होकर भी, सहस्राबाहुके समान, वाण-युद्धमें शीघ्रहस्त हैं, जो शत्रुओंको यमराजके समान हैं, जिनके शस्त्रोंके प्रतापसे आपका यज्ञ पूर्ण हुआ और आपने सम्राट्-पद प्राप्त किया, जिनका आदर देव-दानव भी करते हैं, जिन्होंने अनेक बलशाली राजाओंको जीतकर उनसे कर वसूल किया है, उन्हीं वीर-अर्जुनको वन-वासी देख, आपका क्रोध क्यों नहीं बढ़ता? इस मौनावलम्बनका कारण क्या है?"

युधिष्ठिरने द्रौपदीको समझा-बुझाकर शान्त कर दिया। दूसरे दिन सवेरेही महर्षि व्यास वहाँ आपहुँचे। उन्होंने युधिष्ठिरको एकान्तमें समझाकर कहा,—"मैं तुम्हारे मनके भावोंको जानकरही यहाँ आया हूँ। वह समय शीघ्रही आनेवाला है, जब कि तुम्हारे मझले भाई अर्जुन, शत्रुओंका विध्वंस करेंगे। धर्मराज! मैं तुम्हें एक उत्तम सलाह देता हूँ; यह वन-वासका समय व्यर्थही जङ्गल

जङ्गल फिरनेमें न खो देना चाहिये। अर्जुनको चाहिये, कि वे इन्द्र, वरुण, रुद्र और कुवेरको प्रसन्नकर, उनसे उत्तमोत्तम दिव्यास्त्र प्राप्त करें। अर्जुन महान् तेजस्वी, मेधावी, योगिराज कृष्णके मित्र तथा अजेय पुरुष हैं। वे इन्द्र, रुद्रादि लोकपालोंसे अस्त्र पाकर, समय पड़नेपर, बहुत बड़ा काम कर दिखावेंगे। अब तुमलोग, इस वनको छोड़कर कहीं, अन्यत्र चले जाओ; क्योंकि सदा एक स्थानपर रहना, तुम्हारे जैसे महापुरुषोंके लिये, हानिकारक है।"

व्यासजीके आज्ञानुसार पाण्डवगण द्वैतवनको छोड़कर फिर काम्यकवनमें चले गये। वहाँ पहुँचनेके बाद एक दिन युधिष्ठिरने अर्जुनको एकान्तमें पाकर कहा,—"भैया! भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, कर्ण और अश्वत्थामा धनुर्वेदमें अत्यन्त पारदर्शी हैं। वे लोग ऐन्द्र, वारुण इत्यादि देवास्त्रोंका प्रयोग उत्तमता-पूर्वक जानते हैं। दुर्योधन उन लोगोंको तन, मन, धनसे रात-दिन प्रसन्न रखता है। उसके यहाँ जितने कुशल योद्धा हैं, वह उन सबको खुशामद और धन-दानसे सदा सन्तुष्ट रखता है। अतएव वे लोग, समय पड़नेपर, अपनी-अपनी शक्तिके अनुसार, उसके पक्षका समर्थन करेंगे। इस समय यह समस्त ससागरा पृथ्वी उसके आधीन है; परन्तु हमारे सहायक केवल एक तुमही हो। यह सारा बोझा तुम्हारेही सिरपर है। अतएव मैं तुमको इस समयके लिये, एक उचित-कार्य बताता हूँ, ध्यानसे सुनो; मुझे महात्मा व्यासजीने जो उत्तम विद्या बतायी है, उसे तुम मुझसे सीख लो। उसके द्वारा तुम सारे जगत्‌को पूरी तरहसे देख सकोगे। इसके बाद तुम उग्र तपस्या द्वारा देवताओंको प्रसन्न करो। अर्जुन! तुम अब एक बड़े भारी कामके लिये परिश्रम करनेको बद्धपरिकर होजाओ। तुम

खड्ग, धनुष और कवच धारणकर, ब्रह्मचर्य्य-व्रत-पूर्वक, उत्तर-दिशाकी ओर प्रस्थान करो।

"इस समय सब दिव्यास्त्र इन्द्रके पास हैं ; क्योंकि देवताओंने, वृत्रासुरके डरसे, अपने सभी अस्त्र-शस्त्र देवराज इन्द्रको दे दिये हैं। यदि तुम परिश्रम करोगे, तो उन सभी अस्त्रोंको पा सकोगे। इसलिये तुम महाराज इन्द्रके पास जाओ। वे तुम्हें अवश्य, प्रसन्नता-पूर्वक, सब अस्त्र प्रदान करेंगे। तुम आजही दीक्षित होकर इन्द्र-लोककी यात्रा करो।"

अर्जुनने यथाविधि दीक्षित हो, व्यासजीकी बतायी, वह गुप्त विद्या अपने बड़े भाई युधिष्ठिरसे सीखली। इसके बाद अग्निहोत्र कर, ब्राह्मणोंको दान दे, उनसे स्वस्ति-वाचन करा, कवच, कर-तलत्राण, गोधा, अंगुलित्राण आदि धारणकर, कमरमें खड्ग बाँध, गाण्डीव तथा दोनों अक्षय तूणीर ले, उन्होंने यात्राकी तय्यारी की। उस समय धौम्य तथा अन्यान्य ऋषियोंने उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा,—"धनञ्जय! परमात्मा तुम्हारी इच्छा शीघ्रही पूर्ण करेगा। तुम्हारी अवश्य विजय होगी। तुम अपने कार्य-साधनमें सहर्ष प्रवृत्त हो जाओ।"

द्रौपदीने वीर अर्जुनको जानेके लिये तय्यार देख, सबके चित्त-को आकर्षित करते हुए, कहा :—

"सुनो, प्राणेश्वर! उस पापी दुर्योधनने मुझे देख, 'बहु पुरुष-भोग्या' कहकर उपहास किया था। इसका मुझे अत्यन्तही दुःख है। इसके अतिरिक्त उसने और भी कई कठोर वाक्य मुझसे कहे थे—वे सब मेरे हृदयमें शूलकी तरह रात-दिन चुभते रहते हैं। परन्तु इस समय आपके वियोगका दुःख मुझे उन सब दुःखोंकी अपेक्षा विषम तथा असह्य हो रहा है। तुम्हारे चले जानेपर,

तुम्हारे भाई, अवश्यही तुम्हारे गुणोंका वर्णनकर, रात-दिन तुम्हें याद किया करेंगे। स्वामिन्! तुम्हारे अधिक समयतक विदेश रहनेसे हमें भोग, सुख, धन, जीवन कुछ भी अच्छा नहीं लगेगा। हम सब लोगोंका राज्य, सुख, ऐश्वर्य्य, जीवन आदि सब कुछ आप परही अवलम्बित है। मैं परमात्मासे प्रार्थना करती हूँ, कि वह आपका कल्याण करे और आपको अपने कार्य्यमें सफलता तथा यश-प्रदान करे। जाओ नाथ! विजयके लिये शीघ्र जाओ और आकर उन दुष्ट धृतराष्ट्र-पुत्रोंसे, उनके किये नीच कार्य्योंका, बदला चुकाओ। मेरे हृदयकी धधकती हुई दुःखाग्निको शीघ्र बुझाओ। मैं तुम्हारी कुशलताके लिये परमात्माको बारम्बार प्रणाम करती हूँ। जाओ, जीवनेश्वर! परमात्मा तुम्हारे विघ्नोंको दूर कर, तुम्हारा मार्ग सुगम करें।"

यशस्विनी कृष्णाका यह आशीर्वाद सुन, अर्जुन अपने भाई तथा पुरोहित धौम्यकी परिक्रमा कर चल दिये। कर्तव्य-परायण अर्जुनके मार्गसे सभी प्राणी हटने लगे। यहाँसे अर्जुन, अनेक वन-पर्वतों और नदी-नालोंको पार करते हुए, एकही दिनमें, हिमालयपर जा पहुँचे! वहाँसे गन्धमादन पर्वतको पार करते हुए इन्द्रकील नामक पर्वतपर पहुँचे। वहाँ उन्होंने सहसा यह शब्द सुना,—"ठहरो"! साथही अर्जुनने अपने चारों तरफ देखा; परन्तु कहीं भी कुछ दिखा नहीं पड़ा। इसी समय उन्हें सामनेसे पिङ्गल वर्ण, जटायुक्त, कृशवदन और ब्रह्मश्रीसा देदीप्यमान एक तपस्वी आता दिखाई पड़ा। उसने अर्जुनसे पूछाः—

"पुत्र! तुम कौनहो? तुम क्षत्रिय-धर्मके अनुगामी होकर, धनुष, शर, कवच और कृपाण आदि धारण किये हुए यहाँ आये हो। इस जगह अस्त्र-शस्त्रकी आवश्यकता नहीं। यह, क्रोध-हर्ष

रहित, शान्त-स्वभाव, तपस्वी-ब्राह्मणोंका निवास-स्थान है। यहाँ कभी युद्ध होना सम्भव नहीं। इसलिये यहाँ, इस वीर-वेशका प्रयोजन नहीं। तुम इन्हें परित्याग करो। तुमने यहाँ पहुँचकर परमगति प्राप्त की है। मैंने आजतक मनुष्योंमें तुम्हारे समान तेज और वीर्य्य कहीं नहीं देखा।।"

ब्राह्मणके इस कथनसे महावीर अर्जुन ज़रा भी विचलित न हुए; तब वह ब्राह्मण प्रसन्न होकर बोला,—"अर्जुन! मैं इन्द्र हूँ। तुम मुझसे वरकी प्रार्थना करो।"

अर्जुनने यह सुन, इन्द्रको प्रणाम कर, हाथ जोड़ कर कहा,—"भगवन्! मेरी प्रबल इच्छा है, कि मैं आपसे समस्त दिव्यास्त्रोंकी शिक्षा ग्रहण करूँ। अतएव आप मुझे यही वर-प्रदान कीजिये।"

इन्द्रने कहा,—"अर्जुन! तुम तो ऐसे स्थानमें आ पहुँचे हो, जहाँ अस्त्र-शस्त्रोंकी तुम्हें आवश्यकताही नहीं रही। अब तुम्हें अपने पासके अस्त्र भी त्याग देने चाहियें। तुमने तो अलभ्य परमगति पाली है, अतएव इस उत्तम लोकमें रहनेका वर माँगो।"

अर्जुन बोले,—"देवेन्द्र! आपकी आज्ञा मैं अवश्यही शिरोधार्य्य करता, परन्तु मुझे तो उत्तम वस्तु, काम्य भोग अथवा देवत्वकी इच्छाही नहीं है। न मैं सब देवताओंपर आधिपत्य पानेकी ही इच्छा करता हूँ। मैं भाइयोंको वनमें भटकते छोड़, बैरका बदला लिये बिना, क्या इस परम गतिको प्राप्त कर, संसारमें निन्दाका पात्र बनूँ? मुझे इस समय, सिवा अस्त्र-शस्त्रोंके, आपसे और किसी भी वस्तुकी इच्छा नहीं है।"

यह सुन, इन्द्रने अर्जुनको धैर्य्य देते हुए मीठे शब्दोंमें कहा,—"वत्स! जब तुम देवादिदेव महादेवको प्रसन्न कर लोगे, तब मैं तुम्हें सब दिव्यास्त्र दे दूँगा। अब तुम उन्हीं पिनाकहस्त,

नीलकण्ठ, शूलपाणि, त्रिलोचन शिवको प्रसन्न करनेका प्रयत्न करो। उन्हें प्रसन्नकर तुम मनवाञ्छित वस्तु पाओगे।"

इतना कह, इन्द्र वहाँसे चले गये और अर्जुन योगयुक्त हो, महादेवजीको प्रसन्न करनेके लिये, घोर तपस्या करने लगे।

शिवार्जुन-युद्ध

वास्तवमें अर्जुनने बड़ा उग्र तप किया। उस समय उन्होंने वस्त्रोंकी जगह वल्कल धारण कर लिये थे। वृक्षोंसे स्वयं गिरे हुए सड़े और गले पत्तोंको खालेनाही उनका आहार था। वे पहले महीनेमें तीन रातके बाद एक दिन; दूसरे महीनेमें छः रातके बाद एकदिन और तीसरे महीनेमें एक पक्षके अन्तमें एकदिन फलाहार करने लगे! जब चौथा महीना लगा, तब उन्होंने फलाहार भी छोड़ दिया और बिना किसी चीज़के सहारे, ऊपरको दोनों भुजाएं उठाये, पैरकी अँगुलियोंके बल पृथ्वीपर खड़े रहकर, वे महाकठोर तपस्या करने लगे!

अर्जुनको ऐसा उग्र तप करते देख, सब ऋषि-मुनि, महादेवजी-के पास, उनके उग्र तपका वृत्तान्त कहने गये। उन लोगोंने महा-देवजीको प्रणामकर कहा :—

"नाथ! महावीर अर्जुनने, हिमालयपर खड़े होकर, बड़ाही उग्र तप करना आरम्भ किया है। उनकी तपश्चर्य्याके प्रभावसे चारों ओर धुआँसा छा गया है! हम नहीं कह सकते, कि वे ऐसी कठिन तप-स्या किस लिये कर रहे हैं! उन्होंने तपद्वारा हम लोगोंके हृदयको महान आनन्द पहुँचाया है। आप उन्हें दर्शन दीजिये।"

महादेवजीने कहा,—"आपलोग अर्जुनके सम्बन्धमें कुछ भी चिन्ता न कीजिये। मैं उसके मनोगत सङ्कल्पको भली-भाँति जानता

हूँ। उसे स्वर्ग, ऐश्वर्य्य, अथवा दीर्घायु पानेकी इच्छा नहीं है। उसकी जो कुछ इच्छा है, वह आज मैं अवश्य पूरी करूँगा । अब आप लोग अपने-अपने आश्रमोंको प्रस्थान कीजिये ।"

ऋषिलोग, शिवके मुखसे ये बातें सुन, प्रसन्न हो, अपने-अपने स्थानोंको चले गये। इधर महादेवजीने किरातका वेश बनाया और अस्त्र-शस्त्रसे सुसज्जित हो, अत्यन्त वेगसे, हिमालयकी ओर प्रस्थान किया। उनके साथ पार्वतीजी भी भिल्लनीके वेशमें गयीं। इस प्रकार भील-भिल्लनीका रूप बनाये, शिव-पार्वती अर्जुनके पास जा पहुँचे। वहाँ पहुँचकर उन्होंने देखा, कि 'मूक' नामक एक दुष्ट दानव, शूकरका शरीर धारणकर, अर्जुनको मार डालनेकी घातमें फिर रहा है। अर्जुनने उस शूकरको देखते ही अपना गाण्डीव धनुष उठा लिया और मन-ही-मन कहा :—

"मैंने इसका क्या बिगाड़ा है, जो यह मुझे मारने यहाँ आ पहुँचा। पर जबतक यह मुझे मारे, उसके पहलेही, मैं इसका काम तमाम करदूँ तो सारा झगड़ाही निपट जाये।"

किरात-वेशधारी शङ्करने, अर्जुनको, उस शूकरको मार डालनेके लिये तय्यार होते देख, उन्हें मना करते हुए कहा,—"ख़बरदार! तुम इस शूकरपर बाण मत चलाना। यह मेरा शिकार है, इसको वध करनेके लिये मैंने तुमसे पहले इच्छा की है।"

अर्जुनने, महादेवजीके कथनकी कुछ भी परवा न कर, उस शूकरपर बाण छोड़ दिया। उधर किरात-वेशधारी शंकरने भी, उसी समय शूकरको लक्ष्यकर, वज्रके समान अति कठोर एक बाण मारा। अर्जुन और महादेवके चलाये हुए दोनों बाण, एकही साथ, उस वराहको जा लगे। जैसे पर्वतपर एकही समय मेघ गर्जन तथा बिजलीकी गड़गड़ाहट होती है, वैसेही उस समय, अर्जुन और

महादेवके बाणोंके एक साथ छूटनेसे, महा भीषण शब्द हुआ। साथही उस शूकरने बाणोंसे विद्ध हो, दानव-रूप धारणकर, प्राण-परित्याग कर दिया।

इसके बाद अर्जुनने किरात-वेशधारी शङ्करसे पूछा,—"तुम कौन हो और इस निर्जन वनमें स्त्रियोंके साथ क्यों घूम रहे हो? तुम्हें इस घोर वनमें अकेले घूमते हुए डर नहीं लगता? ख़ैर, पहले यह बताओ, कि मेरे शिकारपर तुमने बाण क्यों चलाया? तुह्मारी यह चेष्टा नियम-विरुद्ध है। अतएव मैं तुम्हें उस चेष्टाका दण्ड दूँगा। तुम मेरे आगेसे आज किसी प्रकार भी जीवित छुटकारा न पासकोगे। तुमने आज मेरे साथ जैसा व्यवहार किया है, वह मृगया-धर्मके एकदम विरुद्ध है। इसलिये मैं आज तुम्हें बिना मारे कदापि नहीं छोड़ूँगा।"

किरातने कहा,—"हमारे वन-वासके लिये तुम न डरो। हम लोग वन-वासी हैं। हमारे लिये यह जंगलकी भूमिही उपयुक्त है। परन्तु यह तो कहो, कि तुम इस भयङ्कर वनमें किस लिये निवासकर रहे हो? हमलोग तो वन-जन्तुओंसे पूर्ण स्थानोंमेंही अपना जीवन बिताते हैं; परन्तु तुम सुख भोगने लायक होकर भी इस जनशून्य वनमें क्यों विचरण करते हो?"

अर्जुनने कहा,—"मैं अपने गाण्डीव-धनुष और अग्नि-समान प्रचण्ड बाणोंके बलपर इस घोर वनमें वास करता हूँ। देखो, यह राक्षस वराहका रूप धारण कर मेरे विनाशके लिये आया था परन्तु मैंने इसे एकही बाणसे मार गिराया।"

भीलने कहा,—"तू झूठ बोलता है। यह राक्षस-रूपी वराह मेरेही बाणसे मरा है। इसे मारनेका मैंने पहलेही विचार कर लिया था। तुझसे पहलेही मैं इसे अपना लक्ष्य बना चुका था।

मूर्ख ! तुझे मिथ्या बोलनेमें ज़रा भी भय नहीं होता ? निःसन्देह तुझे अपने बलका बड़ा घमण्ड है। तभी तो तू इतना अकड़कर बोल रहा है। आज तू मेरे हाथसे जीवित नहीं जा सकता। ले अब सावधान होकर मेरे बाणोंका मुकाबिला कर।"

इतना सुनतेही अर्जुनको महाक्रोध चढ़ आया। उन्होंने किरातपर दनादन बाण छोड़ना आरम्भ कर दिया। यह देख किरातने हँसकर कहा,—"अरे मूर्ख! इन बाणोंसे मेरा कुछ न बिगड़ सकेगा। तू मुझपर मर्मबेधी बाण छोड़।"

ऐसा कह किरातने भी बाण छोड़ना आरम्भ कर दिया। शिव और अर्जुन महा भयानक रूप धारणकर, एक दूसरेपर, तीखे तीरों-की वर्षा करने लगे। कुछ समय तक भयानक युद्ध होता रहा। अर्जुन लहूलोहान हो गये, परन्तु किरात-वेशी शङ्कर, अक्षय शरीरसे, अचल-अटल खड़े रहे। अर्जुन अपने बाणोंको इस प्रकार विफल होते देख, महान् आश्चर्य्य करने लगे। उनके मनमें रह-रहकर ये प्रश्न उठने लगे:—

"यह भील कौन है ? स्वयम् शङ्कर तो नहीं हैं ? अथवा कोई देव या असुर तो किरात-वेश धारणकर मुझसे लड़ने नहीं आया ? सिवा महादेवके किसकी सामर्थ्य है, जो इस प्रकार अचलभाव और अक्षय शरीरसे, मेरे बाणोंके सामने, ठहर सके ! परन्तु यह भील यक्ष हो या राक्षस ; कोई भी क्यों न हो ; मैं इसे, अपने अमोघ अस्त्रों द्वारा, आज अवश्यही यमलोकका अतिथि बनाऊँगा ?"

इतना सोचकर अर्जुनने अनेक दिव्य बाण भगवान् शंकरपर छोड़े। शंकरने भी, जिस तरह पर्वत ओलोंकी वर्षाको सहता है, उसी तरह अचल चित्तसे उन तीरोंको सह लिया। अर्जुनकी इस बाण-वर्षासे, थोड़ी देरमेंही, उनका तरकस खाली हो गया। अपने

बाणोंको ख़त्म होते देख, अर्जुनको बड़ा आश्चर्य्य और दुःख हुआ। उनका हृदय एक अनिश्चित आशंकासे काँप उठा। जिन अग्निदेवने खाण्डव-वनको जलाते समय, उन्हें दो अक्षय तूणीर दिये थे, उनको याद कर वे विचारने लगे,—"ओह! मेरे सब बाण समाप्त होगये! अब मैं शत्रुपर किसके सहारे आक्रमण करूँ? यह भील कौन है? इसने मेरे सारे बाण कैसे नष्ट कर दिये? कुछ भी हो, अब मैं अपनी पैनी धनुकोटि द्वारा इस भीलको मारूँगा।"

ऐसा विचारकर, अर्जुनने, शङ्करको धनुषकी नोकसे मारना आरम्भ किया। फिर उनके गलेमें अपना धनुष डालकर, बलपूर्वक खींचा और घूसोंसे बारम्बार मारना शुरू कर दिया। किन्तु क्षणभरमेंही शङ्करने बलपूर्वक अर्जुनका प्रिय गाण्डीव-धनुष, उनसे छीन लिया! यह देख अर्जुन मारे गुस्सेके तलमला उठे। उन्होंने फौरनही म्यानसे तलवार निकाल ली और महावेगसे भीलपर झपट पड़े। शत्रुके पास पहुँच, उन्होंने अत्यन्त बलपूर्वक, भीलके सिरपर प्रहार किया। किन्तु भीलपर तलवार पड़तेही, तलवारके दो टुकड़े हो गये! भीलके शरीरसे एक बूँद भी खून नहीं निकला। यह देख अर्जुनको बड़ाही आश्चर्य्य हुआ! परन्तु उन्होंने हिम्मत न हारी ओर वृक्षों तथा पत्थरोंसे युद्ध करना आरम्भकर दिया। किरात रूप शङ्करने उसेभी सह लिया। अब अर्जुनको कुछ भी नहीं सूझ पड़ा। हारकर वे महादेवको घूँसोंसे मारने लगे। तब महादेवने भी अर्जुनको घूँसोंसे मारना आरम्भ कर दिया। इस तरह दोनोंके मुष्टि-प्रहारसे, बड़े ज़ोरसे 'धमाधम' शब्द होने लगा। इन दोनोंका यह युद्ध, वृत्रासुर और इन्द्रके समान, अत्यन्तही भयङ्कर हुआ। मौक़ा पातेही अर्जुनने किरातको छातीका एक भयङ्कर धक्का दिया। बलवान् किरातने भी प्रत्युत्तर-रूपमें अर्जुनको छातीसे

धक्का दिया। धक्का लगतेही महावीर अर्जुन, बेहोश होकर, पृथ्वीपर गिर पड़े!

कुछ देर बाद अर्जुनको होश आया, उस समय वे पिनाक-हस्त शङ्करका ध्यान करने लगे। अर्जुनको इस प्रकार ध्यानमें तल्लीन देख, शङ्करने, किरात-वेश त्याग, अपना असली रूप प्रकट कर, मेघ-समान गम्भीर स्वरमें कहा,—"अर्जुन! मैं तुम्हारे ऊपर अत्यन्त प्रसन्न हूँ। तुम्हारे समान शौर्य और धैर्य्य मैंने आजतक किसी क्षत्रियमें नहीं देखा। वीरवर! तुम्हारा तेज और पौरुष वास्तवमें अद्वितीय है! अब मैं तुम्हें दिव्यज्ञान देता हूँ, सुनो; यदि सारे देव-दानव भी तुम्हारे शत्रु हो जायें, तो तुम उन्हें भी युद्धमें, अनायासही जीत सकोगे; क्योंकि मैं तुम्हें एक परम-दिव्यास्त्र प्रदान करूँगा।"

यह सुन अर्जुनने, भूमिपर घुटने टेक, महादेवके चरणोंमें, मस्तक झुका दिया और कहा,—"हे कपर्द्दिन्! हे नीलकण्ठ! मैं आपको सब देवताओंका स्वामी और सर्व पूज्य समझता हूँ। आप मेरे, अज्ञानसे किये हुए, समस्त अपराधोंको क्षमा कीजिये। मैं आपके दर्शनोंकी लालसासेही, हिमालयपर, तप करने आया हूँ। मैंने, अज्ञान और दुःसाहससे, जो आपसे युद्ध किया है; उसे आप मेरा अपराध न समझिये।"

शङ्करने अर्जुनकी बाँह पकड़कर हँसते हुए कहा,—"वत्स मैं तुम्हें पहलेही क्षमा कर चुका हूँ। पूर्वजन्ममें तुमने ऋषि होकर, बदरिकाश्रममें, वर्षों तक तपस्या की थी। तुम और कृष्ण इस पृथ्वीपर महान् पुरुष हो। पूर्वजन्ममें, इन्द्रके अभिषेकके समय, तुम दोनोंने जिस, मेघ-समान गड़गड़ाते हुए, धनुषको लेकर, दानवोंका निवारण किया था, यह वही गाण्डीव-धनुष है। यह

तुम्हारेही हाथोंमें शोभा पाता है, अतएव इसे लो। मैंने इसे मायाके बलसे छीन लिया था। ये दोनों तूणीर भी तुम्हारेही योग्य हैं। ये फिर अक्षय होंगे और तुम्हारा शरीर क्षत-शून्य हो जायेगा। तुम सच्चे पराक्रमी हो। मैं तुमपर अत्यन्त प्रसन्न हूँ। अतः अब तुम मुझसे इच्छित वरकी याचना करो।"

अर्जुनने हाथ जोड़कर कहा,—"भगवन्! यदि आप प्रसन्न हैं, तो मुझे, जो मैं माँगूँ वही वर प्रदान कीजिये। आपके पास पाशुपत नामक एक महा भयङ्कर रौद्र अस्त्र है। वह प्रलयके समय सारे संसारका विनाश करता है। उसके द्वारा भीष्म, द्रोण, कर्ण और कृप—सब, युद्धके समय, अनायास हराये जासकते हैं। उससे भूत, प्रेत, पिशाच, देव, गन्धर्व और राक्षसोंको, संग्राममें पराजित किया जा सकता है और उसको हाथमें लेतेही उसमेंसे हजारों शूल, हजारों गदा और सर्प जैसे लाखों बाण उत्पन्न होते हैं। स्वामिन्! मैं उसी दारुण, दिव्य पाशुपतास्त्रकी आपसे भिक्षा माँगता हूँ। मेरी इच्छा है, कि युद्धमें भीष्म, द्रोण, कृप और सदा कटुभाषी सूत-पुत्र कर्णको जीतूँ। अतएव विना पाशुपत अस्त्रके पाये, मैं अपनी इच्छा पूर्ण नहीं कर सकता।"

शङ्करनें कहा,—"वत्स! जिस अस्त्रकी तुमने इच्छा की है, उसे धारण करने योग्य इस त्रिलोकीमें केवल तुम्हीं हो, इसलिये मैं तुम्हें अभी उसकी धारण, मोचन और संहार-विधि बताये देता हूँ। इस अस्त्रका प्रयोग इन्द्र, यम, वरुण, कुवेर और वायु आदि भी नहीं जानते। पार्थ! तुम इस अस्त्रको सहसा किसीपर मत चलाना; क्योंकि इसको वीर्यहीन मनुष्यपर छोड़ देनेसे, सारा जगत् विनष्ट हो जायेगा। यदि मन-ही-मन संकल्पकर और शत्रुको आँखसे देख, सावधान हो, धनुषपर

चढ़ाकर, यह अस्त्र चलाया जायेगा, तो वह कदापि नहीं बच सकेगा।"

अर्जुनने यह बात सुन, पवित्र-मन हो, महादेवके पास जाकर कहा,—"भगवन्! अब अपने इस शिष्यको अस्त्र-विषयक उपदेश प्रदान कीजिये।"

यह सुन, शङ्करने अर्जुनको रहस्य और उपसंहार सहित, उस अस्त्र सबन्धी विद्याका उपदेश किया। अर्जुनने प्रसन्नता-पूर्वक उसे ग्रहण किया। यम-दण्ड-समान वह अस्त्र, जिस प्रकार महादेवके पास शोभा पाता था, उसी प्रकार अब अर्जुनके हाथमें भी शोभा पाने लगा! अनन्तर शिवने कहा,—"अर्जुन! अब तुम स्वर्ग-लोकको जाओ; वहाँसे तुम इन्द्रके द्वारा विविध, उत्तमोत्तम अस्त्र-शस्त्र लाभ कर सकोगे।"

इतना कह, शङ्करजी, पार्वती सहित, वहाँसे अन्तर्धान हो गये। अर्जुन चकित होकर वहीं खड़े रहे। अर्जुनके हर्षका पारावार नहीं रहा। वे अब अपने शत्रुओंको मरा हुआही समझने लगे।

जब शङ्कर चले गये और अर्जुन वहीं खड़े-खड़े कुछ सोचने लगे, तब उसी समय वैदूर्यमणिके समान तेजोमय, जलाधिपति श्रीमान् वरुणदेवने अर्जुनके पास आकर कहा,—"वीरचूड़ामणि! तुम क्षत्रिय-कुलमें, सूर्य-समान, अमित तेजस्वी और क्षात्र-धर्म-परायण हो। मैं वरुण हूँ: तुम मेरे इस अनिवार्य अस्त्र पाश-समूहको ग्रहण करो। मैं तुम्हें प्रसन्नता पूर्वक यह अस्त्र प्रदान करता हूँ। मैंने इस अस्त्रसे हज़ारों प्रकाण्ड-शरीर दानवोंको बाँधा है! जबतक यह तुम्हारे पास है, तबतक यम भी तुम्हें नहीं जीत सकते! जब तुम इसे लेकर लड़ाईके मैदानमें विचरण करोगे, तब तुम्हारा एक भी शत्रु नहीं बच सकेगा। यदि तुम

चाहोगे, तो इस पाशके बलसे, भूमण्डल भरको क्षत्रिय-हीन कर सकोगे।"

यह सुनकर, अर्जुनने प्रसन्न-मनसे वरुणदेवके दिये वरुणास्त्रको, नत मस्तक हो ग्रहण किया। वरुणके चले जानेपर यक्षोंको साथ लिये, सुवर्ण देहधारी, परम रूपवान्, धनपति कुवेरने, अर्जुनके पास आकर कहा,—"वीर पाण्डव! मुझे आज तुमसे मिलकर परम आनन्द होता है। पूर्वजन्ममें तुमने हमलोगोंके साथ उग्रतप किया था; अतएव तुम हमारे परम मित्र हो; लो, यह 'अन्तर्द्धान' नामक मेरा परम प्रिय अस्त्र, तुम भेंट-रूपमें ग्रहण करो। इससे तुम, अजेय मनुष्योंके अतिरिक्त, देव-दानवोंको भी परास्त कर सकोगे। इस शत्रु-विनाशक अस्त्र-द्वारा तुम धृतराष्ट्रके पुत्र दुर्योधनकी सारी सेनाको भस्म कर सकोगे। यह तुम्हारे तेज और बलकी वृद्धि करेगा। भगवान् शङ्करने इसी अस्त्र-द्वारा त्रिपुर नामक बलवान् राक्षसको मारा था। मैं केवल तुम्हेंही इसके धारण करने योग्य समझकर, देता हूँ। इसे सहर्ष स्वीकार करो।"

अर्जुनने कृतज्ञता प्रकट करते हुए, आदर सहित, वह अस्त्र, विधिपूर्वक, कुवेरसे ले लिया। अर्जुनको अस्त्र-प्रदान कर कुवेर वहाँसे चले गये। थोड़ी देर बाद प्रतापवान्, सर्वप्राणिसंहारक, दण्डधर स्वयं धर्मराज वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने भी अर्जुनसे कहा,—"वीरवर! सुनो, आज हम सब लोकपाल तुम्हारे पास आये हैं। तुम मनुष्योंमें महा बलवान् हो। और की तो बातही क्या, तुम महा वीर्य्यवान्, अपने पितामह भीष्म और जगत्-प्रसिद्ध शस्त्राचार्य्य, अपने गुरु, द्रोणको भी रण-क्षेत्रमें हरा सकोगे। वह अत्यन्त बलवान् कर्ण भी, जो सदा तुमसे स्पर्द्धा किया करता है, तुम्हारे हाथसे मारा जायेगा। देवताओं और राक्षसोंके अंशसे

जिन्होंने नर-लोकमें जन्म लिया है, वे भी तुम्हारे सामने युद्धमें जीवित नहीं बचेंगे। तुमने युद्धमें शङ्करको भी तुष्ट किया है, इसलिये यह स्पष्ट मालूम होता है, कि तुम कृष्णकी सहायतासे, इस पृथ्वीका बोझ अवश्य हलका करोगे। तुम मुझसे यह अनिवार्य दण्डास्त्र ग्रहण करो। इसके द्वारा तुम अनेक बड़े-बड़े कठिन काम सहजही सम्पन्न कर सकोगे।"

अर्जुनने धर्मराजको प्रणामकर विधि-पूर्वक उस दण्डको ग्रहण किया। साथही धर्मराज आशीर्वाद दे अन्तर्धान होगये।

इन्द्र-लोकमें अर्जुन

इस प्रकार अर्जुन जब अनेक शस्त्रास्त्र प्राप्त कर चुके, तब देवराज इन्द्र, देवी शची सहित, अपने सुप्रसिद्ध ऐरावत हाथीपर चढ़कर, अर्जुनके पास आये और कहने लगे :—

"अर्जुन! तुम्हें देवताओंके अनेकानेक आवश्यक कार्य करने हैं, इसलिये तुम्हें इन्द्र-लोकमें चलना पड़ेगा। मैं अब स्वर्गकी ओर जाता हूँ। तुम्हारे लिये मेरा सारथि, मातलि, एक रथ लिये आ रहा है। उसपर आरूढ़ होकर तुम मेरे लोकमें चले आना। मैं तुम्हें सब अस्त्र वहीं प्रदान करूँगा।"

इतना कहकर इन्द्र वहाँसे चल दिये। थोड़ी देर बादही बादलोंको हटाता, मेघ-गर्जन-समान गम्भीर-ध्वनिसे समस्त दिशाओंको गुँजाता हुआ, एक अत्यन्त प्रभान्वित रथ लिये, मातलि वहाँ आ पहुँचा। खड्ग, शक्ति, गदा, तोमर, प्रास, विद्युत् और वायु-स्फोटक चक्र-युक्त अश्मवर्षण यन्त्र, जिससे पत्थरके गोले बरसाये जाते थे, आदि असंख्य अस्त्र-शस्त्र-युक्त वह सुप्रसिद्ध रथ, इतनी शीघ्रतासे चलता था, कि उसकी गति किसीको दिखाईही

नहीं देती थी ! उसके ऊपरी भागमें 'वैजयन्त' नामकी ध्वजा फहरा रही थी। मातलिने अर्जुनको प्रणामकर कहा,—"महाबाहो ! देवराज इन्द्र आपसे भेंट करना चाहते हैं। उनकी, आपसे मिलनेकी प्रबल इच्छा है। इसलिये आप इस रथपर शीघ्रही सवार हो, इन्द्रलोकको पधारिये।"

यह सुन और परमात्माका नाम स्मरणकर, अर्जुन उस रथपर सवार हो गये। सवार होनेके साथही रथ, वायुयानकी भाँति बड़े वेगसे ऊपर उठा और देखते-ही-देखते महा शब्द करता हुआ, अनेक ग्रह-उपग्रहों तथा विविध लोकोंको पारकर, अन्तमें इन्द्रकी राजधानी अमरावतीमें जा पहुँचा ! यह स्थान पुण्यशील पुरुषोंकोही प्राप्त होता है। झूठे व्यभिचारी, शराबी, जुआरी, वेद-निन्दक और गुरु-द्रोही पुरुष यहाँ नहीं आ सकते।

यहाँ देव, सिद्ध, गन्धर्व और महर्षिगणोंने अर्जुनका स्वागत किया। गन्धर्व और अप्सराएँ अर्जुनका यश-गान करने लगीं। पश्चात् अर्जुनने देवेन्द्रसे भेंट की और उनके चरणोंमें मस्तक झुकाया। इन्द्रने अर्जुनके दोनों हाथ पकड़कर उन्हें उठाया और अपनी गोदमें बिठाकर उनका सिर सूँघा ! पश्चात् इन्द्रने अपने गन्ध-युक्त, वज्रचिह्नोंसे अङ्कित, हाथोंसे अर्जुनके मुखका स्पर्श किया और फिर वे अर्जुनकी दीर्घ भुजाओंको टटोलते हुए बड़े प्रेमसे उनकी तरफ देखने लगे ! गन्धर्वगण सामगान करने लगे ! घृताची, मेनका, रम्भा आदि अप्सराएँ, पयोधर-कम्पन तथा भाव-माधुर्य द्वारा सबका मन मुग्ध करती हुई, नाचने लगीं।

देवेन्द्रकी इच्छा देख, थोड़ी देर बाद, देव और गन्धर्वोंने पाद्य-अर्घ्यद्वारा अर्जुनकी पूजा की। पश्चात् अर्जुनने प्रसन्न-मनसे इन्द्र-सदनमें प्रवेश किया। इस प्रकार अर्जुन इन्द्र-लोकमें सम्मा-

नित हो, महास्त्रोंको चलाने आदिकी अनेक विद्याएँ सीखने लगे। अर्जुनने इन्द्रसे वज्रास्त्र और मेघ तथा मयूर-लक्षणाक्रान्त महाशब्द उत्पन्न करनेवाली कई बिजलियाँ प्राप्त कीं! ऐन्द्रास्त्र प्राप्त कर अर्जुनको अपने भाइयोंकी याद आने लगी और वे उनसे मिलनेके लिये व्याकुल होने लगे। परन्तु इन्द्रके विशेष आग्रहसे उन्हें पाँच वर्षतक इन्द्र-लोकमेंही रहना पड़ा।

एक दिन इन्द्रने अर्जुनसे कहा,—"पार्थ! तुम चित्रसेन गन्धर्वसे नाचना और गाना भी सीख लो। यह स्वर्गीय विद्या तुम, इतनी उत्तमतासे, मर्त्यलोकमें कदापि न सीख सकोगे। आगे चलकर यह विद्या तुम्हारे बड़े काम आयेगी। इसलिये, इसका सीखना तुम्हारे लिये अत्यन्त आवश्यक है।"

यह कह, इन्द्रने चित्रसेनसे अर्जुनकी मित्रता करा दी। अर्जुनने यह विद्या थोड़ेही दिनोंमें खूब अच्छी तरह सीख ली।

अर्जुन-उर्व्वशी

एक दिन देवराज इन्द्रने अर्जुनको उर्व्वशी नाम्नी अप्सरापर आसक्त समझ, गन्धर्व-राज चित्रसेनको एकान्तमें बुलाकर कहा,—"आज तुम मेरे कहनेसे उर्व्वशीके यहाँ जाओ और उससे कह दो, कि आज रात्रिको अर्जुनकी सेवामें उपस्थित हो। तुमने जिस प्रकार मेरे कहनेसे अर्जुनको नृत्य और गानमें निपुण बनाया है, उसी तरह उन्हें स्त्री-संसर्ग आदि विषयोंमें भी निपुण कर दो।"

इन्द्रकी आज्ञा पाकर, चित्रसेन उर्व्वशीके यहाँ पहुँचे। उन्होंने, अर्जुनके बल-पौरुषकी प्रशंसाकर, उसे रात्रिको अर्जुनकी सेवामें उपस्थित होनेको कहा। उर्व्वशीने देवराजकी आज्ञा शिरोधार्य्य की। इसके बाद चित्रसेन अपने घर चले आये। अर्जुनके शौर्य्य-



"मातः ! जो तुम कह रही हो, उसे मैं सुनना भी पाप समझता हूँ ।"

Burman Press, Calcutta.

वीर्य्यकी प्रशंसा सुन उर्व्वशी, काम पीड़िता हो, उत्तम वस्त्रालङ्कार तथा पुष्प-हार आदि पहन, यथासमय अर्जुनके भवनमें जापहुँची।

अर्जुन रात्रिके समय उर्व्वशीको अपने भवनमें आते देख, आसनसे उठ खड़े हुए। उन्होंने पूज्योंकी भाँति उर्व्वशीका सम्मान कर, लज्जावनत नेत्रोंसे कहा,—

"देवि! मैं आपको प्रणाम करता हूँ। कहिये, आपकी क्या इच्छा है? मैं, आपका सेवक, उसे पूर्ण करनेको प्रस्तुत हूँ।"

उर्व्वशी, अर्जुनकी ऐसी बातें सुन, कुछ समयतक चुपचाप खड़ी रही। फिर उसने गन्धर्व-राज चित्रसेनकी बातें कह सुनायीं और कहा,—"वीराग्रणी! जब हम सब अप्सराएँ इन्द्र-सभामें नाच-गा रही थीं, तब आपकी दृष्टि मुझपरही विशेष थी। यही कारण है, कि इन्द्र महाराजने, चित्रसेनसे कहकर, मुझे आपकी सेवामें पहुँचनेकी आज्ञा दी है। मैं भी काम-पीड़िता हो, आपकी कृपा-भिक्षा प्राप्त करनेके लिये, यहाँ आयी हूँ।"

अर्जुनने उर्व्वशीके मुँहसे ऐसी बातें सुन, अत्यन्त लज्जित होकर, कहा,—"मातः! जो तुम कह रही हो, उसे मैं सुनना भी पाप समझता हूँ। कारण, तुम मेरी गुरु-पत्नीके तुल्य पूज्या हो। मैं सभामें तुम्हें विशेषतः इस दृष्टिसे देखता था, कि यही देवी पौरव-वंशकी जननी हैं। आप मेरी वंश-वर्द्धिनी माता हैं। मेरे बड़ोंकी अपेक्षा भी बड़ी हैं; इसलिये आप मुझसे किसी अन्य प्रकारकी इच्छा न कीजिये।"

उर्व्वशीने कहा,—"हम अप्सराएँ किसीकी भी पत्नी नहीं होतीं। मैं इस समय मन्मथके तापसे संतप्ता और पीड़िता हूँ। क्या आपको मुझे इस प्रकार परित्याग करना उचित है? मैं आपके चरणोंकी दासी हूँ।"

अर्जुन बोले,—"देवि ! कृपाकर पहले मेरी बात सुन लें, फिर जो आप उचित समझें, कहें। मेरे लिये जैसी माता कुन्ती, माद्री और शची देवी हैं, वैसीही आप भी हैं। मैं आपके चरणोंको छूकर प्रार्थना करता हूं, कि आप मुझे अपना पुत्रही समझें।"

मनोज-सन्तप्ता उर्व्वशीने, अर्जुनके मुखसे ऐसी निराशापूर्ण बातें सुन, क्रुद्ध हो, अर्जुनको शाप दे दिया! वह बोली,—"अर्जुन! मैं तुम्हारे धर्म-पिता इन्द्रकी आज्ञासे तुम्हारे पास आयी थी। विशेषतः मैं इस समय कामके वशीभूत हूँ। ऐसी अवस्थामें तुमने मेरी इच्छा पूरी न की, इसलिये तुम नपुंसक-रूपमें प्रसिद्ध, मान हीन और नाचनेवाले बनकर, स्त्रियोंमें, औरतकी भाँति रहोगे!"

इसके बाद उर्व्वशी होंठ कँपाती और ठण्डी साँसें लेती हुई, अपने घर लौट गयी।

अनन्तर अर्जुनने उक्त वृत्तान्त अपने मित्र चित्रसेनसे कहा। चित्र-सेनने ये सब बातें इन्द्रसे कह सुनायीं। इन्द्रने, अर्जुनको एकान्तमें बुला, उनकी बड़ी प्रशंसा करते हुए कहा,—

"धन्य है तुम्हारी माताको जिसकी कोखसे तुम जैसे सुपुत्र उत्पन्न हुए! उर्व्वशीका यह शाप आगे चलकर तुम्हें काम देगा। इसलिये तुम उसकी चिन्ता न करो। जब तुम मर्त्य-लोकमें तेरहवें वर्ष अज्ञात-वास करोगे, तब तुम उर्व्वशीके शापको भोगते हुए, उस वर्षको सानन्द बिता दोगे। यद्यपि तुम उस एक वर्ष-तक, पुरुषत्व-हीन, हिंजड़ेके रूपमें रहोगे, किन्तु मेरे वर-प्रभावसे अपना बल-वीर्य्य और पुरुषत्व पुनः प्राप्त करोगे।"

भाइयोंको संदेसा

एक दिन लोमश ऋषि भ्रमण करते हुए इन्द्र-लोकमें आ पहुँचे,

उन्होंने अर्जुनको, इन्द्रके आधे आसनपर बैठा देख, आश्चर्ययुक्त होकर, उनसे इसका कारण पूछा। तब इन्द्रने अर्जुनके बल-वीर्य्यकी प्रशंसाकर ऋषिका सन्देह दूर किया और कहा,—"महर्षे! आप मेरे कहनेसे मर्त्यलोकमें जाइये और काम्यक वनमें पहुँच, महाराज युधिष्ठिरसे कह दीजिये, कि आप अर्जुनके लिये विशेष चिन्ता न करें। वे अस्त्र-विद्याके पारदर्शी हो, शीघ्रही पृथ्वीपर लौटेंगे। अर्जुन नृत्य और गायन-विद्यामें भी प्रवीणता प्राप्त कर चुके हैं। अतएव जबतक वे लौटें, तबतक आप भी आस-पासके स्थानोंमें, अपने भाइयों सहित, भ्रमणकर आयें।' हे ऋषिसत्तम! आप तपोबल-युक्त हैं, इसलिये आप उनकी रक्षा करनेमें सब तरहसे योग्य हैं। पहाड़, जङ्गल और कन्दराओंमें राक्षस आदि रहते हैं। अतएव आप, उन सबसे, उनकी रक्षा करनेकी कृपा करें।"

देवराज इन्द्रके इस प्रकार कह चुकनेपर, महात्मा लोमशसे, अर्जुनने कहा,—"भगवन्! आप भाइयों सहित महाराजा युधिष्ठिरकी रक्षा कीजियेगा और कृपाकर ऐसा प्रयत्न कीजियेगा, कि जिससे वे सुरक्षित रहकर तीर्थ-यात्रा करें और ब्राह्मणोंको मनमाना दान दे सकें।"

लोमश ऋषि इस बातको स्वीकारकर मर्त्य-लोककी तरफ चल पड़े। वे शीघ्रही वहाँ आगये, जहाँ युधिष्ठिर, अपने भाइयों सहित, वनमें रहते थे। ऋषिने अर्जुनकी कुशलता और अस्त्र-प्राप्तिका हाल पाण्डवोंको कह सुनाया। अर्जुनकी कुशलताका समाचार पाकर युधिष्ठिर आदि सब भाई अत्यन्त प्रसन्न हुए। अन्तमें लोमश-ऋषि सबको तीर्थाटनके लिये अपने साथ ले गये।

पाण्डव तीर्थ-यात्रासे निपटकर, गन्धमादन पर्वतपर, अर्जुनकी मार्ग-प्रतीक्षा करते हुए कुछ कालके लिये ठहर गये।

दानव-संहार

जब अर्जुन इन्द्रसे सब विद्याएँ प्राप्त कर चुके, तब इन्द्रने अर्जुनसे गुरु-दक्षिणा माँगी। अर्जुनने हाथ जोड़, नम्रता-पूर्वक कहा,—"महाराज! कहिये, गुरु-दक्षिणामें आप मुझसे किस बातकी इच्छा करते हैं? आप जो आज्ञा करेंगे, वही मैं आपकी सेवामें अर्पण करनेको प्रस्तुत हूँ।"

इन्द्र बोले,—"वत्स अर्जुन! तुम 'निवात कवच' नामक तीन करोड़ राक्षसोंका वधकर, हमलोगोंको सुखी बनाओ। बस, गुरु-दक्षिणामें मैं तुमसे यही चाहता हूँ।"

यह कह, इन्द्रने अर्जुनको अपना दिव्य रथ और मातलि नामक सारथि दिया। पश्चात् इन्द्रने, अपने हाथोंसे, अर्जुनके मस्तकपर उत्तम मुकुट बाँध दिया और अपने समान सभी अङ्ग-भूषण पहना दिये; अभेद्यकवच कस दिया तथा गाण्डीवमें उत्तम और दृढ़ प्रत्यंचा चढ़ा दी। चलते समय देवताओंने अर्जुनको अनेकानेक आशीर्वाद दिये।

यहाँसे चलकर अर्जुन, पहाड़, जङ्गल और समुद्र-पार करते हुए पाताल-लोकमें पहुँचे। पातालमेंही दैत्योंका भी निवास है, अतएव उस दैत्यपुरीमें पहुँचकर उन्होंने दैत्योंको लड़ाईके लिये ललकारा। राक्षसगण, अर्जुनको देखतेही, आत्म-रक्षाके लिये, अस्त्र ग्रहणकर, घबराये हुए इधर-उधर भागने लगे और उन्होंने अपने नगरके सारे द्वार बन्द कर दिये। यह देख, अर्जुनने अपना शङ्ख फूँका। शङ्ख-ध्वनिसे दैत्योंके हृदयोंमें स्फूर्त्तिका सञ्चार हुआ और वे अगणित बाण बरसाते हुए अर्जुनकी ओर लपके। उस समय राक्षसोंने भयानक बाण-वर्षाकर अर्जुनको ढाँक दिया! निवात-

कवच दानवोंने, शूलपट्टिश द्वारा, उनपर कितनेही घोर प्रहार किये। अर्जुनने भी उनमेंसे प्रत्येकको, दश-दश बाण मारकर, वहीं लिटा दिया। यह देख, राक्षसोंने, अपने दिव्यास्त्र और माया द्वारा, इस बार विलक्षण युद्ध करना आरम्भ किया। चारों ओरसे बड़े-बड़े पत्थरोंकी भीषण वृष्टि होने लगी। उस समय अर्जुनने महेन्द्रास्त्र द्वारा उनका निवारण कर अपनी रक्षा की।

राक्षसोंने पाषाण-वर्षाको विफल होते देख, बड़े ज़ोरसे जल बरसाना शुरू कर दिया ; परन्तु अर्जुनने शोषणास्त्र द्वारा उसे भी सुखा दिया ! तब दानवोंने अग्नि-वर्षा की, किन्तु अर्जुनने वारुणास्त्र द्वारा बात-की-बातमें उसे भी बुझा दिया ! राक्षसोंके इस भयानक माया-युद्धसे, अर्जुन और मातलि, दोनोंही घबरा गये। अनन्तर अर्जुनने क्रोधमें आ, गाण्डीवपर वज्रास्त्र चढ़ाकर, सारे दानवोंका संहार कर दिया ! इस प्रकार उस पुरीको दानव-शून्य कर अर्जुन फिर देव-लोकमें लौट आये।

इन्द्रने प्रसन्न चित्त हो अर्जुनसे कहा,—"अर्जुन ! तुमने मेरे शत्रुओंका नाशकर, मेरा परम उपकार किया है। मैं तुम्हारी इस गुरु-दक्षिणासे परम प्रसन्न हो, आशीर्वाद देता हूँ, कि—तुम सर्व-लोक-विजयी होओ।"

कौरव-उद्धार

जब अर्जुनको इन्द्र-लोकमें रहते पूरे पाँच वर्ष बीत गये, तब इन्द्रसे विदा लेकर वे, एक शीघ्रगामी रथ द्वारा, गन्धमादन पर्वतपर आ पहुँचे। यहाँ अपने भाइयोंसे मिलकर उन्हें अत्यन्त प्रसन्नता हुई। इन्द्रने जो आभूषण द्रौपदीके लिये दिये थे, वे उन्होंने द्रौपदीकी भेट कर दिये। फिर उन्होंने अपने जानेसे लेकर तपस्या

करने और देव-लोक जानेतकका सारा वृत्तान्त कह सुनाया। इसके बाद उन्होंने अपने सब दिव्यास्त्र भी दिखाये।

वन-वासका ग्यारहवाँ वर्ष आरम्भ होतेही, यहाँसे चलकर सब लोग, द्वैत-वनमें, सरस्वतीके किनारे पहुँचे। यहाँ उन्होंने प्रायः दो मास निवास किया और फिर वे काम्यक-वनमें चले गये।

काम्यक वनमें पाण्डवोंके आनेकी ख़बर सुनकर श्रीकृष्ण उनसे मिलने आये। कुछ देर बाद महर्षि मार्कण्डेय और देवर्षि नारदजी भी वहाँ आ पहुँचे। इस प्रकार साधु-समाजको एकत्रित हुआ देख, पाण्डवोंने बड़ाही हर्ष मनाया और नित्य, जीव, कर्म तथा ईश्वर सम्बन्धी नाना विषयोंपर वार्तालाप किये।

जब पाण्डवोंके काम्यक-वनमें आनेका समाचार दुर्योधनको मालूम हुआ, तब वह मृगयाका झूठा बहानाकर और धृतराष्ट्रसे उसके लिये आज्ञा ले, दलबल-सहित, वहाँ जा पहुँचा। पर उसे शिकार खेलना तो था नहीं, वरन् पाण्डवोंको कुढ़ाना और उनका जी दुखाना था। यही कारण था, जो वह यहाँ अपने इष्ट-मित्र और स्त्रियों सहित आया था। किन्तु "मेरे मन कछु और है, विधनाके मन और" अतएव यहाँ आकर उसे बेतरह मुँहकी खानी पड़ी।

हाँ, तो जब कौरव द्वैत-वनके निकट आये, तब उन्होंने अपने नौकरोंको, वहाँके सरोवरके पास, तम्बू गाड़नेकी आज्ञा दी। परन्तु वहाँ अर्जुनके मित्र, गन्धर्व-राज चित्रसेन, विहार कर रहे थे। गन्धर्वोंने, दुर्योधनके सेवकोंको, इस अनुचित कार्रवाईके लिये रोका; परन्तु उन्होंने न माना। इसलिये दोनों ओरसे लड़ाई ठन गयी और धीरे-धीरे उसने बड़ा भयङ्कर रूप धारण कर लिया। अन्तमें गन्धर्वोंकी मारको कर्ण आदि योद्धा न सह सके और खेत छोड़कर भाग गये! गन्धर्वोंने दुर्योधनको, उसकी

स्त्रियों और भाइयों सहित, पकड़कर क़ैद कर लिया और अपने लोकको लेचले।

यह देख, दुर्योधनके कुछ स्वामिभक्त सैनिक, पाण्डवोंकी शरण गये और उन्होंने उनसे सारा हाल कह सुनाया। तब युधिष्ठिरने, यह सोचकर, कि शरणागतकी रक्षा करना क्षत्रियों-का परम धर्म है, अर्जुनसे कहा :—

"भाई अर्जुन! जाओ, दुर्योधनादिको गन्धर्वोंके हाथसे छुड़ा लाओ। एक तो ये लोग हमारी शरण आये हैं; फिर लाख हो, आख़िर हैं तो हमारे भाई ही! उनको न छुड़ानेसे, हमारीही स्त्रियोंका अपमान है। हमलोग घरमें भलेही अलग-अलग रहें; परन्तु दूसरोंके लिये हम सदा १०५ रहेंगे। जाओ, इस कामको जल्दी कर आओ।"

यह सुन, अर्जुनने कहा,—"आपकी आज्ञा शिरोधार्य्य है; परन्तु यदि मेरे कहनेसे गन्धर्वोंने, दुर्योधनादिको नहीं छोड़ा, तो मैं निश्चय कहता हूँ, कि आज पृथ्वी अवश्य गन्धर्व-राजके रक्तको पान करेगी।"

धर्मराज वहीं रहे। शेष चारों पाण्डव, कवच आदि धारणकर, कौरवोंके रथपर चढ़, गन्धर्वोंके पीछे दौड़ पड़े। गन्धर्व भी इन्हें आते देख, सावधान हो और व्यूह बनाकर, खड़े होगये। धीरे-धीरे युद्ध भी छिड़ गया। परन्तु जब अर्जुनने देखा, कि इस तरह युद्धसे काम नहीं चलेगा, तब वे गन्धर्व-राज चित्रसेनसे बोले,—"तुम हमारे भाई, राजा दुर्योधनको उनके भाइयों और स्त्रियों सहित छोड़ दो।"

चित्रसेनने हँसकर उत्तर दिया,—"अर्जुन! हम केवल देव-राज इन्द्रकी आज्ञा मानते हैं। बिना उनके कहे, हम दुर्योधनादिको छोड़नेमें सर्वथा असमर्थ हैं।

अर्जुनने फिर कहा,—"चित्रसेन! मनुष्योंकी स्त्रियोंका स्पर्श और मनुष्योंसे युद्ध करना गन्धर्वोंका काम नहीं है। या तो तुम हमारे भाइयोंको, उनकी स्त्रियों सहित छोड़ दो, अन्यथा हमें युद्ध द्वारा, उन्हें, तुमसे छुड़ाना पड़ेगा।"

जब देखा, कि गन्धर्वगण इस बातको माननेके लिये तैयार नहीं हैं, तब अर्जुनने उन गन्धर्वोंपर तीक्ष्ण बाण छोड़े। गन्धर्वोंने भी बाणोंका उत्तर बाणोंसेही दिया। दोनों ओरसे भीषण युद्ध होने लगा। अन्तमें गन्धर्वोंने पाण्डवोंको रथ-हीन कर दिया। यह देख, अर्जुनकी क्रोधाग्नि बड़े वेगसे धधक उठी। उन्होंने दिव्या-स्त्रोंकी मारसे गन्धर्वोंके नाकों दम कर दिया और देखते-देखते दस हज़ार गन्धर्वोंको मार गिराया! गन्धर्व घबरा गये। उन्हें कुछ भी सूझ न पड़ा और वे दुर्योधनादि वीरोंको सीधे आकाशमें ले उड़े। यह देख अर्जुनने इस तरह बाण छोड़े, कि दसों दिशाओंमें बाण-ही-बाण दिखाई देने लगे! अन्तमें यह शर जाल, पक्षियोंके एक बड़े भारी पिंजरेके समान बन गया और सब गन्धर्व उसमें फँस गये।

गन्धर्वगण अपनेको अर्जुनके चङ्गुलमें फँसा देख, ऊपरसेही पाण्डवोंपर शक्ति और गदा बरसाने लगे। परन्तु अर्जुनने उन्हें, गिरनेसे पहले, शून्यमेंही छिन्न-भिन्न कर डाला और उन्हें अपने दिव्यास्त्रों द्वारा व्याकुल करने लगे। गन्धर्वोंके होश उड़ गये और वे भागनेकी चेष्टा करने लगे; परन्तु अर्जुनके बाणोंने उनका पीछा न छोड़ा।

इस प्रकार अर्जुनके बाणोंसे, अपने आत्मीय-स्वजनोंको मरते देख, गन्धर्व-राज चित्रसेन, गदा उठाकर अर्जुनपर दौड़े। पर वे अभी अर्जुनके पास आने भी न पाये थे, कि अर्जुनने उस गदाके

सात टुकड़े कर डाले! यह देख, चित्रसेनने, तिरस्करणी विद्या द्वारा, अपनेको अदृश्यकर, अर्जुनके साथ युद्ध करना आरम्भ कर दिया। उसने कई दिव्यास्त्र भी चलाये, परन्तु अर्जुनने उसके सब अस्त्रोंको बेकार कर दिया। अनन्तर अर्जुनने शब्द-भेदी बाण मार-मारकर उसके छक्के छुड़ा दिये। चित्रसेन व्याकुल हो गया। अब अर्जुनने, अपने मित्र, चित्रसेनको संग्राममें इस तरह परास्त होते देख, तरस खा, अपने छोड़े बाणोंका निवारण करना आरम्भ किया! यह देखकर भीमादिने भी अपने दौड़ते हुए रथोंके घोड़ोंको रोका और धनुष-बाण रख दिये।

तब अर्जुनने गन्धर्व-राज चित्रसेनसे हँसकर पूछा,—"मित्र! आपने किस लिये इन्हें पकड़ा है? और किस लिये आप इन लोगोंको, स्त्रियों सहित, ले जा रहे हैं?"

चित्रसेनने कहा,—"अर्जुन! आपलोग अनाथोंकी तरह वनमें रह, निरन्तर क्लेश पा रहे हैं, यह समझकर कर्ण और दुर्योधनादि आपको देखने और हँसनेके लिये यहाँ आये थे। द्रौपदीका उपहास करने और उसका जी जलानेके लिये वे अपनी स्त्रियाँ भी साथ लाये थे; ये सब बातें हमें पहलेही मालूम होगयी थीं। इसी कारण हमने इन्हें बाँध लिया है। हमलोगोंको इन्द्रने आपकी रक्षाके लिये भेजा था, इसलिये अब हम इन्हें इन्द्रके पास ले जाना चाहते हैं।"

अर्जुनने कहा,—"गन्धर्व-राज! आप यदि मेरी बात मानें, तो हमारे भाई धर्मराजके आज्ञानुसार, दुर्योधनादिको अभी छोड़ दें।"

चित्रसेनने कहा,—"अर्जुन! यह पापी सदा अभिमानही किया करता है। इसलिये हमें इसकी शेख़ीको ज़रा ठिकाने लगा देने दीजिये। इस नीचको छोड़ना कदापि उचित नहीं है। इसी

चाण्डालने सत्यसन्ध्य महाराजा युधिष्ठिर और सती-शिरोमणि महारानी द्रौपदीको ठगा है। उन्हें इस नीचकी कुटिल गतिका हाल मालूम नहीं है। अतएव आप सोच-विचारकर जो चाहें, सो करें।"

अर्जुन बड़े असमञ्जसमें पड़ गये। अन्तमें सब लोग धर्मराजके पास पहुँचे। धर्मराजने गन्धर्वोंको समझा-बुझाकर दुर्योधन आदिको, स्त्रियों सहित, छुड़ा दिया और दुर्योधनसे कहा,—"सावधान! फिर कभी ऐसे दुस्साहसका काम मत करना। अब जाओ, सुख-पूर्वक अपने भाइयों सहित आनन्द करो। मनमें किसी प्रकारका सोच-विचार न करना।"

इन्द्रने अमृत वर्षाकर मरे हुए कौरवों तथा गन्धर्वोंको पुनः जिला दिया। दुर्योधन, युधिष्ठिरको प्रणामकर, इन्द्रिय-विहीन व्यक्तिकी तरह, अपनासा मुँह लिये, चुपचाप चल दिया।

दुर्योधनकी नाक कट गयी। वह बिना मारेही मर गया। किन्तु अब कर्णकी सहायतासे उसने, पाण्डवोंकी देखा-देखी, राजसूय यज्ञ करनेका विचार किया। परन्तु कुल-पुरोहितने उसे, राजसूयका अधिकारी न बताकर, वैष्णव यज्ञ करनेकी सलाह दी। तब दुर्योधन वैष्णव यज्ञकर बड़ाही घमण्ड करने लगा। कर्णने उसे प्रसन्न करनेके लिये मूँछोंपर ताव देकर अर्जुनको बध करनेकी भीषण प्रतिज्ञा की। उसे सुन, कौरवोंके आनन्दकी सीमा न रही।

उधर, एक वर्ष आठ महीने तक काम्यक वनमें रहकर, पाण्डव लोग, ब्राह्मणों सहित, कामकारण्यमें, तृणविन्दु सरोवरके निकट जा ठहरे। यहाँ उनके समीप महर्षि व्यासका नित्य उपदेश होता रहा।

जयद्रथका मान-मर्दन

एक दिन पाँचों पाण्डव, द्रौपदीको आश्रममें अकेला छोड़कर,

जङ्गलमें मृगया करने निकल गये। थोड़ी देर बाद सिन्धुदेशका राजा 'जयद्रथ', विवाहकी इच्छासे, बड़े ठाट-बाटके साथ, शाल्व-देशको जाता हुआ, पाण्डवोंके आश्रममें आ पहुँचा।

सामनेही, बादलोंमें बिजलीकी भाँति कान्तिमयी, याज्ञसेनी, सती द्रौपदीको आश्रमके द्वारपर खड़ी देख, वह उसके रूप-लावण्यपर मुग्ध होगया। अतएव वह, दुर्दैवका प्रेरा हुआ, द्रौपदीके आश्रममें इस प्रकार घुस पड़ा, जिस प्रकार कोई भेड़िया सिंहकी शून्य कन्दरामें घुस जाता है। उसने द्रौपदीको, कितनेही लोभ-लालच दिखाकर, बहुतसी बातें कहीं, तब द्रौपदीने क्रोधमें आकर उससे तिरस्कार-पूर्वक अनेक बातें कहीं और उसके अनुचित प्रस्तावपर तनिक भी कर्णपात न किया। अन्तमें दुराचारी जयद्रथने उसे बल-पूर्वक अपने रथमें बैठा लिया और मद्रदेशकी ओर ले चला। उस समय देवी द्रौपदी, आत्मरक्षाके लिये, बेतरह चिल्लायीं। उसे सुन, पुरोहित धौम्य वहाँ आ गये; परन्तु बेचारे कर क्या सकते थे? केवल दो-चार वाक्य-बाण चलाकरही रह गये। जयद्रथ निःशङ्क भावसे रथ हाँककर चल दिया।

उसके जानेके थोड़ी देर बादही पाण्डव शिकारसे लौट आये। उन्होंने द्रौपदीकी दासीको ज़मीनपर पड़े रोते देख, उससे रोनेका कारण पूछा। तब उसने सारा वृत्तान्त ब्यौरेवार कह सुनाया। सुनतेही पाण्डव ज्यों-के-त्यों, उसी क्षण, उसी दिशामें, जिधर जयद्रथ गया था, बड़े वेगसे दौड़ पड़े। उन्होंने थोड़ीही दूरपर जयद्रथकी सेनाको जा घेरा और दूरसेही भयङ्कर बाण-वर्षा शुरू कर दी। युद्ध छिड़ गया। देखते-देखते अर्जुनने, अपने बाणोंसे, सहस्त्रों सैनिकोंको, इस लोकसे विदा कर दिया। साथही इक्ष्वाकु, त्रिगर्त और सिन्धुदेशके राजाओंको भी क्षणभरमेंही भगा

दिया। सैकड़ों हाथियोंको मार गिराया! अर्जुनके बाणोंसे क्षणभरमेंही मस्तक-हीन शरीर और शरीर-रहित मस्तक, जहाँ-तहाँ, रण-मैदानमें लुढ़कते नज़र आने लगे। इस प्रकार अपनी सेना-की दुर्द्दशा देख, जयद्रथके सारे देवता कूच कर गये। वह द्रौपदी-को छोड़, अपने प्राण ले, वहाँसे चुपचाप भाग निकला। तब अर्जुनने भीमसेनसे कहा,—"भाई! इस निरपराध सेनाने हमारा क्या नुकसान किया है, जो हम इसका बध कर रहे हैं? इस झगड़ेकी जड़, जयद्रथ तो, हमलोगोंको अँगूठा दिखा भागही गया मालूम होता है। पहले उसेही ढूँढ़ना चाहिये।"

द्रौपदीने अर्जुन और भीमसे कहा,—"यदि आप लोगोंको मेरी इच्छाके अनुकूल कार्य करना है, तो जयद्रथको अवश्य मारिये। जो शत्रु, राज्य अथवा भार्य्यापर आक्रमण करता है, उसे युद्धमें, हज़ार हाथ जोड़नेपर भी, हरगिज़ न छोड़ना चाहिये।"

परन्तु युधिष्ठिरने द्रौपदीको शान्त करते हुए भीमार्जुनसे कहा,—"भाइयो! तुम लोग जयद्रथको जीता पकड़कर मेरे पास ले आओ। मैं उसका उचित दण्ड-विधान करूँगा।"

इसकेबाद युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव और पुरोहित धौम्य—ये लोग तो द्रौपदी सहित आश्रमको लौट गये और अर्जुन तथा भीम, जयद्रथके पीछे-पीछे दौड़े। लगभग एक कोसकी दौड़के बाद जयद्रथ पकड़ा गया। सबसे पहले अर्जुनने उसके रथके घोड़े मार डाले, जिसमें वह भाग न सके; पर जयद्रथ रथसे कूद, अपने प्राण लेकर, पैदलही, बेतहासा भाग चला। यह देख, अर्जुनने जयद्रथको पुकारकर कहा,—"राजपुत्र! क्या इसी बिरतेपर तुम द्रौपदीको हरने आये थे? ठहरो, अब भागनेकी आशा छोड़ दो।"

जयद्रथने अर्जुनकी बातपर ध्यान नहीं दिया। वह अपनी प्राण-

रक्षाके लिये भागताही गया। परन्तु भला अर्जुनसे भागकर वह जा कहाँ सकता था? उसको पकड़नेके लिये भीमसेन झपटे और पुकारकर कहने लगे,—"अरे चाण्डाल! ज़रा ठहर, अब भागता कहाँ है! ले, द्रौपदीको लेजा।"

थोड़ीही देरमें अर्जुन और भीमसेनने उसे जा पकड़ा। भीमसेनने उसके बाल पकड़कर, उसे पृथ्वीपर गिरा दिया और इधर-उधर घसीटकर, उसकी हड्डी-पसलियाँ ढीली कर दीं। फिर वे उसे उठा-उठाकर बार-बार पृथ्वीपर पटकने लगे। यदि अर्जुन उन्हें युधिष्ठिरके वाक्यका स्मरण न कराते, तो भीमसेन उसके प्राण लिये बिना न छोड़ते। इतनेपर भी भीमसेनने अर्द्धचन्द्र-बाणसे उसका सिर मूँड़ दिया और उसके सिरपर दासत्व-सूचक पाँच चोटियाँ रखदीं! इस प्रकार जयद्रथका अपमान कर, उसे घसीटते हुए, वे धर्मराज युधिष्ठिरके पास ले आये। युधिष्ठिरने उसकी ऐसी दशा देख, दया करके उसे छुड़ा दिया।

जयद्रथ लज्जान्वित हो, यहाँसे सीधा तप करनेके लिये हिमालयको चला गया। वहाँ उसने महादेवजीको प्रसन्नकर, रथारूढ़ पाँचों पाण्डवोंको हरा देनेकी सामर्थ्य माँगी; परन्तु महादेवने कहा,—"केवल अर्जुनके लिये मैं तुझे वर नहीं देसकता। हाँ, बाकी चार पाण्डवोंको हरानेकी शक्ति मैं तुझे प्रदान करता हूँ। अर्जुन साक्षात् इन्द्रके अवतार हैं। उन्होंने महान् उग्र तप करके अमित बल संचय किया है। इसके अतिरिक्त पुरुष-श्रेष्ठ श्रीकृष्ण उनके रक्षक तथा सहायक हैं। अतएव वे सर्वत्र अजेय हैं। उन्हें देवगण भी नहीं जीत सकते। उन्होंने मुझे प्रसन्न करके मेरा 'पाशुपत' नामक दिव्य अस्त्र प्राप्त किया है। लोकपालोंने भी उन्हें वज्रादि कई महान् अस्त्र प्रदान किये हैं। अतः उनको जीतनेका

विचारही मनमें न लाओ। भला जब देवता लोगही अर्जुनके विक्रमसे घबराते हैं, तब बेचारे मनुष्यको क्या शक्ति है, जो उनका सामना करे! इस लिये राजन्! तुम अर्जुनको छोड़, शेष चारों भाइयोंको एक दिनके लिये परास्त कर सकोगे।"

यह कहकर शिवजी अन्तर्धान हो गये और मूढ़मति जयद्रथ भी अपनासा मुँह लेकर लौट आया।

धर्म-परीक्षा

काम्यक वनमें एक दिन धर्मने मृगका रूप धारण कर, एक ऋषिके आश्रममें प्रवेश किया। वह तपस्वीकी अरणिसे* अपना सिर रगड़ने लगा। दैवात् वह अरणि और मन्थन-दण्ड उस मृगके सींगोंमें उलझ गया। मृग अत्यन्त वेग-पूर्वक अरणि और दण्ड लिये छलाँगें भरता हुआ भाग गया।

ऋषिने देखा, कि मन्थन-दण्ड और अरणि हाथसे निकल गये; अब अग्निहोत्रके लिये बड़ी कठिनता पड़ेगी। यह सोच उन्होंने युधिष्ठिरके पास आकर सारा हाल कहनेके बाद कहा,—"आपलोग उस मृगका पीछा कर मेरा मन्थन-दण्ड और अरणि ला दीजिये, जिससे मेरे अग्निहोत्रमें कठिनाई न पड़े।"

ऋषिकी आज्ञा पातेही पाँचों भाइयोंने धनुर्बाण लेकर उसका पीछा किया। मृगको देखतेही उन्होंने कर्णि, नालीक, नाराच प्रभृति कई अस्त्र उसपर छोड़े; परन्तु मृगको एक भी न लगा! वह भागता गया। ये लोग भी उसके पीछे-पीछे दौड़ते गये। कुछ काल तक दौड़कर वह एकाएक अदृश्य होगया। पाँचों भाई थक-कर वहीं बैठ गये और भूख-प्यासके व्याकुल हो, आपसमें कहने

* अरणि—अग्नि उत्पन्न करनेका काष्ठ-दण्ड।



जयद्रथका मान-मदन।

“भीमसेनने उसके बाल पकड़कर, उसे पृथ्वीपर गिरा दिया और इधर-उधर घसीटकर उसकी हड्डी-पसलियाँ ढीली कर दीं।” [पृष्ठ—१४२]

लगे,—"हमारी यह दशा क्यों हुई ?" सबने अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार उक्त प्रश्नके उत्तर दिये। अर्जुनने कहा,—"सूत-पुत्र कर्णने जो मर्म-भेदी वाक्य कहे, उनको सुनकर भी हमलोगोंने उसे क्षमा कर दिया, इसी कारण हमलोगोंकी यह दशा हुई है।"

इसके बाद युधिष्ठिरने तृषा-निवारणार्थ नकुलको जल लानेकी आज्ञा दी। नकुलने वृक्षपर चढ़ एक जलाशयको देखा। तब युधिष्ठिरने उनसे पत्र-पात्रों (दोनों) में पानी भर लाने को कहा।

नकुल उस सरोवरके निकट पहुँचेही थे, कि कहींसे आवाज़ आयी,—"नकुल! सावधान! यह मेरा जलाशय है; इसपर मेरा अधिकार है। विना मेरे प्रश्नोंका उत्तर दिये, जल मत छूना।" नकुलने इस कथनकी कुछ भी परवाह न कर पानी पी लिया; परन्तु पानी पीतेही वे धड़ामसे पृथ्वीपर गिरकर अचेत हो गये!

जब नकुल वहुत देरतक न आये, तब युधिष्ठिरने सहदेवको भेजा। उनकी भी वही दशा हुई। तब युधिष्ठिरने अर्जुनको भेजा। मेधावी अर्जुन धनुष-बाण लिये सरोवरकी ओर चले। वहाँ पहुँचकर उन्होंने अपने दोनों भाइयोंको निर्जीव पड़े देखा। यह देख अर्जुनको महान दुःख हुआ। वे धनुषपर तीर चढ़ाकर इधर-उधर देखने लगे; परन्तु कहीं, कोई भी दिखाई न पड़ा। तब वे परिश्रान्त और दुःखित मनसे जलकी ओर बढ़े। साथही फिर वही आवाज़ आयीः—

"अर्जुन! सावधान! पहले मेरे प्रश्नोंका उत्तर दे लो, फिर जल पीओ; नहीं तो तुम्हारी भी वही गति होगी, जो तुम्हारे इन भाइयोंकी हुई है।"

इस भाँति जल पीनेका निषेध सुनकर अर्जुनने कहा,—"अरे दुष्ट! यदि तू सामने आकर इस प्रकार निषेध करे, तो तेरे टुकड़े-टुकड़े कर दूँ और तुझे अपने भाइयोंको मारनेका मज़ा चखा दूँ।"

इतना कह अर्जुनने शब्द-बेधी बाण छोड़े। तब उस अलक्षित आत्माने कहा,—"अर्जुन! क्यों ये व्यर्थ परिश्रम करते हो? तुम्हारी यहाँ एक नहीं चलेगी। मेरे प्रश्नोंका उत्तर देनेसेही तुम्हें जल मिल सकता है, अन्यथा नहीं।"

अर्जुनने कहा,—"देखता हूँ, बल-पूर्वक जल पीनेसे तू मेरा क्या करता है?" इतना कहकर अर्जुनने जल पी लिया। परन्तु पीतेही वे भी मूर्च्छित हो गिर पड़े!

अब युधिष्ठिरने भीमसेनको भेजा, परन्तु उनकी भी वही दशा हुई। तब स्वयम् युधिष्ठिर आये और अपने सब भाइयोंको प्राण-हीन देख विलाप करने लगे:—

"हाय, भीम! युद्धमें दुर्योधनकी जङ्घा अब कौन तोड़ेगा? हाय, अर्जुन! जब तुम्हारा जन्म हुआ था, तब देवताओंने यह कहा था, कि यह इन्द्रसे कुछ कम न होगा। उत्तर पर्वतपर भूतवर्गने तुम्हें अजेय बताया था। हाय! आज वह सब क्यों मिथ्या होगया? हाय! यह वही गाण्डीव-धारी वीर कैसे भूशायी हुआ? प्यारे भाइयो! अभी तुम्हें बहुत कुछ करना है! अपना कर्त्तव्य-पालन करना छोड़, यहाँ क्यों सोरहे हो? तुम्हारे अङ्गोंपर किसीके अस्त्र-शस्त्रका घाव भी नहीं है! उठो, मेरे प्यारे बन्धुओ, मेरे जीवनाधार भाइयो! शीघ्र उठो।"

युधिष्ठिर पागलकी तरह खड़े हुए उनकी मृत्युका कारण सोचने लगे। वे प्यासके कारण इतने व्याकुल होरहे थे, कि सबसे पहले उन्होंने अपनी तृषा शान्त कर लेना निश्चय किया। ऐसा निश्चयकर वे ज्योंही उस सरोवरकी ओर बढ़े, त्योंही फिर वैसीही अज्ञात बाणी हुई।

युधिष्ठिरके, उत्तर देना, अङ्गीकार करनेपर, धर्मने प्रकट होकर

उनसे बड़ेही गूढ़ और आध्यात्मिक प्रश्न किये। युधिष्ठिरने बड़ीही उत्तमतासे उनके उत्तर दिये। तब धर्मने प्रसन्न होकर उनके सब भाइयोंको जिला दिया और उनसे वर माँगनेको कहा।

युधिष्ठिरने कहा,—"हमारे वन-वासके १२ वर्ष बीत गये, अब तेरहवाँ वर्ष अज्ञात-वास बाक़ी है। इसलिये हमें यह वरदान दो, कि हम जहाँ चाहें रहें; परन्तु हमें कोई भी पहचान न सके।"

धर्मने कहा,—"तथास्तु। तुम किसी भी राज्यमें अपनी अज्ञात-अवधि पूर्ण करो! तुम्हें कोई भी नहीं जान सकेगा।"

इस प्रकार अरणि-मन्थन प्राप्त कर युधिष्ठिर अपने भाइयों सहित, अपने आश्रमको लौट आये और ऋषिको अरणि-मन्थन दे, उनसे आशीर्वाद प्राप्त किया।

वन-वासके बारहवें वर्षके अन्तिम दिनोंमें अज्ञात-वासके निमित्त पाँचो पाण्डव एकान्तमें बैठकर छिपे रहने योग्य स्थानके विषयमें परामर्श करने लगे।

अर्जुनने कहा,—"महाराज! धर्मके बताये अनुसार हमलोगोंके छिपकर रहने योग्य कुरुमण्डलके चारों ओर, पाञ्चाल, चेदि, मत्स्य, शूरसेन, पटच्चर, दर्वाण, नवराष्ट्र, मल्ल, शाल्व, युगन्धर, कुन्तिराष्ट्र, सुराष्ट्र और अवन्ति आदि कई गुप्त स्थान हैं। कहिये इनमेंसे कौनसे देशमें चलकर आप रहना पसन्द करते हैं?"

मेधावी अर्जुनके इस कथनपर कुछ समय तक विचार होनेके पश्चात् सर्वसम्मतिसे मत्स्यदेशीय राजा विराट्के यहाँ चलकर रहनाही निश्चित हुआ। तदनुसार सबने अपने-अपने वेश बदल-कर, अपने-अपने कार्योंका वर्णन किया। राजा युधिष्ठिरने 'कङ्क' नाम रखकर राजा विराट्के यहाँ चौपड़ खिलानेपर रहना निश्चय किया। भीमसेनने 'वल्लभ' नाम रखकर राजा विराट्का रसोइया

बनना निश्चित किया। अर्जुनने कहा,—"भाइयो! मैं अपनी कलाइयोंपर लगे धनुषकी डोरीके चिह्न छिपानेके लिये चूड़ियाँ पहनूँगा और कानोंमें कर्णफूल पहन, मस्तकपर वेणी बाँध तथा हाथमें शङ्ख लेकर "बृहन्नला" के नामसे, मत्स्यराज विराट्‌की सेवा करूँगा। इस तरह नपुंसकका (खोजेका) वेश धारण कर समय-समयपर नाना प्रकारकी आख्यायिकाओंसे राजा तथा प्रजा-को अपने आधीन कर लूँगा। विराट्-राजकी पुरनारियोंको विचित्र नृत्य-गीत और विविध वाद्य-विद्या सिखाऊँगा। विराट्-राजके पूछनेपर मैं कहूँगा, कि पहले मैं राजा युधिष्ठिरके अन्तःपुरमें महारानी द्रौपदीकी परिचारिका थी।"

इसी तरह नकुलने 'ग्रन्थी' नामसे अश्व-पालन और सह-देवने 'तन्त्रिपाल' नामसे गो-निरीक्षणपर, विराट्के यहाँ, नौकरी करनेकी ठान ली। अन्तमें द्रौपदीने 'सैरन्ध्री' नाम रखकर राजा विराट्के अन्तःपुरमें दासी बनकर रहनेका विचार प्रकट किया।

इस प्रकार पाण्डवोंने आपसमें सलाह कर, श्री-समृद्धि और पृथ्वी-विजयके मन्त्रोच्चारण-पूर्वक हवन किया और पैदलही कालिन्दी नदीकी ओर चल दिये। वहाँसे दक्षिण तीरको पीछे छोड़कर वे यकृल्लोम और शूरसेन आदि देशोंकी दुर्गम गिरि-कन्दराओं तथा घने जङ्गलोंमें मृगया करते हुए आगे बढ़े। कई दिनों तक यात्रा करनेके बाद उन्होंने मत्स्यदेशमें प्रवेश किया। राजधानी अभी दूर थी और द्रौपदी इतनी थक चुकी थीं, कि उनसे चला नहीं जाता था। अतएव अर्जुनने उन्हें गोदमें उठा लिया और शीघ्रही सब लोग नगरके निकट आ पहुँचे। तब युधिष्ठिरने अर्जुनसे कहा,—

"वत्स! हमलोगोंको अस्त्र-शस्त्र सहित नगरमें नहीं घुसना

चाहिये ; नहीं तो हमलोगोंपर सन्देह होजाना सम्भव है । विशेषतः यह तुम्हारा गाण्डीव तो कभी छिपा नहीं रह सकता ।”

अर्जुनने कहा,—“राजन्! सामनेके उस शैल-श्रृङ्गके समीपही श्मशान-भूमि है। वहीं एक बड़ा भारी शमी-वृक्ष भी दिखाई दे रहा है। अतः इसी शमी-वृक्षपर अपने अस्त्र-शस्त्र छिपा देने चाहियें ।”

ऐसा कह, अर्जुनने अपने शत्रु-दल-दमनकारी, प्रकाण्ड गाण्डीव धनुषकी डोरी खोलदी। तब सबने अपने-अपने धनुषको मौर्वी-बन्धनसे मुक्त किया। इस भाँति सबने अपने-अपने आयुध परित्यागकर, एक वस्त्रमें लपेट दिये और नकुलने उस वृक्षपर चढ़कर उन्हें एक घनी डालके साथ अच्छी तरह बाँध दिया। उसके पासही एक मुर्दा भी बाँध दिया, जिससे भय तथा दुर्गन्धके कारण कोई उस पोटलीके पास जानेका भी साहस न करे।

इसके बाद सब लोग नगरमें गये और निर्द्दिष्ट कार्य्योंके अनुसार राजा विराट्के यहाँ अपना-अपना काम प्राप्त करने लगे। युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव और द्रौपदीको स्थान मिल जानेके बाद स्त्रियोंके आभूषण धारण किये परम रूप-सम्पन्न, महाबाहु अर्जुन राजा विराट्के सभा-मण्डपमें आ पहुँचे। उन्हें देख, मत्स्य-राजने पूछा :—

“महाशय! तुम कौन हो? तुम्हारे लक्षणोंसे तो विदित होता है, कि तुम अपूर्व धनुर्धारी और इस ससागरा वसुन्धराके अधिकारी होने योग्य हो। तुम्हारे लक्षण चक्रवर्त्ती होनेकी सूचना देते हैं। इसलिये तुम मेरे समान रहकर इस मत्स्यराज्यका परिचालन करो। तुम मुझे हिजड़े नहीं दिखाई देते। व्यर्थही तुमने यह वेश धारण कर रखा है।”

अर्जुन बोले,—“राजेन्द्र! मैं नाचने, गाने और बजानेमेंही प्रवीण

हूँ, इसलिये आप मुझे राज-कन्या श्रीमती उत्तरा देवीका शिक्षक नियुक्त कर दीजिये। मैं उन्हें नृत्य, गान और वाद्य-विद्या अच्छी तरह सिखा दूँगा। राजन्! मेरा नाम बृहन्नला है। मेरे माता-पिता कोई नहीं हैं। अतएव आप मुझे पुत्र या पुत्रीकेही समान समझिये।"

राजा विराट्ने कहा,—"बृहन्नला! मैं तुम्हारी इच्छापूर्ण करनेको प्रस्तुत हूँ। तुम मेरी कन्या उत्तरा तथा उसकी सहेलियोंको संगीत, वाद्य तथा नृत्यादिकी पूर्ण शिक्षा दो। किन्तु मैं तो फिर भी यही कहूँगा, कि तुम इस तुच्छ कार्यके योग्य नहीं हो; तुम तो समस्त भूमण्डलके अधिकारी होने योग्य हो।"

इस प्रकार बातचीत हो चुकनेपर, मन्त्रिवर्गसे सलाह करके, राजा विराट्ने अर्जुनकी परीक्षा करायी। जब उनका नपुंसकत्व भली भाँति निश्चय हो गया, तब उन्हें राजकुमारीके पास भेज दिया गया। अर्जुन विराट्-तनया उत्तराको नृत्य-गीत सिखाते हुए बहुत शीघ्र उनके प्रिय पात्र बन गये।

इस भाँति गुप्त वासमें कई महीने आनन्दसे बीत गये। इसी समय सहसा भीमसेन द्वारा कीचकके मारे जानेका समाचार सारे भारतमें फैल गया। कीचक, राजा विराट्का साला था। वह सैरन्ध्रीपर मोहित हो गया था और अपनी कुवासनाको परितृप्त करनेकी ताकमें लगा था। जब भीमसेनको इस बातका पता लगा, तब उन्होंने गन्धर्व-रूप धारण कर कीचकको मार डाला*।

कीचकके मरनेसे राजा विराट्का बल कम हुआ जानकर

* कीचक-बध' की घटना बड़ी ही मनोरंजक है और हमारे यहाँ इसकी पूरी कथा खड़ीबोलीकी चुहचुहाती हुई कवितामें "कीचक-बध" के नामसे छपी है। कई सुन्दर-सुन्दर चित्र भी दिये गये हैं। दाम सिर्फ ॥=) है।

कौरव तथा त्रिगर्त्तराज, दलबल सहित, मत्स्यदेश पर चढ़ आये। आतेही उन्होंने राजाकी असंख्य गौएँ छीन लीं और राजाको युद्धमें पकड़कर बाँध लिया। तव भीमसेनने युद्धकर राजा विराट्को, उनके चङ्गुलसे छुड़ा लिया। राजा अभी नगरमें वापिस भी नहीं आने पाये थे; कि दूसरी ओरसे कौरवी सेनाने आक्रमण कर उनकी साठ हज़ार गौएँ छीन लीं। ग्वालोंने आकर विराट् राजकुमार भूमिञ्जयको* सारा वृत्तान्त कह सुनाया। तब भूमिञ्जयने कहा,—"उस एक महीने और अट्ठाइस दिनके युद्धमें मेरा सारथि मारा गया। अतएव अब यह बड़ा भारी प्रश्न मेरे सामने है, कि आज मेरा सारथि कौन होगा? यदि मुझे अभी कोई सुयोग्य सारथि मिल जाये तो मैं, गाण्डीव-धारी अर्जुनकी तरह महान् युद्धकर, कौरवोंके भीष्म, द्रोण, कृप, कर्ण और अश्वत्थामा आदि महारथियोंको भी आसानीसे जीत सकता हूँ।"

जब सैरन्ध्रीने स्त्रियोंके मुखसे वारम्बार विराट्-पुत्रकी बड़ाई और सारथिके अभावकी बात सुनी, तब उससे रहा न गया। उसने स्त्रियोंमेंसे उठ और विराट् पुत्रके समीप जाकर कहा:—

"राजपुत्र! आपके यहाँ जो "बृहन्नला" नामक हिंजड़ा रहता है, वह महाबाहु अर्जुनका सारथि और शिष्य है। धनुर्विद्यामें भी वह उनसे किसी प्रकार कम नहीं है। जब मैं पाण्डवोंके यहाँ रहती थी, तब मैंने उसकी रथ-परिचालन-कला देखी थी। आपकी बहिन उत्तराकी बात वह ज़रूर मान जायेगा। आप उन्हींके द्वारा बृहन्नलाको कहलवाइये। यदि उसने आपका सारथि बनना स्वीकार कर लिया, तो आप अवश्यही युद्धमें विजयी होंगे।"

सैरन्ध्रीके मुखसे यह बात सुन, राजकुमारने अपनी बहिन

* विराट्-राजकुमार भूमिंजयका एक नाम 'उत्तर' भी है।

उत्तराको बुला और सब बातें समझाकर कहा,—"उत्तरे! तुम शीघ्र जाकर अपने गुरु बृहन्नलाको बुला लाओ।"

अपने भाईकी बात सुनकर उत्तरा दौड़ी हुई नृत्यशालामें, बृहन्नलाके पास पहुँची और बोली,—"बृहन्नले! शीघ्र चलो। तुम्हें मेरे भाई बुलाते हैं।"

अर्जुनने पूछा,—"देवि! तुम इतनी घबरा क्यों रही हो? तुम्हारा मुख मलिन क्यों है?"

उत्तराने धीरेसे विनय-पूर्वक कहा,—"क्या बताऊँ; अभी ग्वालोंने आकर यह समाचार सुनाया है, कि कौरवोंने सेना सहित हमारे राज्यपर प्रबल आक्रमण किया है और हमारी साठ हज़ार गौएँ भी छीन ली हैं। मेरे भाई अब युद्ध-यात्रा करेंगे; परन्तु अभी हालहीमें उनका एक बड़ाही प्रिय और चतुर सारथि युद्धमें मारा गया है, अब उसके समान कोई सारथि उनके पास नहीं है। सैरन्ध्रीने यह जानकर कहा है, कि तुम इस कार्य्यमें अत्यन्त प्रवीण हो। अतएव तुम्हें मेरे भाईका सारथि बनना होगा। तुमसे मेरा यह अन्तिम अनुरोध है। यदि तुम आज मेरी यह बात न रखोगे, तो मैं प्राण त्याग दूँगी।"

अर्जुन, उत्तराकी बात सुनकर, राजपुत्रके पास पहुँचे। राजपुत्रने उन्हें देखकर बड़े प्रेमसे कहा,—"बृहन्नले! मुझे मालूम हुआ है, कि पाण्डव-श्रेष्ठ महाबाहु अर्जुनने तुम्हींको अपना सारथि बनाकर खाण्डव-वनमें हुताशनकी तृप्ति की थी। सुना है, कि तुम्हारे जैसे निपुण सारथिको पाकरही उन्होंने सारी वसुन्धराको अपने अधिकारमें किया था। तुम्हारा परिचय मुझे अभी सैरन्ध्रीने दिया है। जिस प्रकार तुमने अर्जुनके यहाँ सारथिका काम किया था; यदि उसी भाँति मेरा भी सारथ्य करना स्वीकार

करलो, तो मैं बात-की-बातमें कौरवोंको परास्तकर अपनी गौएँ छुड़ा लूँ।"

यह सुन अर्जुनने विस्मयका भाव दिखाते हुए कहा,—"राजकुमार! संग्राम-भूमिमें सारथिका कार्य करनेकी योग्यता मुझमें कहाँ! मैंतो नाना प्रकारके नृत्य और गीत जानता हूँ। भला मैं सारथिका काम कैसे कर सकूँगा?"

राजकुमारने कहा,—"तुम नर्तक हो या गायक, मुझे इससे कोई प्रयोजन नहीं। इस समय तुम्हें मेरे रथपर सवार होकर अश्व-परिचालकका कार्य अवश्यही करना होगा।"

अन्तमें अर्जुनको यह कार्य स्वीकार कर लेना पड़ा। जब उन्हें पहननेको कवच दिये गये; तब वे उन्हें इस प्रकार धारण करने लगे; मानों उन्होंने आजतक कवच देखेही नहीं थे। यह देख, वहाँकी सारी स्त्रियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ीं। अर्जुनको मूढ़ जानकर उत्तराने उन्हें अपने हाथों कवच पहिनाये! इस प्रकार कवचादिसे सुसज्जित हो अर्जुन रथपर जा बैठे। कुमार भूमिञ्जय भी परमात्माका नामोच्चारण कर शस्त्रास्त्र सहित रथपर सवार हुए।

ज्योंही रथ चलनेको हुआ, त्योंही व्रतशील, वेदज्ञ ब्राह्मणोंने स्वस्ति-वाचन पढ़ा और रथकी परिक्रमाकर कहा:—

"बृहन्नले! खाण्डव-दाहके समय महावीर अर्जुनको जिस प्रकार विजय प्राप्त हुई थी, उसी प्रकार तुम्हारी सहायतासे, कौरवोंपर, इन राजपुत्रको भी विजय प्राप्त हो।"

राजकुमारने राजधानीसे बाहर आ, बृहन्नलासे कहा,—"सारथि! अब तुम खूब वेग-पूर्वक रथ चलाओ।"

आज्ञा पातेही अर्जुनने उन वायु-वेगी घोड़ोंको ऐसी द्रुतगतिसे चलाया, मानों रथ आकाशमें उड़ रहा हो! कुछही देरमें उन्हें

कौरव-सेना दिखाई देने लगी। वह कौरव-सेना विशाल समुद्रके समान विस्तीर्ण थी। राजकुमार उत्तरने गजाश्वरथ-संकुल, दुर्योधन, कर्ण, कृप, भीष्म, द्रोण और अश्वत्थामा आदि प्रधान-प्रधान महारथियों द्वारा सुरक्षित उस अपार सेना-सागरको देख, रोमाञ्चित हो, अर्जुनसे कहा:—

"बृहन्नले! अब मैं युद्ध कैसे करूँ? केवल सेना देखतेही मेरे तो रोंगटे खड़े हो गये! इस चतुरंगिणी सेनामें प्रवेश करना तो दूर रहा, इसे देखतेही मेरा जी व्याकुल हुआ जाता है।

"बृहन्नले! मेरे पिता सारी सेना और सामन्तोंको साथ ले, मुझे घरपर अकेला छोड़कर, त्रिगर्त्तोंके साथ युद्ध करने गये हैं। भला तुम्हीं बताओ, अब मेरी सहायता करनेवाला कौन है? इधर मैं अकेला और उधर बड़े-बड़े महारथियोंसे सुरक्षित कौरव-सेना! ऐसी हालतमें मैं किस प्रकार विजय पा सकता हूँ? विशेषतः मैं बालक हूँ। अतएव तुम शीघ्र रथको लौटा ले चलो, मैं युद्ध नहीं करूँगा।"

बृहन्नलाने कहा,—"आपने अभी युद्धका तो एक पैंतरा भी नहीं बदला और अभीसे दीन-भाव धारणकर व्यर्थही शत्रुओंका साहस बढ़ाने लगे। आपनेही तो मुझे कौरव-सेनाके सामने शीघ्र रथ ले चलनेकी आज्ञा दी थी। अब मैं आपके हज़ार मना करनेपर भी इस रथको कौरव-सेनाके बीच लेजाकर खड़ा करूँगा। मैं आपको उनके पास अवश्यही ले चलूँगा। उस वक़् तो आपने स्त्रियोंके सामने अपनी शूरताकी एक-एक बात नौ-नौ हाथ लम्बी करके कही और युद्ध-यात्रा की; परन्तु अब आप पीछे कदम क्यों हटाते हैं? अब यदि आप छीनी हुई गौओंको बिना लौटाये घर लौटेंगे, तोभी लोग आपका उपहास करेंगे। विशेषतः सैरन्ध्रीने जब मेरे

सारथ्य-कार्यकी प्रशंसा की है, तब मैं भी बिना गौओंको प्राप्त किये कैसे लौट सकता हूँ? सैरन्ध्रीकी प्रशंसा और आपके अनुरोध-से अब मेरा यह कर्त्तव्य हो चुका है, कि मैं इन कौरवोंसे युद्ध करूँ। इसलिये आप थोड़ी देर ठहर जाइये।"

राजकुमारने कहा,—"बृहन्नले! कौरव चाहे हमारा सर्वस्व-ही क्यों न हरण कर लें, नर-नारी चाहे हमारा कितनाही उपहास क्यों न करें, हमारी गौएँ हमारे हाथोंसे भलेही चली जायें, नगर उजड़ जाये और पिताजी भी भलेही मुझपर क्रुद्ध हो जायें, परन्तु मैं युद्ध कदापि नहीं करूँगा। तुम शीघ्रही रथ लौटाओ; मेरा हृदय कम्पित हो रहा है।"

डरपोक विराट्-पुत्र भूमिञ्जय इतना कहकर मान, दर्प, और धनुर्बाण परित्यागकर रथसे उसी क्षण कूद भागे। अर्जुनने लल-कारकर कहा,—"राजपुत्र! युद्धमें प्राणोंके भयसे इस प्रकार भाग जाना क्षत्रियोंका काम नहीं है। इस प्रकार डरकर भागनेसे तो युद्धमें लड़कर मर जानाही क्षत्रियोंके लिये श्रेयस्कर है।"

इतना कह अर्जुन भी रथसे कूद पड़े और राजकुमारको पकड़ने दौड़े। जिस समय अर्जुन दौड़ रहे थे, उस समय उनकी दीर्घ वेणी और सुरंजित वस्त्र-युगल, वायुसे फहराते हुए, अपूर्व शोभा पा रहे थे। यह देख, कौरव-दलके कुछ सैनिक इनके इस असाधारण वेशपर हँस पड़े। यह कोई भी नहीं जान सका, कि यही वीर अर्जुन हैं। परन्तु मुख्य-मुख्य सेनापति आपस-में कहने लगे,—"भस्माच्छादित अग्निकी तरह, यह छद्मवेश-धारी कौन है? यह उस भगोड़ेके पीछे क्यों भाग रहा है? इसमें कुछ तो स्त्रीके और कुछ पुरुषके चिह्न दिखाई पड़ते हैं। चाल-ढाल और वेश-भूषासे तो यह नपुंसकही मालूम होता है; परन्तु विचार

कर देखनेसे यह बहुत कुछ अर्जुनसा दिखाई दे रहा है। देखो, वही मस्तक, वही गर्दन, वेही भुजाएँ और आकारभी ठीक वैसाही है। अतः मालूम होता है, कि अर्जुननेही हिंजड़ेका वेश धारण कर रखा है। सिवा अर्जुनके किसीकी शक्ति नहीं, जो अकेला हम लोगोंके सामने निर्भय चित्तसे युद्धार्थ आये। विराट्-पुत्र उत्तरमें इतना पुरुषार्थ कहाँ, जो वह हमलोगोंका सामना करे। हमें तो यही मालूम होता है, कि वह, अज्ञातवासी अर्जुनको अपना सारथि बना, हमलोगोंसे युद्ध करने आया था। परन्तु यहाँ हमलोगोंको देखकर मारे डरके भागा जा रहा है और धनञ्जय उसे पकड़ने दौड़े हैं।"

उस क्लीव-वेश-धारी अर्जुनको देखकर सब कौरव आपसमें इसी प्रकारकी बातें करने लगे। इधर अर्जुनने सौ क़दम दौड़करही राजकुमार उत्तरको जा पकड़ा। उत्तर रोकर कहने लगा,—"वृहन्नले! ज़रा सोचो तो, इस व्यर्थके मरजानेसे तो जीनाही अच्छा है। तुम रथको शीघ्र लौटा लेचलो। मैं तुम्हें एकसौ निष्क, (शुद्ध सुवर्ण, मुद्रा) हेममण्डित महाप्रभान्वित आठ वैदूर्यमणि, स्वर्ण-दण्ड-शोभित, सुशिक्षित घोड़ों सहित एक रथ और दश हाथी दूँगा, तुम मुझे छोड़ दो।"

अर्जुनने राजकुमार उत्तरकी बातोंपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और उसे घसीट, रथके पास लाते हुए बोले,—"उत्तर! यदि तुममें शत्रुसे सामना करनेका बल न हो, तो लो यह सारथि-का काम तुम करो, मैं युद्ध करूँगा। क्षत्रिय-पुत्र होकर संग्रामसे वैश्य-पुत्रकी तरह भाग जाना तुम्हें शोभा नहीं देता।"

उत्तरको अर्जुन बहुत देरतक पकड़े रहे। अन्तमें बलात् उसे रथपर चढ़ा, श्मशानस्थ उस शमी-वृक्षकी ओर रथ ले चले।

तब कौरवोंके महारथी भीष्म, द्रोण इत्यादि सन्देह करने लगे, कि हो-न-हो यह वीर-प्रधान अर्जुनही हैं।

अर्जुनने उस शमी-वृक्षके नीचे पहुँच, उत्तरको अति सुकुमार और युद्धके लिये अयोग्य जानकर कहा,—"उत्तर! तुम इस शमी-वृक्षपर चढ़ो और कपड़ेमें लिपटे हुए धनुर्बाणको शीघ्र उतार लाओ; क्योंकि तुम्हारा यह सामान्य धनुष मेरा बल नहीं सह सकेगा। हे भूमिञ्जय! युधिष्ठिरादि पाण्डवोंने अपने-अपने धनुर्बाण और कवच इस वृक्षमें छिपा रखे हैं! विशेषतः अर्जुनके जिस गाण्डीव धनुषकी तुमने खूब प्रशंसा सुन रखी है, वह भी यहीं रखा हुआ है। वह सुवर्ण-निर्मित असामान्य शरासन एक होनेपर भी शत, सहस्र आयुधोंका बल रखता है।"

उत्तरने कहा,—"बृहन्नले! इस वृक्षपर तो मृत शरीर बँधा हुआ है। मैं राजपुत्र होकर अपने हाथोंसे उस शवको कैसे छू सकता हूँ? तुम शव-स्पर्श-द्वारा मुझे व्याधकी तरह क्यों अपवित्र किया चाहते हो?"

अर्जुनने कहा,—"राजकुमार! वह मृत शरीर नहीं, बल्कि धनुषही उस तरहसे बाँधे गये हैं। तुम अपवित्र नहीं होगे, तुम निस्सङ्कोच उन्हें उतार लाओ।"

विराट्-पुत्र उत्तर रथसे उतर, उस शमी-वृक्षपर चढ़ गया। तब रथपर बैठे अर्जुनने कहा,—"तुम वृक्षकी शाखासे उन सब धनुषोंको हटाकर बन्धन खोल दो।" आज्ञानुसार उत्तरने बन्धन खोला और कपड़ेको हटाया। पाण्डवोंके उन आयुधोंको देखतेही उत्तरके देवता कूचकर गये।

अर्जुनसे उन अस्त्रोंका हाल सुनकर उत्तरने आश्चर्यान्वित हो पूछा,—"बृहन्नले! उन पाण्डवोंके ये सुवर्ण-निर्मित आयुध तो अत्यन्त

मनोहर हैं ; किन्तु वे शत्रु-विनाशक वीर पाण्डव कहाँ हैं? वे लोग द्यूतमें सारा राज-पाट हारकर ईश्वर जाने, कहाँ चले गये हैं! उनका कहीं पताही नहीं लगता। हमने यह भी सुना है, कि उनकी भार्या श्रीमती द्रौपदी भी उन्हींके साथ वनको गयी हैं। वे इस समय कहाँ हैं? यदि आपको कुछ पता हो, तो कृपा कर शीघ्र कहिये।"

बृहन्नलाने उसके आश्चर्य्यको संवर्द्धित करते हुए अपना और चारों भाइयों तथा महारानी द्रौपदीका परिचय दे दिया। पर उत्तरको उनकी बातपर विश्वास नहीं हुआ। उसने उनकी जाँच करनेके लिये कई प्रश्न किये, जिनका जवाब देकर अर्जुनने उसके सन्देहको दूर करदिया। अनन्तर उत्तरने अर्जुनके दस नामोंका कारण पूछा।

अर्जुनने कहा,—"समस्त राजाओंको जीतकर उनसे धन प्राप्त-करनेके कारण मेरा नाम 'धनञ्जय' हुआ। मैं शत्रुओंको बिना हराये युद्धसे नहीं हटता, अतः मेरा नाम 'विजय' पड़ा। मेरे कांचन-कवच-समाच्छादित रथमें श्वेत रङ्गके घोड़े जोते जाते हैं, इसलिये मेरा नाम 'श्वेत-वाहन' हुआ। हिमालय-पर्वतके पृष्ठपर उत्तरा फाल्गुनी और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रोंके सँधि-कालमें मेरा जन्म हुआ, इसीसे मुझे 'फाल्गुण' कहते हैं। दानवोंसे युद्ध करनेके लिये जाते समय स्वयम् देवराज इन्द्रने अपने हाथोंसे मेरे मस्तकपर सूर्य-समान प्रभा-युक्त किरीट रखा था, यही कारण मेरे 'किरीटी' नाम होनेका है। युद्ध करते समय मैं कभी कोई घृणित कार्य नहीं करता, इसी कारण देव, दानव मुझे 'वीभत्सु' कहने लगे। मैं गाण्डीव धारण करता हूँ, इस कारण मेरा नाम 'सव्यसाची' हुआ। इस पृथ्वी-तलपर मेरे समान किसीका वर्ण नहीं और मैं सदा

शुद्ध कर्मानुष्ठानमें लगा रहता हूँ ; अतः मैं 'अर्जुन' कहलाता हूँ। मैं इन्द्रका पुत्र हूँ और मुझे कोई भी नहीं हरा सकता, इसलिये मेरा नाम 'जिष्णु' पड़ा है और मेरा उज्ज्वल कृष्णवर्ण होनेसे पिताजीने प्रेमके कारण मेरा नाम 'कृष्ण' रख दिया है।"

यह सुनतेही विराट-पुत्र उत्तरने अर्जुनके निकट जा, अभिवादन कर कहा,—"महाबाहो ; मेरे भी दो नाम हैं, एक 'भूमिञ्जय' और दूसरा 'उत्तर'। बड़े भाग्यसे आपका शुभागमन हुआ है। आज मेरा परम सौभाग्य है, जो आपके दर्शन हुए! मैं प्रार्थना करता हूँ, कि अनजानतेमें मैंने जो कुछ भी भला-बुरा कहा हो, उसे क्षमा कीजिये। मेरा सारा भय जाता रहा और आपपर मेरी विशेष श्रद्धा हो गयी है। अब आप इस रथपर सवार हो, मुझे आज्ञा दीजिये, कि मैं रथको किस सैन्य-श्रेणीकी तरफ ले चलूँ ?"

अर्जुनने कहा—"राजपुत्र! तुम घबराते क्यों हो? मैं अभी तुम्हारे सब शत्रुओंकी ख़बर लेता हूँ। तुम निःशङ्क होकर यह देखो, कि मैं किस भाँति शत्रुओंसे भयङ्कर युद्ध करता हूँ। तुम मेरे ये तर्कस और तीर लेकर रथपर बैठ जाओ।"

अर्जुनकी बात सुनतेही उत्तरने युधिष्ठिरादिके हथियार तो यथा स्थान रख दिये और अर्जुनके आयुध लेकर रथपर आ बैठा। तब अर्जुनने कहा,—"अब मैं कौरवोंके साथ युद्ध करूँगा। देखते-ही-देखते वे तुम्हारे पशुओंको छोड़कर भाग जायेंगे। यह रथ शत्रुओंके लिये दुर्गके समान है। यह वज्रके तुल्य रथ, शत्रुओं द्वारा कदापि नहीं जीता जा सकता। इसलिये तुम किसी प्रकार भी मत डरो।"

उत्तरने जवाब दिया—"अब मुझे किस बातका डर है? अब यदि इन्द्र भी युद्धमें आजायें, तो भी आप नहीं जीते जा सकते।

परन्तु अभी मेरे दिलमें एक सन्देह और बाक़ी है। वह यह, कि आप नपुंसक-रूप क्यों धारण किये हुए हैं?"

अर्जुन बोले,—"राजकुमार! मैं सत्य कहता हूँ, कि मैं नपुंसक नहीं हूँ। केवल बड़ोंके आज्ञानुसारही, धर्मानुगत तथा पराधीन होकर मैंने इस प्रकारकी व्रत-चर्य्याका अवलम्बन किया था। अब वह अवधि समाप्त हो गयी और मैं भी इस व्रत-भारसे मुक्त हो चुका।"

उत्तरने कहा,—"मैं तो पहलेसेही जानता था, कि आप जैसा पुरुष नपुंसक नहीं हो सकता। अब मेरा सब संशय दूर होगया। अब आप आज्ञा दीजिये, कि मुझे क्या करना होगा? जिस प्रकार इन्द्रके सारथि मातलि और श्रीकृष्णके सारथि दारुक, सारथ्य-कार्यमें सुदक्ष हैं, उसी तरह आप मुझे भी इस कार्य्यमें कुशल जानिये। श्रीकृष्णके चारों घोड़ोंके समानही मेरे भी घोड़े हैं और यह रथ भी आपके योग्य है।"

इसके बाद महावीर अर्जुनने अपनी दोनों कलाइयोंकी चूड़ियाँ तोड़कर वहाँपर, धनुषकी डोरीसे लगने वाली फटकार बचानेके लिये, चमड़ेकी दो पट्टियाँ बाँधीं। पश्चात् अपने अस्त्रोंको देख-भाल और बल-पूर्वक गाण्डीव पर डोरी चढ़ा, टंकार शब्द किया। जिस प्रकार मेघसे मेघ टकरानेपर गम्भीर गर्ज्जना होती है, उसी प्रकार उस टंकार-ध्वनिसे दशों दिशाएँ प्रतिध्वनित हो उठीं। बड़े ज़ोरसे हवा चलने लगी, उल्कापात होने लगा और सर्वत्र अन्धकार छा गया! वज्र-विस्फोट जैसे उस भीषण शब्दको सुनकर कौरवोंको पूरा निश्चय हो गया, कि अर्जुनने ही अपने गाण्डीवका टंकार किया है।

इधर कुमार उत्तरने अर्जुनसे कहा,—"महाबाहो! आप इन

विपुल सहायता-युक्त महारथी कौरवोंसे अकेले युद्ध कैसे करेंगे? इसी चिन्तामें मैं बहुत देरसे पड़ा हुआ हूँ।"

अर्जुनने कहा,—"कुमार! तुम डरो मत। जिस समय मैंने महाबली गन्धर्वों के साथ युद्ध किया था, उस समय मुझे किसने सहायता दी थी? उस देव-दानव-समाकुल भयङ्कर खाण्डव-युद्धमें कौन मेरा सहकारी रहा था? इन्द्रके कार्यार्थ जब मैंने महा-बल-सम्पन्न निवात-कवच और पौलोम आदि दैत्योंके साथ युद्ध किया था, तब मेरा कौन सहायक था? द्रौपदीके स्वयंवरमें जब मैंने युद्ध किया था, तब मुझे किसकी सहायता मिली थी? क्या मैं द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, इन्द्र, कुबेर, यम, वरुण, अग्नि, श्री-कृष्ण और महादेवजीसे अस्त्र-शिक्षा प्राप्त करके भी इनसे युद्ध करने-में असमर्थ ही ठहरूँगा? कदापि नहीं। तुम इस बातकी तनि-कभी चिन्ता न करो और मेरा रथ, निर्भय होकर; शीघ्रता पूर्वक कौरवोंके सामने ले चलो।"

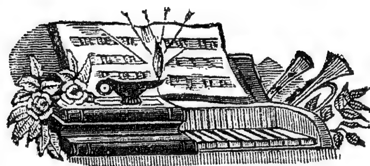
ऐसा कह, अर्जुनने, गोधा और अंगुलित्राण धारणकर, धनुष उठा लिया और रथको उत्तर-दिशाकी ओर चलानेकी आज्ञा दी। इसके बाद अर्जुनने अपने देवदत्त शङ्खको ज़ोरसे बजा दिया। उस शंख-ध्वनिसे घबराकर, उनके रथके चारों घोड़े घुटनोंके बल भूमि-पर गिर पड़े और कुमार उत्तर भी भयभीत होकर रथके भीतर सरक बैठे! तब अर्जुनने स्वयं लगाम पकड़कर घोड़ोंको खड़ा किया और राजकुमार उत्तरको आलिङ्गनकर, अनेक तरहसे धैर्य देते हुए कहा,—

"कुमार! तुमने अनेक बार शंख, भेरी तथा हाथीके चीत्कार शब्द सुने होंगे, फिर इस शङ्ख-ध्वनिसे साधारण मनुष्योंकी भाँति क्यों भयभीत हो गये?"

कुमारने कहा,—"वीरवर! निस्सन्देह मैंने सब कुछ देखा-सुना है; परन्तु ऐसा धनुष-टङ्कार और शङ्ख-निनाद तो आगे कभी नहीं सुना था।"

अर्जुनने कहा,—"अच्छा, अब तुम घोड़ोंको सावधानीसे सम्हालो; मैं पुनः शब्द करूँगा।"

ऐसा कहकर अर्जुनने पहलेसे भी अधिक ज़ोरसे शंख फूँका। उसके भीषण शब्दसे सब गिरि-गुहाएँ और दशो दिशाएँ काँप उठीं! उत्तर भी पहलेकी तरह डर कर भीतर घुस गया! यह देख अर्जुन, उत्तरको धैर्य बँधाने लगे।



छठा अध्याय

महाभारतका पूर्वाभास

कौरवोंसे युद्ध

उत्तरको धीरज-दिलासा दे और कुरु-सैन्यको संग्रामके लिये प्रस्तुत देखकर अर्जुनने कहा,—

"सारथि! मैं जहाँसे शत्रु-सेनापर अच्छी तरह बाण बरसा सकूँ, तुम वहीं रथ ले चलकर खड़ा करो। मैं यह देख रहा हूँ, कि कुरु-कुलाधम नीच दुर्योधन कहाँ खड़ा है। उस अभिमानीका पता पातेही, किसीका भी ख़याल न कर, मैं सीधा उसीपर टूट पड़ूँगा; क्योंकि एक उसके पराजित होतेही सभी पराजित हो जायेंगे। मुझे महा धनुर्द्धर भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, कर्ण और अश्वत्थामा आदि सभी महारथी दिखाई दे रहे हैं; परन्तु वह दुष्ट दुर्योधन कहीं भी नज़र नहीं आता। मुझे अनुमान होता है, कि वह दुष्ट दक्षिण-पथसे, गौओं सहित, हस्तिनापुरको जा रहा है। इस लिये उत्तर! तुम इन सबोंको छोड़ दो और जहाँ दुर्योधन

हो, वहीं मेरा रथ ले चलो; क्योंकि मुझे उसीको जीतकर तुम्हारा गो-धन प्राप्त करना है।"

उत्तरने, अर्जुनका आदेश पातेही, दुर्योधनके गमन-पथका लक्ष्य करते हुए, बड़ी तेज़ीसे रथ हाँकना शुरू किया। थोड़ी देरमें-ही रथ, दुर्योधनके निकट जा पहुँचा। तब अपना नाम बता और भीषण बाण बरसा कर अर्जुनने सारी सेनाको व्याकुल कर दिया। उस शर-जालसे कुरु-सैन्य, भूमण्डल और नभोमण्डल, इस प्रकार व्याप्त हो गया, कि कुछ दिखायीही नहीं पड़ने लगा। इससे सैनिकोंका भागना भी कठिन हो गया। सब लोग मुक्त-कण्ठसे अर्जुनके बाहुबलकी प्रशंसा करने लगे। इसके बाद अर्जुनने शत्रुओंके हृदयको विदीर्ण करने वाला देवदत्त शङ्ख बजाया और गाण्डीवका टंकार शब्द कर, ध्वजास्थित भूतगणोंको, कर्कश कोलाहल करनेकी आज्ञा दी। उस भयानक शङ्ख-ध्वनि, गाण्डीव-निर्घोष और ध्वजाविर्भूत भूतगणोंके अमानुषिक कोलाहलसे सब दिशाएँ भर गयीं। साथही सारी गौएँ पूँछ उठा-उठाकर उछ-लती-कूदती विराट्-नगरकी ओर भाग चलीं।

यद्यपि शत्रु-दलका दलन करके अर्जुनने बल-पूर्वक सब गौएँ प्राप्त करली थीं; तथापि वे कौरवोंका मान-मर्दन करनेके लिये दुर्योधनपर झपट पड़े। इसी बीच भीष्म, कृप, द्रोण, कर्ण, आदि महारथी भी दुर्योधनकी सहायताके लिये आ पहुँचे। यह देख अर्जुनने उत्तरसे कहा,—

"राजकुमार! हमें अब इन सातों महारथियोंके पास पहुँ-चना है, इस लिये तुम, जितनी जल्दी हो सके, हमारा रथ वहाँ ले चलो। तुम पहले मुझे कर्णके सामने ले चलो; क्योंकि वह दुष्ट, दुर्योधनके आश्रयसे अभिमानी हो कर, मुझसे सदा टक्कर

लेनेकी आकांक्षा करता है। मुझे उसका अभिमान दूर करना है।"

यह सुनतेही उत्तरने बड़े वेगसे रथ हाँका। अर्जुनको कर्ण-की ओर जाते देख, चित्रसेन, संग्रामजित और जय आदि कई वीर कर्णकी सहायताके लिये, अर्जुनके सामने आ डटे। उन्हें देख अर्जुनने, बड़े क्रोधसे उनको, बाणोंकी मारसे व्याकुल कर दिया। यह तुमुल युद्ध आरम्भ होतेही दुर्योधनका छोटा भाई विकर्ण, रथारूढ़ हो, विपाठ बरसाता हुआ अर्जुनके आगे आया। अर्जुनने बात-की-बातमें उसका धनुष और रथकी ध्वजा काट गिरायी। वह खेत छोड़ भाग गया। यह देख कुरु-वीर 'शत्रुन्ताप' मारे क्रोधके आग-बबूला हो गया और अर्जुनको कूर्मनखास्त्र द्वारा बहुतही पीड़ित करने लगा। तब अर्जुनने दस बाणों द्वारा उसके सारथिका बध कर, पाँच बाणोंसे उसे रथके नीचे इस प्रकार मार गिराया, जिस प्रकार पर्वत परका कोई बड़ा वृक्ष आँधीसे उखड़-कर लुढ़कता हुआ पृथ्वीपर आ गिरता है। यह देखकर, जिस प्रकार उद्दण्ड वायुसे वनके वृक्ष काँपने लगते हैं, उसी तरह अन्या-न्य वीरगण अर्जुनके आतङ्कसे थर्राने लगे। रथावस्थित, गाण्डी-वधारी महावीर अर्जुन, वैरियोंका संहार करते हुए, रण-क्षेत्रमें इधर-उधर, चारों ओर, चक्कर लगाने लगे। बसन्त-ऋतुमें सूखे पत्ते जिस प्रकार पवन-हिल्लोलसे उड़कर गगन-मण्डलमें विकीर्ण हो जाते हैं, उसी प्रकार कौरव-सैनिक भी, अर्जुनके बाणोंपर, अधरमें उड़ने लगे! मौका देख, महावीर अर्जुनने, कर्णके भाई संग्रामजित-के घोड़ोंका बधकर, उसपर एक बाण ऐसा फेंका, कि जिसके लगतेही उसका सिर पृथ्वीपर गिर कर इधर-उधर लुढ़कने लगा। तब सिंह-समान विक्रमशाली कर्ण, अपने भाईकी मृत्युसे अत्यन्त क्रुद्ध होकर, अर्जुनपर टूट पड़ा। उसने अपनी हस्तलाघवताका

परिचय देते हुए बारह बाणोंसे अर्जुनको आहत कर; उत्तरके हाथ और घोड़ोंके शरीरको भी छेद डाला। उसी तरह अर्जुनने भी उसपर भीषण आक्रमण किया। जिस प्रकार गरुड़ अपने चिर शत्रु सर्प पर टूट पड़ता है, उसी तरह अर्जुन भी अत्यन्त वेग पूर्वक उसपर झपट पड़े। इन दोनों महावीरोंको लड़ते देख, शेष कौरव-सैनिक, तमाशा देखनेके लिये, चुपचाप खड़े हो गये। कुछ देर बाद अर्जुनने क्रोधसे अधीर हो ऐसी बाण-वर्षा की, कि कर्ण, वाहन, रथ और पताका सहित बाणोंसे ढँक गया! कर्णको इस प्रकार बाणोंसे तोपकर अर्जुनने भीष्म, द्रोण आदि वीरोंकी ख़बर लेनी आरम्भ की। वे सब अर्जुनके बाणोंसे व्यथित हो, आर्त-नाद करने लगे। इसी समय कर्ण भी अजस्र-सायक-द्वारा सब बाणोंको दूरकर, अर्जुन के सामने आया और भीषण-वेगसे लड़ने लगा। इस बार कर्णके बाणोंसे अर्जुनको आच्छदित होते देख, कौरवोंने कर्णके समर-नैपुण्यकी प्रसंशा करते हुए, अत्यन्त प्रसन्न होकर, जय-ध्वनि, करतल-ध्वनि और संख, भेरी आदिका शब्द किया। अर्जुनके रथकी कपिचिह्नांकित ध्वजा स्वच्छन्दतासे हवामें फहरा रही थी। रथके ऊपरी भागमें अवस्थित भूतगण, भीषण रूपसे चिल्ला रहे थे और अर्जुन अपने गाण्डीव-निर्घोषसे दशों दिशाओंको कँपा रहे थे।

अर्जुनने, द्रोण, कृप और भीष्मकी तरफ देखकर, कर्णपर कुछ ऐसे चोखे-चोखे तीर फेंके, कि उसे अश्व, रथ और सारथी सहित जर्जरित होजाना पड़ा। यद्यपि अर्जुनके बाणोंसे कर्ण बेतरह घायल हो गये थे, तथापि निराश न हो, वे कानतक धनुष-सन्धान-कर, बराबर बाण-वृष्टि कर रहे थे! अर्जुन भी उसी तरह पैने-पैने बाण बरसा रहे थे। इस प्रकार महा घोर बाण-वृष्टिसे, रथ-सहित

ढककर, दोनों वीर, मेघाच्छादित सूर्य, चन्द्रकी भाँति शोभा पाने लगे। अन्तमें कर्णने अर्जुनके सारथि उत्तरको विद्धकर, तीन बाणोंसे उनके रथकी ध्वजा भी काट गिरायी। तब अर्जुनने सुप्तोत्थित सिंहकी भाँति सावधान हो, कर्णपर असंख्य बाण-वृष्टिकर, उसको इस तरहसे घायल कर दिया, कि उसके बाहु, स्कन्ध, ललाट और ग्रीवा आदि अङ्ग-प्रत्यङ्ग लहूलुहान होगये! इस तरह अर्जुनके गाण्डीवसे छूटे हुए, साक्षात् यम-समान, बाणोंसे अत्यन्त व्याकुल हो, कर्ण समरांगणसे प्राण लेकर भाग गया।

कृपार्ज्जुन-संग्राम

ज्योंही कर्ण रण-भूमिसे पीठ दिखाकर भागा, त्योंही दुर्योधनादि महारथियोंने, दल-बल सहित बाण-वृष्टि करते हुए, अर्जुनपर आक्रमण किया। अर्जुन भी, सिंधुतटस्थ विशाल पर्वतकी नाईं, कुरु-सेनाका वेग रोककर, उसपर भीषण रूपसे बाण बरसाने लगे। सूर्यके प्रकाशसे जिस तरह पृथ्वी व्याप्त हो जाती है, उसी तरह अर्जुनके बाणोंसे सारा लड़ाईका मैदान व्याप्त हो गया। अश्वारोही, रथारोही, गजारोही और पदातिक – कोई भी ऐसा सैनिक नहीं बचा, जो अर्जुनके बाणोंसे दो-दो अँगुलपर विद्ध न हुआ हो। उत्तरकी रथ-परिचालन-शैली, अश्वोंकी सुशिक्षा और अर्जुनकी दिव्यास्त्र-प्रयोग-कुशलता देखकर बड़े-बड़े वीरोंको भी दाँतों-तले अँगुली दबानी पड़ी। मध्याह्नके सूर्यपर जिस प्रकार किसीकी दृष्टि नहीं ठहरती, उसी प्रकार इस समय अर्जुन पर भी दृष्टि डालनेकी शक्ति किसीमें नहीं थी। रक्ताक्त योद्धाओंकी ओर देखनेसे कुसुमित पलाश-वनकी शोभाका स्मरण होने लगता था। घोड़े बाणोंकी वेदनासे व्याकुल हो भागने लगे। हाथी, मर्म्म स्थानोंमें

बाणोंके लगनेसे, संग्राम-भूमिमें गिरकर मरने लगे। प्रलय-कालके समय अग्नि जिस तरह स्थावर, जङ्गम जगत्‌को दग्ध कर देती है, उसी तरह अर्जुन भी रिपु-कुलका बुरी तरह संहार करने लगे। उस समय अर्जुनके सामने जो वीर आया, उसीको उन्होंने जीता न जाने दिया। समस्त रण-भूमि अर्जुनके बाणोंके शब्दसे ध्वनित हो रही थी। वनमें एक साथ चलने वाला हाथियोंका झुण्ड जिस प्रकार अपना मार्ग बना लेता है, उसी प्रकार अर्जुनका रथ भी शत्रु-सेनामें बिना परिश्रमके अपना मार्ग बना लेता था। उस समय शत्रुगण यही समझने लगे, कि यातो स्वयं देवराज इन्द्र अर्जुनके विजयकी इच्छासे युद्ध कर रहे हैं, या विश्व-संहार करनेकी इच्छासे साक्षात् यमराज, अर्जुनका रूप धारणकर, हमारा विनाश कर रहे हैं। अर्जुनने द्रोणाचार्यको ७३ बाणोंसे, भीष्मको ६० बाणोंसे, दुर्योधनको १०० बाणोंसे, दुसहको १० बाणोंसे, अश्वत्थामाको ८ बाणोंसे, दुःशासनको १२ बाणोंसे और कृपाचार्य्यको ३ बाणोंसे बिद्धकर, कर्णके कानपर कर्णिकास्त्र चलाया और उसका रथ तोड़कर सारथी और अश्वोंको भी मार डाला।

इस प्रकार कर्ण तथा अन्यान्य महारथियोंकी दुर्दशा देखकर उत्तरने कहा,—"महाबाहो, पार्थ! अब आप जिधर आज्ञा दें, उधरही रथ ले चलूँ?"

अर्जुनने एक ओर अँगुलीसे बताकर कहा,—"सारथि! वह जो नील पताकापर व्याघ्र-चिह्न दिखाई दे रहा है, वह कृपाचार्य्यजीकी सेनाका अग्र भाग है। इस समय तुम मुझे वहाँ ले चलो। इसके बाद, जिनके रथपर वह कनक-रचित कमण्डलुका चिह्न देख पड़ता है, उनके सामने चलना होगा। वे मेरे गुरु महात्मा द्रोणाचार्यजी महाराज हैं। वे हम सब शस्त्र-धारियोंके पूज्य और

परम माननीय हैं। इस लिये तुम पहले रथ सहित उनकी प्रद्क्षिणा करना, क्योंकि धर्मानुसार हमें उनके आगे अवश्यही अवनत होना चाहिये। यदि उन्होंने ही पहले मुझपर अस्त्र-प्रयोग किया, तब तो मैं भी उनपर अस्त्र चलाऊंगा, अन्यथा कदापि नहीं।"

अर्जुनकी आज्ञा पाते ही उत्तरने कृपाचार्य्यकी ओर रथ चलाया। कभी दाएँ, कभी बाएँ रथको चलाकर अन्तमें उन्होंने कृपाचार्य्यके रथके सामने अपना रथ ला खड़ा किया! तब अर्जुनने अपना नाम बताते हुए बलपूर्वक शङ्ख बजाया। शङ्ख-ध्वनि सुन, कृपाचार्य्यने भी अपना शङ्ख फूँका और एक बड़ा भारी धनुष उठाकर टंकार शब्द किया। दोनों वीर समरोचित साहससे परस्पर सम्मुख होकर शरत्कालीन, दो पर्वतोंकी भाँति शोभा पाने लगे। आरम्भमें कृपाचार्य्यने अर्जुनपर दस मर्मभेदी बाण चलाये। अर्जुनने भी गाण्डीव उठाकर कई मर्मभेदी बाण छोड़े; परन्तु कृपाचार्य्यने उन्हें मार्गमें ही काट गिराया। इस प्रकार अपने बाणोंको व्यर्थ जाते देख, अर्जुनने बड़े क्रोध पूर्वक सारी दिशाओंको बाणोंसे भर दिया। थोड़ी देरके लिये आचार्य्य कृप भी बाणोंकी आड़में हो रहे। इन बाणोंसे कृपाचार्य्य घायल तो हुए, परन्तु शीघ्रही उन्हें हटाकर सिंह-नाद करने लगे।

उनकी गर्जना सुनकर पार्थ की क्रोधाग्नि भड़क उठी। उन्होंने पैने बाणोंसे कृपाचार्यके घोड़ोंको छेद डाला। बाणोंकी पीड़ासे घोड़े उछलने लगे, जिससे कृपाचार्य्य भी स्थिर न रह सके। अर्जुनने उन्हें स्थान-भ्रष्ट होते देख, मान-रक्षाके विचारसे उनपर और बाण नहीं छोड़े; किन्तु आचार्य्यने शीघ्रही सम्हलकर, दस बाणोंसे अर्जुनको विद्ध कर दिया। तब अर्जुनने भल्लास्त्र छोड़कर उनका धनुष तोड़ डाला और अँगुलित्राण भी काट गिराया।

फिर उन्होंने कई बाण इस होशियारीसे मारे, कि कृपाचार्य्यके शरीरको चोट न आकर केवल उनका कवचही कट गया! उस समय बिना कवचके कृपाचार्य्यका शरीर केंचुली छूटे सर्पकी तरह दिखाई देने लगा। धनुषके टूटनेपर जब उन्होंने दूसरा धनुष उठाया, तब उसे भी अर्जुनने काट गिराया। इस प्रकार कृपाचार्य्यने जब-जब धनुष उठाया, तब-ही-तब अर्जुनने उसे काट गिराया। तब आचार्य्यने क्रोधपूर्वक एक शक्ति अर्जुनपर चलायी। उस शक्तिको बिजलीकी तरह अपनी ओर आते देख, अर्जुनने एक साथ दस बाण छोड़कर, उसे मार्गमें ही व्यर्थ कर दिया! अपनी शक्तिको इस प्रकार बिफल हुआ देख, आचार्य्यने एक धनुषपर दो डोरियाँ चढ़ाकर, दस बाण और एक भालेसे अर्जुनको बिद्ध कर दिया। साथही अर्जुनने बज्र-समान तेरह बाण इस ढँगसे चलाये, कि एकसे रथ, चारसे चारों घोड़े, एकसे सारथी, तीनसे रथके तीनों बाँस, दोसे पहिये, एकसे ध्वजा और एकसे कृपाचार्य्य-का हृदय विद्ध हो गया। जब कृपाचार्य्यसे कुछ न बन पड़ा, तब वे एक गदा लिये अर्जुनपर झपट पड़े। परन्तु वह भी निष्फलही हुई; क्योंकि ज्योंही कृपाचार्य्यने मारनेके लिये गदा ऊपर उठायी, त्योंही अर्जुनने बाणोंसे उसके टुकड़े-टुकड़े उड़ा दिये। यह देख कृपाचार्य्यकी रक्षाके लिये, कौरव-सैनिक बड़े वेगसे अर्जुनपर बाण-वृष्टि करने लगे। कृपाचार्य्य भागकर एक दूसरे रथमें जा बैठे।

द्रोणार्जुन-युद्ध

कृपाचार्य्यके भाग जानेपर अर्जुन द्रोणाचार्य्यकी तरफ झुके। अर्जुनको आगे बढ़ता देख, द्रोणने भी अपना रथ आगे बढ़ाया। साथही उत्तरने अर्जुनके कहे अनुसार बड़ी फुर्तीसे रथ घुमाकर

आचार्य्यके रथकी परिक्रमा की और अन्तमें अपना रथ उनके सामने ला खड़ा किया।

युद्धार्थ अर्जुनको सामने देख, आचार्य्यने शङ्ख बजाया। दोनों शस्त्रास्त्र विशारद गुरु-शिष्य को युद्धार्थ उपस्थित देख, कौरव-सेना काँपने लगी।

अर्जुनने द्रोणाचार्य्यको भक्ति पूर्वक प्रणाम कर, प्रसन्न चित्तसे कहा,—"हे समर दुर्जय गुरो! हम लोगोंने वन-वासमें अनेक कष्ट सहे हैं और उन्हींका बदला चुकानेके लिये इस कार्य्यमें प्रवृत्त हुए हैं; इस लिये हम लोगोंको क्षमा कीजियेगा। मेरा प्रण है, कि जबतक आप मुझपर प्रहार न करेंगे, तबतक मैं भी आपपर बाण न चलाऊँगा। अतएव पहले आपही मुझपर बाण चलाइये।"

यह सुन द्रोणाचार्य्यने बीस से भी अधिक बाण अर्जुनपर चलाये, परन्तु अर्जुनने उनको बीचमेंही काट गिराया। पश्चात् आचार्य्यने शीघ्रता पूर्वक एक हज़ार बाणोंसे अर्जुनको रथ सहित ढाँक दिया। इस प्रकार दोनों महावीरोंमें बड़ाही भयानक युद्ध छिड़ गया। दोनोंही दिव्यास्त्र-प्रयोगमें पारदर्शी होनेके कारण महाशरोंकी वर्षा करने लगे! गुरु-चेलेका यह रोमांचकारी युद्ध देखकर दर्शक योद्धा कहने लगे,—"क्या अर्जुनके सिवा और कोई वीर द्रोणाचार्य्यसे लड़ सकता है? देखिये, क्षत्रिय-धर्म कैसा भयानक है। इसमें गुरुपर अस्त्र चलाना पाप नहीं समझा जाता।"

यद्यपि दोनों वीर अत्यन्त क्रोध पूर्वक बाण-वृष्टिकर एक दूसरेको आच्छन्न कर रहे थे, परन्तु एक दूसरेको हरा नहीं सकता था। यदि आचार्य्यने भयङ्कर बाणसे अर्जुनको आच्छादित कर दिया, तो अर्जुनने भी शीघ्रही उन्हें दूर करके आचार्य्यको बाणोंमें छुपा दिया! इस प्रकार वृत्त-वासव-युद्ध की तरह गुरु-शिष्यका घन-

घोर संग्राम होने लगा। जब-जब आचार्य्य अर्जुनपर पैने बाणों-की वृष्टि करते, अर्जुन उनको आकाशमें रोककर काट डालते थे। अन्तमें आचार्य्य द्वारा छोड़े ऐन्द्र, वारुण, पवन आदि दिव्यास्त्रोंको भी अर्जुन नष्ट करने लगे। जब अर्जुनके बाण आचार्य्यके अस्त्रों-को विफल कर लोगोंपर गिरते थे, तब उन्हें वज्रसे लगते थे। उस समय हाथी, घोड़े, सैनिक आदि सभीके अङ्गोंसे खूनके फौव्वारे छूट रहे थे! कहीं बाहु-दण्ड, कहीं रथ-खम्भ, कहीं मातङ्ग, कहीं कवच और कहीं सैनिकोंकी लोथोंसे संग्राम-भूमि भर गयी थी।

जिस समय दोनों गुरु-शिष्य, बलि-वासवकी तरह, क्षत-विक्षत हो, प्राणपनसे तुमुल युद्ध कर रहे थे, उसी समय आकाशसे विस्मयान्वित देवताओंने,—"अर्जुन धन्य है! अर्जुन धन्य है!" की जयध्वनि की। अन्तमें अर्जुनने ऐसी बाण-वृष्टि की, कि जिससे पवनका चलना भी रुक गया! उन्होंने तर्कससे कब बाण निकाला, कब धनुषपर चढ़ाया और कब छोड़ा, यह कोई देख नहीं सकता था। उसी समय अर्जुनने कई ऐसे बाण चलाये, कि जिनमेंसे एक लाख बाणोंने निकलकर आचार्य्यको रथ सहित छुपा दिया। यह देखकर कौरव-सेनामें त्राहि-त्राहि और हाहाकार मच गया। अपने पिताको इस प्रकार संकटमें पड़ा देख, अश्वत्थामाने अपना रथ आगे बढ़ाकर अर्जुनका सामना किया।

अश्वत्थामासे युद्ध

अर्जुनके बल-विक्रमको देखकर अश्वत्थामा मन-ही-मन उन-की प्रशंसा कर रहे थे; किन्तु पिताको हारते देख, वे अपने क्रोध-को सम्हाल न सके। अर्जुनके सामने आतेही वे, बरसनेवाले

घोर संग्राम होने लगा। जब-जब आचार्य्य अर्जुनपर पैने बाणों-की वृष्टि करते, अर्जुन उनको आकाशमें रोककर काट डालते थे अन्तमें आचार्य्य द्वारा छोड़े ऐन्द्र, वारुण, पवन आदि दिव्यास्त्रोंको भी अर्जुन नष्ट करने लगे। जब अर्जुनके बाण आचार्य्यके अस्त्रों-को विफल कर लोगोंपर गिरते थे, तब उन्हें वज्रसे लगते थे। उस समय हाथी, घोड़े, सैनिक आदि सभीके अङ्गोंसे खूनके फौव्वारे छूट रहे थे! कहीं बाहु-दण्ड, कहीं रथ-खम्भ, कहीं मातङ्ग, कहीं कवच और कहीं सैनिकोंकी लोथोंसे संग्राम-भूमि भर गयी थी।

जिस समय दोनों गुरु-शिष्य, बलि-वासवकी तरह, क्षत-विक्षत हो, प्राणपनसे तुमुल युद्ध कर रहे थे, उसी समय आकाशसे विस्मयान्वित देवताओंने,—"अर्जुन धन्य है! अर्जुन धन्य है!" की जयध्वनि की। अन्तमें अर्जुनने ऐसी बाण-वृष्टि की, कि जिससे पवनका चलना भी रुक गया! उन्होंने तर्कससे कब बाण निकाला, कब धनुषपर चढ़ाया और कब छोड़ा, यह कोई देख नहीं सकता था। उसी समय अर्जुनने कई ऐसे बाण चलाये, कि जिनमेंसे एक लाख बाणोंने निकलकर आचार्य्यको रथ सहित छुपा दिया। यह देखकर कौरव-सेनामें त्राहि-त्राहि और हाहाकार मच गया। अपने पिताको इस प्रकार संकटमें पड़ा देख, अश्वत्थामाने अपना रथ आगे बढ़ाकर अर्जुनका सामना किया।

अश्वत्थामासे युद्ध

अर्जुनके बल-विक्रमको देखकर अश्वत्थामा मन-ही-मन उन-की प्रशंसा कर रहे थे; किन्तु पिताको हारते देख, वे अपने क्रोध-को सम्हाल न सके। अर्जुनके सामने आतेही वे, बरसनेवाले

घोर संग्राम होने लगा। जब-जब आचार्य्य अर्जुनपर पैने बाणों-की वृष्टि करते, अर्जुन उनको आकाशमें रोककर काट डालते थे। अन्तमें आचार्य्य द्वारा छोड़े ऐन्द्र, वारुण, पवन आदि दिव्यास्त्रोंको भी अर्जुन नष्ट करने लगे। जब अर्जुनके बाण आचार्य्यके अस्त्रों-को विफल कर लोगोंपर गिरते थे, तब उन्हें वज्रसे लगते थे। उस समय हाथी, घोड़े, सैनिक आदि सभीके अङ्गोंसे खूनके फौव्वारे छूट रहे थे! कहीं बाहु-दण्ड, कहीं रथ-खम्भ, कहीं मातङ्ग, कहीं कवच और कहीं सैनिकोंकी लोथोंसे संग्राम-भूमि भर गयी थी।

जिस समय दोनों गुरु-शिष्य, बलि-वासवकी तरह, क्षत-विक्षत हो, प्राणपनसे तुमुल युद्ध कर रहे थे, उसी समय आकाशसे विस्मयान्वित देवताओंने,—"अर्जुन धन्य है! अर्जुन धन्य है!" की जयध्वनि की। अन्तमें अर्जुनने ऐसी बाण-वृष्टि की, कि जिससे पवनका चलना भी रुक गया! उन्होंने तर्कससे कब बाण निकाला, कब धनुषपर चढ़ाया और कब छोड़ा, यह कोई देख नहीं सकता था। उसी समय अर्जुनने कई ऐसे बाण चलाये, कि जिनमेंसे एक लाख बाणोंने निकलकर आचार्य्यको रथ सहित छुपा दिया। यह देखकर कौरव-सेनामें त्राहि-त्राहि और हाहाकार मच गया। अपने पिताको इस प्रकार संकटमें पड़ा देख, अश्वत्थामाने अपना रथ आगे बढ़ाकर अर्जुनका सामना किया।

अश्वत्थामासे युद्ध

अर्जुनके बल-विक्रमको देखकर अश्वत्थामा मन-ही-मन उन-की प्रशंसा कर रहे थे; किन्तु पिताको हारते देख, वे अपने क्रोध-को सम्हाल न सके। अर्जुनके सामने आतेही वे, बरसनेवाले



द्रोणार्जुन-युद्ध।

“जब-जब आचार्य अर्जुनपर पैने बाणोंकी वृष्टि करते, तब-तब अर्जुन उनको आकाशमेंही रोककर काट डालते थे।”

[पृष्ठ—१७२]

बादलकी तरह, अविरल बाण-वृष्टि करने लगे। तब अर्जुनने, अपना रथ अश्वत्थामाकी तरफ घुमाकर, द्रोणाचार्य्यको भागनेका मौक़ा दे दिया और उत्साह-पूर्वक अश्वत्थामापर बाण बरसाने लगे। दोनों वीरोंमें महाघोर संग्राम होने लगा। आकाश, दिशा, विदिशा, सभी बाण-समूहोंसे आच्छादित हो जानेके कारण सूर्य्य-का प्रकाश भी कम पड़ गया! जिस प्रकार बड़ी भारी आँधीके कारण धूल उड़नेसे अँधेरासा हो जाता है, उसी भाँति बाणोंके कारण वहाँ अँधेरा छा गया। उस समय जलते हुए बाँसोंके फटनेके समान 'चट्-चट्' शब्द सुनायी देने लगे। कुछ देर युद्ध होनेपर अश्वत्थामाके घोड़े अर्जुनके बाणोंसे ऐसे गिर पड़े, कि फिर उठेही नहीं। अर्जुन इस प्रकार युद्ध करही रहे थे, कि इसी बीच अश्वत्थामाने शर-जालके मध्यमें एक छोटासा छिद्र पा, उस-मेंसे तीर छोड़कर अर्जुनके गाण्डीवकी डोरी काट दी! दर्शकोंने इस सफाईको देखकर अश्वत्थामाकी बहुत प्रशंसा की। तत्पश्चात् अश्वत्थामाने, आठ धनुषके अन्दाज़की दूरीपर पीछे हटकर, कई कंक-पत्र-युक्त बाणों द्वारा अर्जुनके हृदयपर आघात किया। अर्जुनने उच्च स्वरसे हँसकर गाण्डीवपर दूसरी डोरी चढ़ायी और अर्द्धचन्द्राकार बाण संधानकर अश्वत्थामाके सम्मुख आ डटे। अब दोनों वीर सर्वजन-रोमाञ्चकारी महा भयानक संग्राम करने लगे। सभी कौरव विस्मयसे दोनोंका युद्ध देखने लगे। अर्जुनके दोनों अक्षय तूणीर बाणोंसे सदा परिपूर्ण रहनेके कारण वे अविराम युद्ध करते रहे, किन्तु अश्वत्थामाका तूणीर अत्यधिक बाण-वृष्टिसे खाली हो गया; अतएव अर्जुनने उन्हें सहजमेंही जीत लिया। अश्वत्थामा खेत छोड़ भाग गये।

कर्णार्जुन-युद्ध

यह देखकर कर्णने बड़े ज़ोरसे धनुषका टंकार-शब्द किया। अर्जुनने टंकार सुनतेही उनकी ओर देखा। उधर अश्वत्थामाको भागा देखकर कौरव-सैनिकोंने भी अर्जुनपर बाण छोड़ने आरम्भ कर दिये, किन्तु अर्जुनने उनकी कुछ भी परवाह न करके कर्णपर आक्रमण किया और क्रोध-पूर्वक कहा :—

"कर्ण! तुमने सभामें मूँछोंपर हाथ फेरकर कहा था, कि 'मेरे समान इस भूमण्डलपर दूसरा कोई योद्धाही नहीं है।' उस शेख़ीकी परीक्षाका दिन आज आ पहुँचा है। आज मेरे साथ युद्ध करनेसे तुम अपने बलको जान लोगे और फिर कभी, इस तरहकी, बढ़-बढ़कर बातें न करोगे। तुमने धर्मको त्यागकर व्यर्थही मुझे पहले कई कर्कश वाक्य कहे हैं, किन्तु इस समय जिस कार्य्यके लिये तुम सामने आये हो, वह अत्यन्तही कठिन है। राधेय! तुमने एक दिन हमारा अनादर करते हुए, अपने मुँह अपनी प्रशंसाके जो गुब्बारे उड़ाये थे, उन्हें आज तुम कौरवोंके सामने प्रत्यक्ष करके दिखा दो। तुम नीचोंने एकत्र होकर भरी सभामें द्रौपदीको जिस प्रकार कष्ट पहुँचाये हैं; वे सब मेरे हृदयमें शूल-की तरह चुभे हुए हैं। आज उसी दुष्टताका मज़ा चखानेका मुझे यह सुअवसर प्राप्त हुआ है। उस समय धर्म-पाशमें बँधा होनेके कारण मैं अपने क्रोधको पी गया था, पर आज मैं युद्धमें तुम्हें, तुम्हारे कियेका मज़ा चखा दूँगा। हम लोगोंको जिस कारण तेरह वर्ष कष्ट भोगने पड़े, उसका फल आज तुम्हें अवश्यही भोगना पड़ेगा। आओ कर्ण! मेरे साथ युद्ध करनेको प्रस्तुत हो जाओ, जिससे मैं तुम्हारी शेख़ीको धूलमें मिला दूँ और जिनसे तुम अपने मुँह

मियाँ मिट्ठू बने हुए हो, वे कौरव भी ज़रा तुम्हारी दुर्दशा अपनी आँखों देख लें। आओ।"

कर्णने भी अर्जुनको कई कटुवाक्य कहते हुए कहा,—"अर्जुन! जब मैं तुम्हें अपना पराक्रम दिखानेको तुम्हारे आगे आया हूँ, तब भलेही रुद्र भी तुम्हारी रक्षाको क्यों न आ जायें, मैं कदापि नहीं डरूँगा। मेरे साथ युद्ध करनेकी तुम्हारी इच्छा, जो बहुत दिनोंसे थी, उसे आज पूर्ण करनेका समय आ गया है। अब तुम्हें पता लग जायेगा, कि मुझमें कितना पौरुष है।"

अर्जुनने झिड़ककर कहा,—"कर्ण! तेरे समान कोई निर्लज्ज न होगा। अभी थोड़ी देर पहलेही युद्धमें तू मेरे सामनेसे भाग चुका है; इतनेपर भी तू जीवित है! यदि कोई लज्जाशील होता, तो चुल्लूभर पानीमें डूब मरता। मैंने तेरे भाईका, तेरे सामनेही, सिर काटा है। कितनी शर्मकी बात है, कि तू उस समय देखता रहा और मेरा कुछ भी नहीं कर सका। संसारमें तेरे समान आत्म-श्लाघी मुझे तो और कोई नहीं दिखाई देता। निर्लज्ज! विष खाकर मर जा!!"

इतना कह, अर्जुनने मर्म-भेदी बाणोंकी वृष्टि करते हुए कर्णपर आक्रमण किया। कर्णने भी उन असंख्य अग्नि-समान बाणोंका जवाब, बरसाती बादलकी बूँदोंके समान, बाण बरसाकर दिया। समस्त दिशाएँ विराट् बाण-जालसे आवृत हो गयीं। अर्जुनने क्रुद्ध हो, 'निशिताग्र' बाणों द्वारा, कर्णके घोड़ोंको बिद्धकर दोनों हाथोंके आवरण तथा निषंगको भी काट दिया। तब कर्णने दूसरे निषंगसे बाण निकालकर अर्जुनका हस्त-भेद और मुष्टि-भेद किया। इससे क्रोधित हो, अर्जुनने कर्णका धनुष तोड़ डाला और निरुपाय कर्णकी फेंकी हुई शक्तिको भी शराग्निसे भस्म कर

डाला। गाण्डीवसे छूटे अगणित बाणोंसे कर्णके पृष्ठ-रक्षक और अनेक पैदल योद्धा, पृथ्वीपर गिरकर, यम-सदनको यात्रा करने लगे। अन्तमें अर्जुन कानतक धनुषको संधानकर इतने पैने तीर चलाने लगे, कि जिनके लगतेही असंख्य योद्धागण मरने लगे। अर्जुनने कर्णके घोड़ोंको मारकर एक अति तीक्ष्ण बाण धनुषपर चढ़ा, कर्णके हृदयका लक्ष्य ठीक करके छोड़ दिया। वह अव्यर्थ बाण कर्णके कवचको तोड़कर छातीमें चुभ गया। कर्ण उसी क्षण मूर्च्छित हो गया। थोड़ी देर बाद जब उसकी मूर्च्छा कुछ कम हुई, तब उसका सारथी उसे उत्तर दिशाकी ओर ले भागा। यह देखकर अर्जुन और उत्तरने उसकी खूबही हँसी उड़ायी!

भीष्मार्जुन-युद्ध

इस प्रकार कर्णको पराजित कर अर्जुनने उत्तरसे अपना रथ भीष्म पितामहके पास ले चलनेको कहा। परन्तु उत्तर बाणाघातसे अत्यन्त व्यथित और व्याकुल हो चुका था। विशेषतः ऐसे घोर युद्धको देखकर वह अत्यन्त भयभीत भी हो गया था। उसने अर्जुनसे कहा,—"महाराज! मैं बिल्कुल व्याकुल हूँ। घोड़ोंकी लगाम और चाबुक थामनेकी शक्ति भी अब मुझमें नहीं रही। अधिक क्या कहूँ, मेरी बुद्धि इस समय ठिकाने नहीं है। मुझे यह पृथ्वी घूमती हुई दिखाई देती है, इसलिये अब मैं रथ चलानेमें बिल्कुलही असमर्थ हूँ।"

उत्तरको इस प्रकार मारे भयके व्याकुल होता देख, अर्जुनने कहा,—"वत्स! तुम्हें डर किस बातका है? धैर्य्य धारण करो। देखो, यह सब अद्भुत कर्म मैं तुम्हारीही सहायतासे कर सका हूँ। देखो, जब मैं युद्धमें संलग्न होऊँ, तब खूब धैर्य्य धारणकर घोड़ोंको

चलाया करो। तुम वीर पिताके वीर पुत्र हो, प्रसिद्ध क्षत्रिय-कुलमें तुम्हारा जन्म हुआ है, इसलिये इस प्रकार हिम्मत हारना तुम्हें शोभा नहीं देता।"

इस भाँति उत्तरको सान्त्वना दे और उत्साह बँधाकर, अर्जुनने उन्हें पितामह भीष्मके सम्मुख रथ ले चलनेकी आज्ञा देकर कहा:—"कुमार! युद्धमें मैं पहले डोरी सहित उनके धनुषको काटूँगा, फिर जब मैं दिव्यास्त्रोंका प्रयोग करने लगूँगा, तब तुम्हें मालूम होगा, कि बादलोंसे मानों बिजलीकी चमक उत्पन्न हो रही है। पास खड़े शत्रु भी मेरे इस गाण्डीवको देखकर यह अनुमान न कर सकेंगे, कि अर्जुन दाहिने हाथसे बाण छोड़ रहा है या बायेंसे? आज मैं रणस्थलीमें रक्त-गङ्गा प्रवाहित करूँगा। आज मेरे अस्त्राघातसे कौरवोंकी सारी सेना पहियेकी तरह चक्कर खाती नज़र आयेगी। बाण-विद्यामें मैं कितना निपुण हूँ, यह आज सबको मालूम हो जायेगा। सुमेरु, जिसकी चोटी आकाशसे बातें करती हैं, उसको मैं बाणों द्वारा धूलमें परिणत कर सकता हूँ। मैंने इन्द्रसे दृढ़ मुष्टि, ब्रह्मासे हस्त-लाघवता और शङ्करसे नाना भाँतिके तुमुल संग्रामकी शिक्षा प्राप्त की है। मैंने समुद्र-पार हिरण्यपुरवासी साठ हज़ार उग्रधन्वा महारथियोंको अपने बाहु-बलसे पराजित किया है। जब मैंने रुद्रसे रौद्रास्त्र, वरुणसे वरुण-पाश, अग्निसे आग्नेयास्त्र, वायुसे पवनास्त्र और देवराज इन्द्रसे वज्रादि अस्त्र-शस्त्र प्राप्त किये हैं, तब क्या कुरु-सेनाको विध्वंस कर डालना मेरे लिये कोई कठिन कार्य्य है? तुम निर्भय होकर रथ चलाओ।"

अर्जुनके उक्त वचनोंसे आश्वासित हो उत्तर, उस भीष्म-रक्षित सेनामें, शीघ्रता पूर्वक अपना रथ ले चला। भीष्मने अर्जुनको, जयकी इच्छासे, सामने आते देख, बीचमेंही रोकना शुरू किया।

तब अर्जुनने सुवर्णाग्र बाणसे उनकी ध्वजा काट गिरायी। यह देख दुःशासन, दुःसह, विकर्ण और विवंशति—इन चार भाइयोंने एकत्र होकर भीमधन्वा अर्जुनपर अचानकही आक्रमण कर दिया। दुःशासनके एक भालेसे उत्तरका और दूसरेसे अर्जुनका वक्षःस्थल बिंध गया! तब अर्जुनने क्रोधित हो, गृद्ध-पक्ष-युक्त तीखे बाणसे उसके धनुषके टुकड़े-टुकड़े कर, पाँच बाणोंसे उसका वक्षःस्थल भी छेद डाला। बाणोंके लगतेही वह अपने प्राण लेकर संग्रामसे भाग निकला। इसके बाद विकर्णने गार्द्ध-पत्र-बाणों द्वारा अर्जुनको विद्ध करना आरम्भ किया। अर्जुनने भी उसी क्षण मसृणपर्व-बाण द्वारा उसके ललाटपर आघात किया, जिसके लगतेही वह उसी क्षण रथसे नीचे आ गिरा। यह देख दुःसह और विवंशति एक साथ अर्जुनपर झपटे और पैने बाणों द्वारा उन्हें आघात पहुँचाने लगे। अर्जुनने, एक साथ दो बाणोंको गाण्डीवपर चढ़ाकर, दोनोंको छेद दिया और तुरन्तही उनके घोड़ोंको भी मार डाला। उन दोनोंको घायल तथा वाहन-हीन देखकर उनके पृष्ठ-रक्षक उन्हें दूसरे रथमें डालकर ले भागे।

इसके बाद सब कौरव-महारथी मिलकर अर्जुनपर चारों ओरसे बाण-वृष्टि करने लगे। अर्जुनने भी उन सबोंको बाणोंसे तोप दिया। उस समय बाणोंकी सनसनाहट, घोड़ोंकी हिनहिनाहट और शङ्ख-भेरी आदिके भैरव निनादसे कान पड़ा शब्द भी सुनायी न देता था। जिस समय अर्जुन समर-भूमिमें अत्यन्त शीघ्रता पूर्वक बाण बरसा रहे थे, उस समय, उनकी भयङ्कर मूर्त्तिको साक्षात् महाकाल समझकर, सैनिकगण मारे भयके वहाँसे खसकने लगे। रथी रथसे और घुड़सवार घोड़ोंपरसे पृथ्वीपर गिर-गिरकर प्राण छोड़ने लगे। वीरोंकी लोथोंसे सारी समर-भूमि

भर गयी। अर्जुन इस भाँति कुरु-सेनाका विनाश करने लगे, मानों स्वयम् अर्जुन-रूपी काल, गाण्डीव लिये, रणांगणमें नृत्यकर रहा है। अर्जुनके बाणोंसे कटे हुए मस्तक, पृथ्वीपर गिरते समय, ऐसे मालूम होते थे, मानों अप्सराएँ आकाशसे कमल-पुष्प बरसा रही हों। जो आजसे पूर्व, तेरह वर्षोंतक, अनेक कष्ट सहते, दर-दरकी खाक छानते, लुकते-छुपते, जङ्गल-जङ्गल मारे-मारे फिरते थे, वही अर्जुन आज इस प्रकार रौद्र-रूप धारणकर कौरव-सेनाका संहार करेंगे, इसका किसीको स्वप्नमें भी गुमान नहीं था।

अर्जुनके इस पराक्रमको देखकर, आसपासके योद्धा, दुर्योधनके सामनेही, हथियार रखकर बैठ गये। इस भाँति अर्जुन, कौरव-समूहका मथनकर, निर्भय चित्तसे रण-भूमिमें विचरने लगे। इस महासमरके परिणाम-स्वरूप, घोर रुधिर रक्तकी, एक नदी बड़े वेगसे बह चली!

इस प्रकार अर्जुनको रण-क्षेत्रमें निर्भय विचरण करते देख, फिरसे दुर्योधन, कर्ण, दुःशासन, विवंशति, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा आदि कई महारथी, क्रोधसे अधीर होकर, अपने बड़े-बड़े धनुष उठाये, अर्जुनको मारनेके लिये आगे बढ़े। अर्जुनने भी अपना रथ उनकी तरफ बढ़ा दिया। तब कृप, कर्ण और द्रोणाचार्य्यने, महास्त्र-प्रयोग-द्वारा उनका आगे बढ़ना रोककर, बाणोंसे आकाशको आच्छादित कर दिया। उन्होंने अनेक रीतियोंसे अर्जुनपर अगणित बाण बरसाये, किन्तु अर्जुनने उनकी ज़रा भी परवाह नहीं की और हँसते हुए, आदित्य-समान तेजःपुञ्ज, ऐन्द्रास्त्र-को गाण्डीवपर चढ़ा दिया। इस अस्त्रसे जो प्रदीप्त-किरण-माला प्रकट हुई, उससे सारा कौरव-कुल व्याकुल हो उठा। पहाड़पर अग्नि अथवा बादलोंमें बिजली जिस प्रकार देख पड़ती है, ठीक

उसी तरह गाण्डीवपर ऐन्द्रास्त्र शोभा पाने लगा। उसे देखतेही सारे योद्धा हतोत्साह हो संग्रामसे भागने लगे।

इसी समय पितामह भीष्म, अपनी सेनाको भागते देख, मर्म-भेदी पैने बाण लेकर अर्जुनके सामने आये। आतेही उन्होंने अर्जुनकी ध्वजापर आठ बाण चलाये। अर्जुनने भी उसी क्षण एक बड़े भालेसे भीष्मका छत्र काट गिराया और शीघ्रही कई बाणोंसे उनके ध्वज, बाहन, पृष्ठ-रक्षक तथा सारथीको बुरी तरह घायल कर दिया! भीष्मको यह बात बहुत अखरी। वे विपुल आयुधों द्वारा अर्जुनको ढाँकने लगे। अर्जुन भी क्रुद्ध हो, विद्युत्-वेगसे युद्ध करने लगे। इस तरह भीष्मार्जुनका रोमाञ्चकारी घोर संग्राम होने लगा। एक वीरके भालेपर दूसरे वीरके भालेकी टक्करसे आगकी चिनगारियाँ झड़ने लगीं। जब अर्जुन अपने दोनों हाथोंसे बाण बरसाते, तब गाण्डीव केवल बिजलीके एक चक्रकी तरह दिखाई पड़ता था! कुछही देरमें अर्जुनने पितामह भीष्मको बाणों द्वारा आच्छादित कर दिया, किन्तु उन्होंने तुरन्त-ही सब बाणोंको छिन्न-भिन्नकर अर्जुनको बाणोंसे ढाँक दिया। अर्जुनने शीघ्रही उनके बाणोंको दूरकर भीष्मपर सुवर्णपंख-शरोंकी झड़ीलगा दी, परन्तु भीष्मने उन्हें अपने बाणों द्वारा मार्गमेंही काट गिराया। दोनों वीर अस्त्रों द्वारा अस्त्र निवारणकर, रणांगण-में क्रीड़ा करने लगे। दोनोंही प्राजापात्य, ऐन्द्र, आग्नेय, याम्य, रौद्र, कौवर, वायव्य और वारुण आदि दिव्यास्त्रोंके चलानेमें प्रवीण थे। दिव्यास्त्रोंसे युद्ध करते-करते अन्तमें दोनों वीर साधारण बाणोंसे लड़ने लगे। इसी बीच अर्जुनने, पितामहके पास पहुँच-कर, छुरेके समान पैने बाणसे, उनका धनुष काट दिया। साथही वे दूसरा धनुष उठाकर युद्ध करने लगे। दोनों रण-पण्डितोंने

सारी दिशाएँ बाणोंसे आच्छादित कर दीं। कभी अर्जुन, भीष्मको अपने अस्त्र-पाण्डित्यका परिचय देते, तो कभी भीष्म, अर्जुनको अपनी रण-कुशलताका दिग्दर्शन कराते। अन्तमें अर्जुनने भीष्मके पृष्ठ-रक्षकोंको मार डाला। तत्पश्चात् अर्जुनने एक अद्भुत अस्त्रका प्रयोग किया, जिसे देखकर आकाश-स्थित गन्धर्वराज चित्रसेनने इन्द्रसे कहा,—"महाराज! देखिये, अर्जुन दिव्यास्त्र-प्रयोगमें कितने सुदक्ष हैं?"

अर्जुनने उस अस्त्रको छोड़ दिया। उसके छूटतेही उसमेंसे असंख्य अस्त्र निकलने लगे। यह देख, आकाशसे, इन्द्रने दोनों वीरोंके मस्तकपर पुष्प-वृष्टि की। अर्जुन, भीष्मपर बाण चलानेकी तैयारी कर ही रहे थे, कि उनकी बाईं कुक्षमें पितामहका छोड़ा हुआ बाण आ लगा। अब तो अर्जुनने अत्यन्त क्रोधित हो, एक पृथुधार गार्द्ध-पत्र-युक्त बाणसे भीष्मका धनुष काट दिया और दूसरे दश बाणोंसे उनका हृदय बिद्ध कर दिया। पितामह बाणोंके लगतेही रथका डण्डा पकड़कर बहुत देरके लिये बेहोश हो गये। सारथी उनकी यह दशा देख, रथको युद्ध-भूमिसे हटा लेगया।

पितामहको भागा देख, दुर्योधन, अपने रथकी पताका उड़ाता हुआ, मैदानमें आया और आतेही उसने अर्जुनके मस्तकपर एक भाला जमाया। भाला लगतेही अर्जुनके सिरसे ख़ूनका फव्वारा छूटने लगा; परन्तु अर्जुन, उसकी कुछ भी परवाह न कर, भीषण वेगसे दुर्योधनपर बाण-वृष्टि करने लगे। दुर्योधन भी अपनी बहादुरी और सफाईके हाथ दिखाने लगा। इसी समय दुर्योधनका भाई विकर्ण, गज-रक्षकों सहित, एक बड़े भारी हाथीपर चढ़कर, फिर वहाँ आ पहुँचा। अर्जुनने हाथीको आता देख, उसके मस्तकमें एक पैना बाण मारा। इन्द्रके वज्रकी तरह वह

कुछ देर बाद जब कौरव-सेनाको होश हुआ, तब वह लज्जित हो, अपने नगरकी ओर लौटने लगी। उस समय अर्जुन, अपने गुरु-जनोंसे मिलने तथा उनकी अभ्यर्थना करनेके लिये, कुछ दूरतक उनके पीछे-पीछे गये। जाते समय अर्जुनने पितामह भीष्म, आचार्य्य द्रोण, कृप तथा अश्वत्थामाको बाणों द्वारा प्रणामकर, एक बाणसे दुर्योधनके रत्न-जटित मुकुटको छेद दिया।

कौरवोंको हार मानकर जाते देख, अर्जुनने उत्तरसे कहा,—

"प्रिय उत्तर! तुम्हारी जीत हो गयी है, अब तुम घोड़ोंको लौटाओ। देखो, ये तुम्हारे शत्रुगण, अपनासा मुँह लेकर, अपने राज्यको लौटे जा रहे हैं। तुम्हारा गो-धन भी प्राप्त हो गया। अतएव चलो, हम भी अब अपने नगरको लौट चलें।"

इसके बाद उन्होंने शत्रुओंको कुढ़ानेके विचारसे गाण्डीवकी टंकार-ध्वनि की और अपना देवदत्त शङ्ख फूँका।

जब कौरव हस्तिनापुरकी ओर गये और अर्जुन विराट्-नगरकी ओर लौटे, तब पहलेके भागकर छिपे हुए कुछ कौरव-योद्धा जङ्गल-से निकल, अर्जुनकी शरण आ, हाथ जोड़ खड़े होगये। वे भूख-प्याससे अत्यन्त व्याकुल हो रहे थे। उन्होंने सिर झुकाकर विनीत भावसे अर्जुनको कहा,—"महाराज! हम आपके दास हैं। इस समय हम क्या करें? आज्ञा दीजिये।"

अर्जुनने कहा,—"वीरो! तुम अब बिलकुल मत डरो और निर्भय होकर अपने-अपने घरोंको जाओ, हम तुम लोगोंकी हिंसा करना या तुम्हें क़ैदी बनाना नहीं चाहते।"

शरणापन्न योद्धा, अर्जुनसे अभय पाकर, उन्हें आयु, कीर्त्ति और यशका आशीर्वाद देते हुए, अपने-अपने स्थानोंको चले गये। तब अर्जुनने उत्तरसे कहा,—"उत्तर! हम पाँचों पाण्डव तुम्हारे

पिताके यहाँ रहते हैं, यह बात केवल तुम्हेंही मालूम है। तुम कदापि यह बात किसीपर प्रकट न करना ; क्योंकि तुम्हारे पिता, अचानक यह बात सुनते ही, भयसे भयभीत और आश्चर्यसे अधीर हो जायेंगे। नगरमें पहुँचकर तुम अपने पितासे कहना, कि तुमनेही कुरु-कुलको जीतकर गो-धनका उद्धार किया है।"

उत्तरने कहा,—"वीर-शिरोमणे ! आपने जो यह भयङ्कर कार्य्य किया है, यह तो हमसे सात जन्ममें भी होना असम्भव था। उस कर्मके करनेकी तो क्या, देखनेकी भी शक्ति मुझमें नहीं है। परन्तु जबतक आप मुझे आज्ञा न देंगे, तबतक मैं आपका परिचय पिता जीको न बताऊँगा।"

इस भाँति अर्जुन, कौरव-सेनाको पराजित कर और गो-धन लौटा, शर-विक्षित शरीरसे, श्मशानकी ओर चलकर, उसी शमी-वृक्षके निकट पहुँचे। वहाँ पहुँचनेपर कपिवर, भूतगण सहित, जो उनके रथपर स्थित थे, अर्जुनको आज्ञा पातेही आकाशमें उड़ गये और रथपर पूर्ववत् सिंह-ध्वजा लगा दी। उत्तरने गाण्डीव और तूणीरको पूर्ववत् उस शमी-वृक्षपर बाँध, अर्जुनको सारथिके स्थानपर बैठाकर, प्रसन्नतासे नगरकी ओर यात्रा की। महावीर अर्जुन भी, पहलेकी तरह वेणी-विन्यासादि द्वारा बृहन्नला-का रूप बना, उत्तरके सारथी बन, नगरमें दाख़िल हुए।

मार्गमें अर्जुनने उत्तरको बहुत कुछ समझाया ; कहा,—"पहले गो-धनको नगरमें भेजकर आनन्द-संवाद पहुँचाओ। हम घोड़ों-को मालिश करके तीसरे पहर नगरमें प्रवेश करेंगे। इस समय तुम ग्वालोंको आज्ञा दे दो, कि वे शीघ्रही इस शुभ संवादको राजासे जा कहें और तुम्हारे विजयकी भी घोषणा कर दें।"

उत्तरके आज्ञानुसार ग्वाले, विजय-समाचार ले, नगरकी ओर

चल पड़े। राजा भी इसी समय, शेष चारों पाण्डवों सहित, त्रिगर्त्तोंको जीतकर राजधानीमें लौटे थे। वहाँ उत्तरको न देख, राजा घबरा गये और विशेषकर उत्तरके, एक हिँजड़ेको सारथी नियुक्तकर, अकेले युद्धमें जानेकी बात सुन, राजाको निश्चय हो गया, कि उत्तर युद्धमें कौरवों द्वारा अवश्यही मारा जा चुका है। इसलिये राजाने आतेही, सबसे पहले, एक चतुरङ्गिणी सेना उत्तरकी रक्षाके लिये भेजी। उस समय धर्मराज युधिष्ठिरने कहा,—"राजन्! जिसका सारथी बृहन्नला हो, उसे इन्द्र भी नहीं जीत सकेगा। आप चिन्ता न कीजिये।"

इसी समय ग्वालोंने आकर उत्तरका विजय-समाचार सुनाया। नगर भरमें मङ्गल-वाद्य बजने लगे।

राजाको चौपड़ खेलनेका बड़ा शौक था। वे खुशी-खुशी चौपड़ खेलने बैठ गये। युधिष्ठिर बातों-ही-बातोंमें बृहन्नलाकी प्रशंसा करने लगे। राजाको बृहन्नलाकी प्रशंसा और अपने पुत्रकी निर्बलता जतलानेवाली बातें बुरी लगीं। राजाको क्रोध आ गया और उन्होंने पासों सहित, एक घूँसा राजा युधिष्ठिरकी नाकपर मार दिया! घूँसेके लगतेही उनकी नाकसे रक्तकी धार गिरने लगी! दैवात् द्रौपदी भी वहाँ उपस्थित थी। उसने उस रक्तको पृथ्वीमें गिरने नहीं दिया और फौरनही एक पात्रमें ले लिया। इसी समय एक दूतने आकर, उत्तरके, बृहन्नला सहित, लौट आनेका समाचार राजाको सुनाया। राजाने उन्हें, बृहन्नला सहित, भीतर ले आनेकी आज्ञा दी। परन्तु युधिष्ठिरने उस दूतके कानमें धीरेसे कहा,—"तुम इस समय केवल उत्तरकोही लाना। यहाँ बृहन्नलाको लानेकी आवश्यकता नहीं; क्योंकि उसको यह प्रतिज्ञा है, कि जो कोई बिना युद्धके मेरे शरीरसे ख़ून निकालेगा, वह

जीवित नहीं बचेगा। ऐसी दशामें मेरी नाकसे खून टपकता देख, वह वीर क्रुद्ध हो, मन्त्री और सेना-सहित, राजाको फौरन मार डालेगा। यहाँ अभी रङ्ग-में-भङ्ग हो जायेगा। यह राज-महल रण-भूमि बन जायेगा।"

दूत केवल उत्तरकोही वहाँ लाया। उत्तरने सभामें प्रवेशकर अपने पिताके चरणोंमें प्रणाम किया। राजाने उत्तरको छातीसे लगा लिया। उत्तरने कङ्क नामधारी युधिष्ठिरको नाकसे रक्त गिरते और सैरन्ध्रीको उनकी सुश्रूषा करते देख, आश्चर्य्यसे पूछा,—"पिताजी! इन्हें किसने सताया है? इस प्रकार पाप-कर्म करनेमें किसकी प्रवृत्ति हुई है?"

विराट्ने कहा,—"पुत्र! महा पराक्रमी कौरव-महारथियोंको हराकर गो-धन प्राप्त करनेवाले, महावीर उत्तरकी निन्दा और उस हिँजड़े वृहन्नलाकी बारम्बार अत्यन्त प्रशंसा करनेवाले इस कुटिल ब्राह्मणको मैंनेही मारा है। अभी क्या, मैं अभी इसे और भी अधिक दण्ड दूँगा।"

उत्तरने घबराकर कहा,—"पिताजी! आप इन्हें शीघ्रही प्रसन्न कीजिये। आपने बड़ी भारी भूल की है। ये आपको घोरतर ब्रह्म-शापसे सवंश ध्वंस कर सकते हैं।"

यह सुन राजा विराट् कङ्कसे, हाथ जोड़कर, क्षमा माँगने लगे। कङ्कने भी उन्हें क्षमाकर कहा,—"राजन्! यदि मेरी नासिकासे यह रक्त, एक बूँद भी, पृथ्वीपर गिर जाता और सैरन्ध्री इस प्रकार न सँभालती, तो आप अवश्यही राज्य-सहित नष्ट हो जाते।"

कुछ क्षण बादही वृहन्नलाने सभामें आकर राजा विराट् और कङ्कको प्रणाम किया! तब विराट्-राजने अपने पुत्र उत्तरकी

भुरि-भूरि प्रशंसा करके कहा,—"बेटा! तुमने भीष्म, द्रोण, कृप, कर्ण और अश्वत्थामा आदि महान् युद्ध-विद्या-विशारदोंको कैसे पराजित किया?"

उत्तरने कहा,—"पिताजी! शत्रु-कुलको पराजित और गो-धनका उद्धार मैंने नहीं किया है। यह महत्कार्य्य एक देव-पुत्रने सम्पादन किया है। वज्र-तुल्य कवचधारी वे वीर्यवान् देव-कुमार, मुझे भयभीत और भागता देख, स्वयम् मेरे रथपर आ बैठे। मैंने उनका सारथ्य-कार्य्य मात्र किया था। उन्होंने महा-बली कृप, द्रोण, अश्वत्थामा, कर्ण और भीष्मको जीता है और गो-धन भी छुड़ाया है। उन देव-पुत्रने दुर्योधनको भागते देखकर कहा,—"दुर्योधन! हस्तिनापुरमें भी तुम अब नहीं बच सकोगे। इस लिये युद्धमें सामने आ जाओ। यदि तुम्हारी जीत होगी, तो वसुन्धराका राज्य करोगे, नहीं तो मरकर अक्षय कीर्त्ति पाओगे। इतना सुनकर दुर्योधन लौटा और अपने महारथियों सहित उनपर बाण छोड़ने लगा। पिताजी! वह घोर संग्राम देखकर मेरे तो रोंगटे खड़े होगये और शरीर काँपने लगा। किन्तु उस सिंह-समान बलवान् पुरुषने बात-की-बातमें उनकी सेनाको छिन्न-विच्छिन्न कर डाला और उन्हें लज्जित करनेके लिये उनके वस्त्र भी छीन लिये। उस अकेले ही वीर देवकुमारने छः महारथियोंको जीत लिया!" विराट्ने पूछा,—"पुत्र! वे महा बल-सम्पन्न देव-तनय कहाँ हैं? मेरी इच्छा है, कि मैं भी उनके दर्शनकर अपने नेत्र सफल करूँ तथा उनकी सादर पूजा करूँ।"

उत्तरने कहा,—"पिताजी! वे देवकुमार अन्तर्द्धान होगये। पर मालूम होता है, कि वे कल या परसों फिर प्रकट होंगे।"

यह सब कुछ सुनकर भी विराटराज यह न जान सके, कि



विराट्-सिंहासन-अधिकार ।

"राजन् ! पाण्डवोंमें अतिरथी, सत्यवादी, जितेन्द्रिय और इन्द्रके समान ऐश्वर्यशाली ये महाराजाधिराज श्रीमान् युधिष्ठिरजी हैं।" [पृष्ठ—१८९]

पाण्डव छद्म-वेशसे हमारेही निकट उपस्थित हैं। इसके बाद अर्जुनने राजाकी आज्ञा लेकर युद्धमें छीने हुए शत्रुओंके कपड़े राजकुमारी उत्तरा को दे दिये। उत्तराने बड़ी प्रसन्नताके साथ उन वस्त्रोंको ग्रहण किया।

अज्ञातवासकी समाप्ति

तीसरे दिन पाण्डव स्नानकर, वस्त्रालङ्कारोंसे भूषित हो, द्रौपदी सहित, सभा-भवनमें आये और राज-सिंहासनको सूना देख, उसपर जा बैठे। इसी बीच विराट-राज, संयोगवश, सभा-भवनमें आ पहुँचे। पाण्डवोंको अपने आसनपर बैठे देख, वे मारे क्रोधके झल्ला उठे और कहने लगे:—

"अरे कङ्क! तुमने इतना दुस्साहस क्यों किया है? तुम तो वही द्यूत-विद्याके जानने वाले हो न? तुमने आज सिंहके सिरपर-पैर रखनेका कार्य्य क्यों किया है? तुमने राजोन्चित वस्त्राभूषणोंसे अपनेको अलंकृतकर, राज-सिंहासनपर बैठनेका साहस किसके बलपर किया है?"

अर्जुनने विराट-राजके मुखसे ये निन्दा और तिरस्कार-सूचक शब्द सुन, युधिष्ठिरकी महान् प्रशंसाकर कहा,—"राजन्! पाण्डवोंमें अतिरथी, महर्षिकल्प, राजर्षि, दीर्घदर्शी, अति तेजस्वी, धर्म-परायण, धृतिमान्, कार्यदक्ष, सत्यवादी, जितेन्द्रिय और इन्द्रके समान ऐश्वर्य्यशाली ये महाराजाधिराज श्रीमान् युधिष्ठिरजी हैं। क्या ये सर्वगुण-सम्पन्न पाण्डवेश इस राज-सिंहासनके योग्य नहीं हैं? ये किसी अन्य बलीके बल-भरोसेपर इस राज-सिंहासनपर नहीं बैठे हैं,—बल्कि स्वयम् अपने प्रतापके बलपर इस आसनपर सुशोभित हो रहे हैं!"

विराट-राजने आश्चर्य्यान्वित होकर कहा,—"पाण्डव! पाण्डव तो जुएमें सारा राजपाट हारकर जबसे निकले, तबसे उनका पताही नहीं है। न जाने कहाँ गये? यदि ये महाराज युधिष्ठिर हैं, तो द्रौपदी और शेष चारो भाई कहाँ हैं?"

तब अर्जुनने कहा,—"ये बल्लभ नाम धारण कर कीचकके मारनेवाले पुरुष-व्याघ्र, भीमसेन आपके सामनेही उपस्थित हैं। आपके घोड़ोंकी देख-रेख करनेवाले नकुल हैं और ये सहदेव हैं, जो गो-पालन-कार्य्यपर आपके यहाँ नियुक्त थे। जिसके लिये कीचक-कुलका नाश हुआ, वह मृग-लोचनी सैरन्ध्रीही द्रौपदी है और मेरा नाम अर्जुन है। हम लोगोंने अपनेको छिपाकर, गुप्त-रूपसे, आपके यहाँ अपने अज्ञात-वासका समय बिताया है।"

इसी समय विराट-राजकुमार उत्तर आ पहुँचे। वे रोमाञ्चित हो, राजाके सामने, अर्जुनका विक्रम-वर्णन करने लगे:—

"पितः! मृग-यूथ-विध्वंसी, सिंहकी तरह दुश्मनोंकी शेखियाँ मिट्टीमें मिलानेवाले महावीर देव-कुमार यही हैं। इन्होंनेही उन महा-रथियोंको भगाया था, इन्हींके एक बाणसे विकर्णका विशाल हाथी, दोनों दाँतोंसे पृथ्वीको खोदता हुआ, मर गया था। इन्होंनेही उस महती कौरव-सेनाको तहस-नहसकर हमारा गोधन उनसे लौटाया है। इन्हींके प्रचण्डतर शंख-नाद तथा गाण्डीवकी टङ्कारसे अबतक मेरे कान सुन्न हो रहे हैं।"

उत्तरा-परिणय

राजा-विराटने अपने पुत्रके मुखसे पाण्डवोंके महान् उपकारोंको सुन और अपनेको अपराधी समझ, व्यस्त होकर उत्तरसे कहा,—"बेटा! अनजानतेमें हमने इनका बड़ा अपमान किया है।

अब इनको प्रसन्न करनाही हमारा सबसे आवश्यक कार्य्य है। इसलिये यदि तुम्हारी सम्मति हो, तो अर्जुनके साथ उत्तराका शुभ विवाह कर दिया जाये। आज हमारे अहोभाग्य हैं, जो पाण्डवोंने हमें घर बैठे दर्शन दिये। इन भीमसेनने भी युद्धमें मेरी बहुत सहायता की थी। मैं यह अवश्य कहूँगा, कि इस युद्धमें हमारी विजय इन्हींकी कृपासे हुई है। अब मन्त्रि-मण्डलको बुलाकर पाण्डवोंको शीघ्रही प्रसन्न करनेके लिये मैं इनसे अपने अज्ञानकृत अपराधोंकी क्षमा मागूँगा।"

ऐसा कहकर विराट-राजने, प्रसन्न मनसे, शिष्टाचार-पूर्वक अपना सब कोश और राज्य उन्हें अर्पण करते हुए कहा,—"यह जो कुछ है, वह सब आपकाही है। अब जो कुछ मैं कहूँगा, उसे महावीर अर्जुनको निस्सङ्कोच भावसे स्वीकार करना पड़ेगा। मेरी हार्दिक इच्छा है, कि वीर-शिरोमणि अर्जुन कुमारी उत्तराका, पाणिग्रहण कर हमारे कुलको कृतार्थ करें; क्योंकि उसके पति होने योग्य येही महापुरुष हैं।"

युधिष्ठिरने विराट्-राजके मुखसे यह बात सुन, अर्जुनकी ओर देखा। अर्जुनने कहा,—"राजन्! आपकी पुत्री उत्तराको मैं अपने पुत्र अभिमन्युकी पत्नी-रूपमें स्वीकार करता हूँ। कुरु और मत्स्य वंशीय यह सम्बन्ध, इसी प्रकार होना ठीक है।"

विराट-राजने कहा,—"पार्थ! मेरे प्रदान करने और विशेष आग्रह दिखानेपर भी आप उत्तराको अपनी भार्याके रूपमें अङ्गीकार नहीं करते, इसका कारण क्या है?"

अर्जुनने कहा,—"राजन्! आपके अन्तःपुरमें मैं सदा राज-कुमारीकी देख-भाल किया करता था और वह भी मुझपर पितृवत् भक्ति करती है। नृत्य और संगीत-विद्यामें मेरे निपुण होनेसे,

मुझपर उसकी बड़ी भक्ति है और वह मुझे अपना गुरु समझती है। इसलिये यदि मैं अपने पुत्रके लिये उसे ग्रहण करूँगा, तो सब तरहसे उचित होगा। जैसे अपनेमें और पुत्रमें कोई भेद नहीं माना जाता, उसी तरह कन्या और पुत्र-वधूमें भी कुछ अन्तर नहीं गिना जाता। मैं समझता हूँ, कि आपकी कन्याका—मेरी पुत्र-वधू होनेमें, कोई हर्ज नहीं है। मेरा पुत्र अभिमन्यु, चक्रपाणि महात्मा श्रीकृष्णका प्यारा भाञ्जा और साक्षात् देवकुमारके सदृश है। विशेषतः वह बचपनसेही अस्त्र-शस्त्रका पूर्ण पण्डित है। वही आपका जामाता और देवी उत्तराका पति होने योग्य है।"

विराट-राजने गद्गद कण्ठसे कहा,—"धनञ्जय! आपने जो कुछ कहा, वह सभी सत्य और उचित है। आप धर्मपरायण हैं। आपकी बात मुझे स्वीकार है।"

महाराज युधिष्ठिर भी विराट-राज और अर्जुनकी बातोंसे सहमत थे। युधिष्ठिरने तुरतही श्रीकृष्णको द्वारकामें समाचार भेजा और वे, भाइयों सहित उपलव्य नामक नगरमें, जो विराट-राज्यान्तर्गत था, जा ठहरे। वहाँ ठहरकर पाण्डवोंने द्वारकासे श्रीकृष्ण, अभिमन्यु और समस्त यादवोंको बुला लिया। काशीराज भी पाण्डवोंका निमन्त्रण पाकर, एक अक्षौहिणी सेना सहित, वहाँ आपहुँचे। राजा द्रुपद भी शिखण्डी, धृष्टद्युम्न और द्रौपदीके पाँचों पुत्रों सहित, एक अक्षौहिणी सेना लिये, आ गये। अनेकानेक राजाओंके आनेके पश्चात् बलराम, श्रीकृष्ण, कृतवर्मा, युयुधान, अनावृष्टि, अक्रूर, अभिमन्यु आदिको, सुभद्रा सहित, लेकर वहाँ आपहुँचे। श्रीकृष्णने पाण्डवोंको उपहार-स्वरूप कई रत्न-जटित वस्त्र भेंट किये। इसके बाद बड़े समारोहके साथ वैदिक तथा लौकिक रीत्यनुसार अभिमन्युका विवाह-कार्य्य उत्तराके साथ सम्पन्न किया गया।

सातवाँ अध्याय

महाभारतकी भूमिका

रण-निमन्त्रण

विवाह-कार्य्यसे निपटकर दूसरेही दिन विराट-नगरमें सबने एक बड़ी भारी सभा की और उसमें इस बातका विचार किया गया, कि पाण्डवोंके लिये अब आगे क्या कर्त्तव्य है? उस समय सर्व सम्मतिसे श्रीकृष्णका यही प्रस्ताव उचित समझा गया और स्वीकृत हुआ, कि दुर्योधनके पास एक दूत भेजकर उसे पाण्डवोंका आधा राज्य राज़ी-खुशीसे लौटा देनेको कहा जाये।

राजा द्रुपदने श्रीकृष्णके इस प्रस्तावका समर्थन करते हुए कहा,—"दुर्योधन नीचाशय पुरुष है; वह शायदही इस बातको मानेगा। अतएव सेना एकत्र करनेका भी प्रबन्ध किया जाये।"

सबने उनकी बातको ठीक समझा। श्रीकृष्णचन्द्रको कोई आवश्यक राज-कार्य था, इसलिये वे सारे काम राजा द्रुपदको सौंप-कर दूसरेही दिन द्वारका लौट गये। द्रुपदने अपना एक ज्ञानी और

वयोवृद्ध पुरोहित, कौरवोंको समझानेके लिये, हस्तिनापुर भेज दिया। राजाओंके पास, सेना सहित युद्धार्थ आनेके लिये, दूत भेजे गये। योगिराज कृष्णको रण-निमन्त्रण देनेके लिये स्वयम् अर्जुन द्वारका गये। दुर्योधनके भेजे हुए गुप्तचरोंने यहाँकी सारी बातें शीघ्रही दुर्योधनको जा सुनायीं। अर्जुनका द्वारका-गमन सुन, वह भी, वायु-वेग-गामी रथमें सवार होकर, सैनिकों सहित, द्वारकाकी तरफ दौड़ पड़ा। जिस दिन अर्जुनने द्वारिकामें पैर रखा, उसी दिन दुर्योधन भी वहाँ पहुँच गया। पहले दुर्योधन फिर अर्जुनने श्रीकृष्णके महलमें प्रवेश किया। परन्तु श्रीकृष्ण सो रहे थे, अतएव दुर्योधन चुपचाप श्रीकृष्णके सिरहानेके पास रखे एक उत्तम सिंहासनपर बैठ गया। बादमें अर्जुन भी कृष्णको प्रणाम कर उनके पैरोंके पास बिछे सिंहासनपर बैठ गये। कुछ देर बाद जब श्रीकृष्णकी नींद खुली, तब सबसे पहले उन्होंने पैरोंके पास बैठे हुए अर्जुनको देख, उनका स्वागत करते हुए, उनके आनेका कारण पूछा। इसी बीचमें दुर्योधन बोल उठाः—

"महाराज! पहले मैं आपकी सेवामें आया हूँ, इसलिये आपको उचित है, कि आप पहले मुझसे बातें करें। अर्जुन मुझसे बहुत पीछे आया है।"

श्रीष्णने हँसते हुए दुर्योधनका स्वागत कर कहा,—"कहिये, आपही कहिये। आपने यहाँ पधारनेका कष्ट क्यों उठाया है?"

तब दुर्योधनने कुछ हँसकर कहा,—"गोविन्द! हम लोगों-के इस भावी संग्राममें, मैं आपसे सहायता माँगने आया हूँ। जनार्द्दन! सज्जन लोग पहले आये हुए मनुष्यकाही पक्ष ग्रहण करते हैं। इस समय आपही सज्जनोंमें प्रधान हैं, अतएव आपको अवश्यही इस नियमका पालन करना चाहिये।"

श्रीकृष्णने कहा,—"राजन् ! आप पहले पधारे हैं, इसमें कोई संशय नहीं ; किन्तु मैंने पहले अर्जुनकोही देखा है। आपके आनेका तो मुझे तब पता चला, जब आप बोले। इन दोनों कारणोंसे मुझे आप दोनोंकीही सहायता करनी पड़ेगी। किन्तु लोक-प्रसिद्ध बात है, कि बालककी माँगी हुई वस्तु पहले देनी चाहिये, इस लिये आपसे छोटे अर्जुनको प्रार्थनाकोही पहले पूर्ण करना उचित है। अर्जुन ! मेरी गोपजातीय सुविख्यात नारायणी सेना है। उसमें बड़े-बड़े योद्धा हैं। एक पक्षपर मेरी समस्त सेना और दूसरे पक्षपर स्वयम् मैं होऊँगा। परन्तु यह बात ध्यानमें रखने की है, कि मैं युद्धमें कदापि संलग्न न होऊँगा, न कोई शस्त्रही ग्रहण करूँगा। अब दोनोंमेंसे जिसे तुम अपने योग्य समझो, ले लो। धर्म्मानुसार पहले तुम्हारी इच्छा पूर्ण करना मेरा कर्त्तव्य है।"

श्रीकृष्णके इस प्रकार कह चुकनेपर, अर्जुनने निरस्त्र श्रीकृष्णको-ही अपने पक्षपर रहनेकी प्रार्थना की ; परन्तु दुर्योधनने अज्ञा-नता-वश नारायणी सेनाही लेनेकी इच्छा प्रकट की। दुर्योधनने सशस्त्र नारायणी सेनाको, निरस्त्र श्रीकृष्णसे, अधिक उपयोगी समझा और अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट करता हुआ श्रीकृष्णसे विदा लेकर बलरामके पास आया। परन्तु बलरामने उत्तर दिया,—"मैं किसी भी पक्षको सहायता देना नहीं चाहता।" यहाँसे दुर्यो-धन सीधा कृतवर्माके पास पहुँचा। कृतवर्माने उसे एक अक्षौ-हिणी सेना प्रदान की। उस महती सेनाको लिये हुए दुर्योधन प्रसन्नतापूर्वक द्वारकासे हस्तिनापुरको लौट आया।

श्रीकृष्णने दुर्योधनके चले जानेपर अर्जुनसे कहा,—"क्यों अर्जुन ! मैंने युद्धमें निरस्त्र रहनेकी प्रतिज्ञा की है ; ऐसी दशामें तुमने मुझे क्या समझकर अपनी तरफ लिया है ?"

अर्जुनने कहा,—"यादवेन्द्र! इसमें मुझे कुछ भी संशय नहीं, कि आप उनको मार सकते हैं। आप क्यों, मैंही अकेला उन सबका संहार कर सकता हूँ। किन्तु बहुत दिनोंसे मेरी यह इच्छा थी, कि आप मेरे सारथिका आसन सुशोभित करें। इस समय आप कृपाकर मेरी यह इच्छा पूर्ण कीजिये।"

कृष्णने कहा,—"मित्र! तुम्हारा कहना बिल्कुल सत्य है। मैं तुम्हारा सारथि बनकर तुम्हारी इच्छा अवश्यही पूरी करूँगा।"

अर्जुन इस प्रकार श्रीकृष्णसे वचन पाकर उपलव्य नगरको लौट आये। उसी दिन राजा शल्य पाण्डवोंसे मिलने आये, तो युधिष्ठिर-ने उनसे कहा,—"मामा! आपको धोखेसे दुर्योधनने अपने पक्षमें कर लिया और आप उसको वचन भी दे चुके हैं। ख़ैर, इसकी कोई चिन्ता नहीं, किन्तु आपको हमारा भी एक उपकार अवश्य करना होगा। वह यह, कि जब कर्णसे अर्जुन द्वैरथ युद्ध करेगा, तब वह आपकोही अपना सारथि बनायेगा। उस समय यदि आप मेरा प्रिय कार्य करनेको इच्छा रखते हों, तो अर्जुनकी रक्षाका ध्यान रखते हुए, ऐसी बातें बनाकर कर्णकी हिम्मत तोड़ते रहियेगा, जिससे हमारी जय हो सके। मामा! यह कार्य यद्यपि अनुचित है, तथापि हमारे लिये आपको अवश्यही करना पड़ेगा।"

शल्यने कहा,—"दुरात्मा कर्णका गर्व चूर्ण करनेके निमित्त, तुम मुझसे जिस बातके लिये अनुरोध करते हो, उसके उत्तरमें मेरा कहना यही है, कि जब कर्ण युद्धमें मुझे अपना सारथि बनाकर अर्जुनसे लड़ेगा, तब मैं सदैव उसे प्रतिकूल और अहितकर बातें सुनाकर हतोत्साह करता रहूँगा। इस बातको तुम बिल्कुल सच समझो।"

मद्राधिप शल्य, ऐसा कह, कौरवोंकी ओर चले गये। यहाँ

पाण्डवोंके पास युयुधान, धृष्टकेतु, जयत्सेन, पाण्ड्यराज, पाञ्चाल-राज, मत्स्य-राज इत्यादि अनेक राजा-महाराजा दलबल सहित एकत्रित होने लगे। कुछ दिनोंमेंही पाण्डवोंके पास सात अक्षौहिणी सेना* एकत्र हो गयी। उधर कौरवोंने ग्यारह अक्षौहिणी सेना एकत्र कर ली।

इसी समय कौरव-सभामें पाण्डवोंकी ओरसे भेजे हुए द्रुपदके पुरोहित पहुँचे। उन्होंने भरी सभामें कहा,—"आपलोग इस ग्यारह अक्षौहिणी सेनाके घमण्डमें न रहें। उधर भी सात अक्षौहिणी सेना इकट्ठी हो चुकी है। इसके अतिरिक्त अकेले अर्जुनही तुम्हारी इस ग्यारह अक्षौहिणी सेनाको एक दिनमें तहस-नहस करनेके लिये यथेष्ट हैं। मेरे विचारसे तो सैन्यका बाहुल्य त्याग, अर्जुनका पराक्रम और श्रीकृष्णकी बुद्धिमत्तापूर्ण युद्ध-नीतिका अनुमान कर, आपको पाण्डवोंका पैतृक राज्य उन्हें दे देनाही हितकर है।"

यह सुन पितामह भीष्मने कहा,—"जो कुछ भी आपने कहा, वह अक्षरशः सत्य है। संग्राममें कौन मनुष्य अर्जुनके गाण्डीवके आगे टिक सकता है? अन्यान्य धनुर्धरोंकी तो बातही करना व्यर्थ है, स्वयम् वज्रपाणि इन्द्रभी उनके सामने नहीं ठहर सकते। मेरे विचारसे तो अकेले अर्जुनही तीनों लोकोंको विजय कर सकते हैं।"

इतना सुनतेही कर्ण क्रोधित हो, बहुत समय तक अपने बलकी प्रशंसा और पाण्डवोंकी निन्दा करता रहा। तब भीष्मने कहा,—"कर्ण! केवल जुबानी जमा-खर्चसे काम नहीं चल सकता। अभी कलकी बात है, कि अकेले अर्जुनने हम छः महारथियोंके छक्के

* एक अक्षौहिणी सेनामें २१८७० रथ, २१८७० हाथी, ६५६१० घोड़े, १०९३५० पैदल योद्धा होते हैं।

शान्ति प्राप्त की जायेगी। न जाने दुर्योधनकी बुद्धि क्यों मारी गयी है। अच्छा, अब भीष्म, द्रोण, कृप, अश्वत्थामा और विदुर-जीके कहे अनुसारही होगा।"

यह सुन भीष्मने कहा,—"यह बात बिल्कुल सत्य है। अर्जुन-को जीतनेकी सामर्थ्य किसीमें भी नहीं है। और अब तो कृष्ण-की पूर्ण सहायता उन्हें प्राप्त होगयी है। अतएव त्रिलोकमें और त्रिकालमें भी अब उन्हें कोई नहीं जीत सकता। यह मुझे प्रत्यक्ष दिखायी दे रहा है, कि अर्जुनके बाणोंसे कौरव-कुलका नाश निःसन्देह निकट है। दुर्योधन! जब तुम कृष्ण और अर्जुनको एक साथ रथपर बैठे देखोगे, तब तुम मेरी बातको याद करोगे।"

इस प्रकार कर्ण, द्रोण, भीष्म, आदि आपसमेंही वाक्-युद्ध करने लगे। कर्ण, दुर्योधन, दुःशासन आदि अर्जुनकी निन्दा करते, तो भीष्म, द्रोण, विदुर और कृपाचार्य उनकी प्रशंसा करते थे।

उस समय धृतराष्ट्रने सबकी निन्दा करते हुए कहा,—"मैं बहुत कुछ विचारनेपर भी ऐसे किसी वीरको नहीं पाता, जो अर्जुनका सामना कर सके। जब अर्जुन गाण्डीव धारण कर अविरल बाण-वृष्टि करेगा, तब किसीकी भी सामर्थ्य न होगी, जो उनका निवारण कर सके। पितामह, आचार्य्य, कर्ण, कृप, अश्वत्थामा आदि महारथी भलेही अर्जुनसे लड़नेका साहस करें, किन्तु हमारी जीत कदापि नहीं हो सकती। मेरे विचारसे तो अर्जुनको जीतने या मारने वाला इस पृथ्वीपर कोई पैदाही नहीं हुआ। आजसे तैंतीस वर्ष पूर्व अर्जुनने खाण्डव-वन जलाकर एक महान् कार्य किया था। उस समय उसने देवताओंके भी छक्के छुड़ाये थे। अधिक क्या कहूँ, आजतक मैंने कहींपर भी अर्जुनको हारते नहीं सुना। फिर भला जिसके सारथि स्वयं श्रीकृष्ण

भगवान् हों, उसकी विजयमें क्या सन्देह हो सकता है? रथी अर्जुन, सारथि कृष्ण और धनुष गाण्डीव – इन तीनों तेजोंसे हमलोगोंका बचना सम्पूर्ण असम्भव है। न हमारे पक्षपर वैसा रथी है, न सारथि और न वैसा कोई धनुषही है। इससे स्पष्ट है, कि यह राज्य-मुकुट हमलोगोंके सिरसे उतरकर, युधिष्ठिरके मस्तकपर सुशोभित हुआ चाहता है। हमारी राज्य-श्री युधिष्ठिरके चरणोंको चूमनेके लिये तैय्यार खड़ी दिखायी देती है। यदि मस्तकपर एक बार वज्र भी आगिरे,तो बच जाना सम्भव है, परन्तु अर्जुनके चलाये बाणोंसे बचना एकदम असम्भव है। जिस प्रकार अग्नि सूखे घासके ढेरको बात-की-बातमें जला देती है, उसी तरह अर्जुनकी शस्त्राग्नि मेरी सेनाको देखते-देखते भस्मीभूत कर देगी। मैं पाण्डवोंके साथ युद्ध न करनेमेंही अपनी भलाई समझता हूँ।"

सञ्जयने कहा,—"अर्जुन द्वारा क्षत्रिय-कुलका जो महान् संहार होनेवाला है, वह प्रत्यक्ष दिखाई पड़ता है। अब विलाप करनेसे क्या होगा? राजन्! जब पाण्डव जुएमें हारकर वनको जा रहे थे, तब आप भी तो बालकोंकी तरह प्रसन्न होकर हँसते थे; परन्तु देखिये, उन्हीं अर्जुनने आपके बेटे दुर्योधनको गन्धर्वोंके पंजेसे छुड़ाकर उनकी प्राण-रक्षा की थी! आप यह अच्छी तरह याद रखिये, कि अर्जुनके बाण चलानेपर मनुष्य-योनि तो क्या चीज़ है, सब समुद्र भी सूख जायेंगे। धनुर्धरोंमें अर्जुन, धनुषोंमें गाण्डीव, मनुष्योंमें कृष्ण और ध्वजाओंमें कपिध्वज सर्वश्रेष्ठ है। राजन्! जिस युधिष्ठिरके भीम और अर्जुन जैसे बलवान् भाई हैं, उन्हींकी यह सब पृथ्वी है। महाराज! आप अपनी विजय त्रिकालमें भी न सोचें और अपने पुत्र दुर्योधनको जैसे हो, समझा-बुझाकर युद्धसे विरत करें।"

यह सुन दुर्योधन अपनी प्रशंसा और अर्जुनकी निन्दा करने लगा। तब महामति सञ्जयने कहा :—

"दुर्योधन! ज़रा होशमें आओ। अर्जुन तुम लोगोंको बध करनेके लिये राहही देख रहे हैं। अर्जुनने अपने रथको जोतकर मुझे दिखाया था। उस रथको स्वयं विश्वकर्माने बड़ी चतुराई से बनाया है। उसकी ध्वजामें उन्होंने अनेक छोटी-छोटी उत्त-मोत्तम तसवीरें बना रखी हैं। भीमसेनके आग्रहसे महावीर हनु-मान्‌जी उनके रथपर बैठकर सदा रक्षा करते हैं। विश्वकर्माने उस रथमें ऐसे अद्भुत यन्त्र लगाये हैं, कि वृक्ष आदिसे टकरातेही, वृक्ष कट जाते हैं। मैं तुम्हें सब तरहसे उनसे कमही देखता हूँ।"

दुर्योधन मन-ही-मन सञ्जयपर दाँत पीसता हुआ भीष्म, द्रोण, कृप, कर्ण और अश्वत्थामा आदिके बलका वर्णन कर, अपने पक्षको प्रबल बताने लगा। तब दुर्योधनको धृतराष्ट्रने भी बहुत समझाया, पर उसने एक न मानी। यहाँतक, कि उसकी माता गान्धारीने भी उसे युद्धसे रोका, पर उसने किसीकी कुछ परवाह न की।

श्रीकृष्णकी मध्यस्थता

यहाँ श्रीकृष्णने आकर, स्वयम् कौरव-सभामें जाकर सन्धिके प्रस्तावको उपस्थित करनेका विचार किया। दुर्योधनकी कुटिल-मतिको सोचकर तो कोई आशा नहीं करता था, कि सन्धि होगी, तथापि श्रीकृष्णने एक बार फिर प्रयत्न कर देखनेका निश्चय किया। श्रीकृष्ण जब इस अभिप्रायसे हस्तिनापुर जानेको तय्यार हुए, तब अर्जुनने उनसे कहा :—

"मित्र! धृतराष्ट्र या तो लोभके वशीभूत हो रहे हैं या वे

हमें कृश और दीन-दशामें देख, सन्धि करना उचित नहीं समझते। आप इस समय सन्धि होना असम्भव अवश्य समझते होंगे; परन्तु यदि पूरी तरहसे सन्धिका प्रस्ताव किया गया, तो सफलता मिलना कोई बड़ी बात नहीं है। इसलिये जहाँतक सम्भव हो, आप सन्धिकीही चेष्टा कीजियेगा। ब्रह्मा जिस तरह देव और राक्षसोंके लिये समान हैं, उसी तरह आप पाण्डव और कौरव—दोनोंके लिये समान है! इसलिये आप यह पारस्परिक मनोमालिन्य दूरकरके सच्ची शान्ति स्थापित करनेकीही चेष्टा करें। कहनेका तात्पर्य्य यह है, कि यदि सन्धि हो जाये, तो बहुतही अच्छी बात है, नहीं तो युद्ध तो निश्चितही है। जो कुछ भी आप कर आयेंगे, वह हमलोगों-को स्वीकार होगा। उस नीचाशय दुर्योधनने धर्म्मराज युधिष्ठिर-को सीधा-सादा जान, उन्हें कपट-जुएमें जीतकर, सब राज-पाट छीन लिया है। इस अवस्थामें उसे सपरिवार विनष्ट करना कोई पाप नहीं कहा जा सकता। यदि उसे दमन करनेके लिये आपको किसी अन्य मार्गका अवलम्बन करना पड़े, तो उसे भी कर सकते हैं। गोविन्द! उस दुराचारी दुर्योधनने द्रौपदीको भरी सभामें ला-कर जैसा कष्ट दिया था और जैसे-जैसे अत्याचार किये थे, वह सब आप जानतेही हैं। मुझे तो कोई आशा नहीं होती, कि वह आपकी बात मानकर हमारे साथ न्याय करेगा। जिस प्रकार ऊसर भूमिमें बीज निष्फल होता है, उसी प्रकार उस अधमके मन-पर किसी बातका प्रभाव पड़ना भी असम्भव है। ख़ैर, अब आप उसी उपायको कीजिये, जिससे पाण्डवोंका दुःख शीघ्रही दूर हो।"

श्रीकृष्णने कहा,—"अर्जुन! जैसा तुम कहते हो, वही होगा। मैं वही कार्य्य करूँगा, जिसमें दोनों पक्षका हित हो। मैं भरसक प्रयत्न करूँगा, कि सन्धि हो जाये। परन्तु वह दुर्योधन, धर्म्म-

भय अथवा लोक-भयसे भी तो नहीं डरता है। उसकी पाप-बुद्धिके वृद्धिकर्त्ता शकुनी, दुःशासन और कर्ण भी तो उसे रात-दिन कुमन्त्रणा देते रहते हैं। अतएव मुझे तो अत्यन्त कम आशा है, कि वह सन्धिके प्रस्तावोंको स्वीकार करे! मैं समझता हूँ, कि वह माँगनेपर भी पाण्डवोंका आधा राज्य कदापि नहीं लौटा-येगा। इसलिये धर्म्मराजका अनुशासन-वाक्य उसके आगे कहना व्यर्थ है। वह बचपनसेही तुम्हारे साथ स्पर्द्धा करता आया है और उसके बाद भी युधिष्ठिरके ऐश्वर्य्यको देख, उसने असहि-ष्णुता तथा निष्ठुरताके उपायों द्वारा उनका राज्य छीना है; अत-एव वह तो अवश्य मेरे हाथों मरने योग्य है। अर्जुन! उसने तुम्हारे और हमारे बीच मनोमालिन्य करानेमें भी कोई कसर नहीं रखी थी। इसे तुम निश्चय समझ लो, कि सन्धि होना तो बड़ी कठिन बात है; परन्तु मुझसे वाक्य या कर्म द्वारा जहाँतक हो सकेगा, उसमें मैं कसर न करूँगा।"

अर्जुनने कहा,—"महाराज! आपही इस समय हमलोगोंके सच्चे हितकारी हैं। आप दोनों पक्षमें समान रूपसे सम्मानित हैं। दोनोंका कुशल-प्रतिपादन आपका कर्त्तव्य है। अब आप कोई दूसरा कार्य्य न करके पहले यही कार्य्य कीजियेगा। आप उस सहनशीलता-रहित भाई दुर्योधनके पास जाकर शीघ्रही शान्ति स्थापनका प्रयत्न करें। यदि इतनेपर भी वह आपका कहना माने, तो फिर निश्चय कालके वशीभूत है।"

कृष्णने कहा,—"हाँ, जो हमलोगोंके लिये धर्म्म-सम्मत, हित-कारक और मङ्गलप्रद बात होगी, उसके सम्पादनके लियेही मैं कल हस्तिनापुर जाऊँगा।"

दूसरे दिन, प्रातःकालही, श्रीकृष्ण हस्तिनापुरके लिये रवाना

हुए। महाराजा युधिष्ठिर सहित सबलोग उन्हें कुछ दूरतक पहुँचाने आये और प्रार्थना तथा अभिवादन कर लौट गये ; परन्तु अर्जुन नहीं लौटे और सब लोगोंके चलेजानेपर कृष्णसे कहने लगे,—"गोविन्द! यह आपको भी ज्ञात है, कि सन्धिके लिये आधे राज्यकी शर्त पहले स्थिर की जा चुकी है। यदि दुर्योधन अकपट भावसे,सत्कार और प्रसन्नताके साथ,हमें आधा राज्य देनेको तैयार हो, तो बड़ी अच्छी बात है, अन्यथा मैं निश्चयही उन पापात्मा क्षत्रियाधमोंका विनाश करूँगा।"

ऐसा कह अर्जुन, श्रीकृष्णकी प्रदक्षिणा और उन्हें प्रणामकर, अपने स्थानको लौट आये।

श्रीकृष्ण हस्तिनापुर, कौरवोंकी सभामें, पहुँचे और अनेक तरहसे कृष्णनेही क्या, नारद, कण्व, गालव आदि महर्षियोंने भी दुर्योधनको बहुत समझाया। परन्तु—"मर्ज़ बढ़ताही गया ज्यों-ज्यों दवा की।" दुर्योधनने किसीकी भी बात नहीं मानी। लाचार हो, श्रीकृष्ण पाण्डवोंके पास लौट आये। कृष्णने सारी बातें, जो दुर्योधनसे राज-सभामें हुई थीं, पाण्डवोंको कह सुनायीं। अन्तमें युद्धही अन्तिम उपाय समझ, उसको तैयारी करनेकी आज्ञा दे दी गयी। सात अक्षौहिणी सेनापर सातही सेना-नायक, द्रुपद, विराट, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, चेकितान और भीमसेन चुने गये। सेनापतिके चुनावका प्रस्ताव उपस्थित होनेपर किसीने द्रुपदका, किसीने विराटका और किसीने शिखण्डीका नाम लिया ; परन्तु अर्जुनने कहा,—"मेरे विचारसे, ऋषि-कृपासे उत्पन्न, द्रोणाचार्य्यके काल, जो धनुष, खड्ग आदि अनेकानेक अस्त्र-शस्त्रोंके प्रयोगके धुरन्धर पण्डित हैं, जिनका बल सिंहके समान है, जो वीर्य्य-सम्पन्न, सत्यवादी, जितेन्द्रिय, धर्म्मात्मा और विद्वान् हैं, वेही

एक मात्र महावीर धृष्टद्युम्न सेनापतिके पदपर अभिषिक्त किये जाने योग्य हैं।

श्रीकृष्ण द्वारा समर्थित होनेपर अर्जुनका यह प्रस्ताव सर्व-सम्मतिसे स्वीकृत हुआ और वीरवर धृष्टद्युम्न सेनापति बनाये गये। धृष्टद्युम्नपर अर्जुन और अर्जुनपर श्रीकृष्ण, प्रधान सेनापतिके पदपर नियुक्त किये गये।

युद्धकी तैयारी

अब पाण्डवोंकी महती-सेना शस्त्रादिसे सज-धज और व्यूह-बद्ध होकर, युद्धके लिये, कुरुक्षेत्रकी ओर अग्रसर हुई। कितनेही यान-वाहन तथा शस्त्रास्त्रोंसे भरे हुए शकट, औषधियाँ और अस्त्र-चिकित्सक वैद्य भी साथ ले लिये गये। रथी लोग पृष्ठ-रक्षकों और चक्ररक्षकोंसे घिरकर चलने लगे। अनावृष्टि, चेकितान, चेदिराज और सात्यकि, कृष्ण और अर्जुनको घेरकर चले। इस प्रकार यथा समय सारी सेना कुरुक्षेत्रके मैदानमें आ पहुँची और उसने एक अच्छा स्थान देखकर छावनी डाल दी।

इसी समय 'रुक्मी' नामक एक महा प्रतापी दाक्षिणात्यपति अर्जुनसे मिलनेके लिये आया। स्वर्ग-वासियोंमें गाण्डीव, शार्ङ्ग और विजय—ये तीन धनुषही महान् गिने जाते हैं। 'गाण्डीव' अर्जुनके पास 'शार्ङ्ग' श्रीकृष्णके पास और 'विजय' इसी रुक्मीके पास था।

रुक्मीने अर्जुनसे कहा,—"महाबाहो! यदि तुम्हें इस युद्धमें भय प्रतीत होता हो, तो मैं अपनी एक अक्षौहिणी सेना सहित तुम्हारी सहायता करनेको प्रस्तुत हूँ। युद्धमें तुम मुझे शत्रु-सेनाका जितना अंश दोगे, उसका मैं अवश्य ही संहार करूँगा। मैं द्रोण,

कृप, कर्ण, भीष्म और अश्वत्थामा आदि सभी वीरोंका विध्वंस करनेकी शक्ति रखता हूँ।"

अर्जुनने मुस्कराकर, शान्त भावसे, अपना और श्रीकृष्णका परिचय बताते हुए कहा,—"वीरवर! मैं कैसे कह सकता हूँ, कि मैं भयभीत हूँ। घोष-यात्राके समय मैं अकेलाही गन्धर्व्वोंसे लड़ा था। खाण्डव-वन जलाते समय किसने मेरी सहायता की थी? जब मैंने निवात-कवच और कालकेय आदि राक्षसोंके साथ संग्राम किया था, तब कौन मेरा सहायक था? कुछ दिन पहले मैं, इन्हीं कौरवोंसे, राजा विराटके लिये अकेलाही युद्ध कर चुका हूँ; उस समय कौन मेरा सहायक हुआ था? सारांश यह, कि मैं तनिक भी भयभीत नहीं हूँ, अतएव आप या तो जिधर आपकी इच्छा हो जाइये, या खड़े होकर मेरे गाण्डीवके प्रभावका निरीक्षण करते रहिये।"

इस प्रकार मुँहतोड़ जवाब पाकर रुक्मी अपनी असंख्य सेना लिये दुर्योधनके पास पहुँचा और यही कहने लगा; किन्तु उस शौर्याभिमानी दुर्योधनने भी उसे सूखाही जवाब दिया। अतएव वह अपने देशको लौट गया।

दौत्य-सन्देश

कौरवोंने 'उलूक' नामक एक व्यक्तिको खूब सिखा-पढ़ा और अपना दूत बना, पाण्डवोंकी छावनीमें भेजा। उसने पाण्डवोंके पास पहुँच, कौरवोंकी खूबही प्रशंसा करते हुए, अर्जुनको दुर्योधनका यह सन्देश सुनाया,—"पार्थ! तुम जो वेद-मन्त्र और धनुर्वेदके आचार्य्य बनकर द्रोणाचार्य्यको जीतनेके स्वप्न देख रहे हो, वह सब निरर्थक है; क्योंकि यह आजतक कभी भी सुनाई

नहीं पड़ा, कि हवाके झोंकेसे सुमेरु-पर्वत उखड़ गया हो। पवन मेरुको उड़ा ले जाये, आकाश पृथ्वीपर उतर आये और काल-चक्रका परिवर्तन हो जाये, यह सब सम्भव है ; परन्तु भीष्म और द्रोणके सामने तुम्हारा जीवित रहना एकदम असम्भव है। अर्जुन ! ज़रा उनकी शक्तिका तो अनुमान करो। व्यर्थही इतना अभिमान क्यों करते हो ? केवल अपने मुँह अपनी तारीफ करलेनेसेही मनुष्य योद्धा नहीं बन जाता है ! मैं तुम्हारे सहायक कृष्णको भी अच्छी तरह जानता हूँ और उस गाण्डीवको, जिसके बलपर तुम इतना अकड़ते हो, ख़ूब पहचानता हूँ। इतना होनेपर भी मैं स्वच्छन्द राज्य कर रहा और बराबर तेरह वर्षोंसे तुम्हारे राज्यका भी उपभोग कर रहा हूँ पर तुम लोग रोते हुए वन-वन मारे फिर रहे हो। अब मैं भाइयों सहित तुम्हें मारकर इस पृथ्वीका अकण्टक राज्य करूँगा। अर्जुन ! जब तुम हमारे दास बने थे, तब तुम्हारा गाण्डीव और भीमसेनका बल कहाँ चला गया था ? उस समय भी तुम्हारी रक्षा उस द्रौपदीनेही की थी। अपनी स्त्री द्वारा दासत्वसे मुक्त होते तुम्हें लाज भी नहीं आयी ! उस समय तुम्हारे गाण्डीवका बल कहाँ लुप्त हो गया था ? राजा विराटके यहाँ हाथोंमें चूड़ियाँ और सिरपर वेणी धारण करनेवाले नामर्द, धनुष उठाकर कदापि विजय नहीं पासकते। अर्जुन ! तुम्हारी या कृष्णकी गीदड़-भभकीसे मैं राज्य नहीं दूँगा ; बल्कि तुम दोनोंका विनाशकर, आनन्द पूर्वक राज्य-सुख भोगूँगा। तुम तो क्या, सौ कृष्ण और सौ अर्जुन भी मेरे सामनेसे भागते नज़र आयेंगे !”

इस प्रकार कहकर उलूक इन्हीं बातोंको दुहरा-दुहरा और बढ़ा-बढ़ाकर कहने लगा। उसकी यह धृष्टता देख, पाण्डव लोग, अत्यन्त क्रुद्ध हो, अपने आसनोंपर उठ खड़े हुए। अर्जुन क्रोध-

पूर्वक अपने ललाटको मसलने लगे। भीमसेनादि वीर उलूकको, दुर्योधनके लिये जवाबमें, अत्यन्त क्रोधपूर्ण बातें कहने लगे। तब अर्जुनने कहा,—"भैया भीम! आपके साथ जिसकी शत्रुता होती है, वह कदापि जीवित नहीं बचता। ये सब मृत्युके वशवर्ती होकरही ऐसी बातें कह रहे हैं। आपको इस दूतसे कुछ नहीं कहना चाहिये; क्योंकि दूतोंका कार्यही ज्यों-की-त्यों कहना होता है।"

भीमसेनको इस प्रकार समझाकर अर्जुनने धृष्टद्युम्न आदि वीरोंसे कहा,—"आपलोग उस पापात्मा दुर्योधनकी कटूक्ति और विशेषत: श्रीकृष्ण तथा मेरी निन्दाको सुनकर अत्यन्त क्रुद्ध हुए हैं। मैं, श्रीकृष्णचन्द्र तथा आपलोगोंकी कृपासे, पृथ्वीके समस्त वीरोंको भी कुछ नहीं गिनता हूँ। मैं दुर्योधनकी तरह बातें न कहकर अपने गाण्डीव द्वाराही उसकी बातोंका उत्तर देना उचित समझता हूँ; क्योंकि कापुरुष लोगही दूतों द्वारा शत्रुको अपनी प्रशंसा सुनाया करते हैं।"

यह सुन, सारी सभाके लोग अर्जुनकी प्रशंसा करने लगे। इधर युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण आदि उलूककी बातोंका उत्तर देने लगे। उस समय अर्जुनने भी लाल-लाल आँखें करके कहा,—"उलूक! तुम अपने उस अभिमानी राजा दुर्योधनसे कहना, कि 'नीच! जो मनुष्य अपने बाहु-बलके द्वारा शत्रुओंसे युद्ध करता है, वही उत्तम पुरुष कहाने योग्य होता है; किन्तु जो पराये बलका आश्रय ग्रहणकर शत्रुओंको ललकारता है, वह अधम पुरुष कहाता है। पितामह भीष्मको लड़नेके लिये जो तुम आगे करते हो, उसका रहस्य मुझे अच्छी तरह मालूम है। कुलांगार! तुम्हारा यह मतलब है, कि अर्जुन अपने वृद्ध पितामहपर दया करेंगे तथा उन्हें नहीं मारेंगे और हम उनकी सेनाका नाश करते हुए खूब अच्छी

तरह टट्टीकी ओट शिकार खेलेंगे। परन्तु याद रखो, सबसे पहले मैं उन्हींका वध करूँगा।' हे उलूक! तुम दुर्योधनसे कह देना, कि 'रात्रिके समाप्त होनेपर इस महान् समर-यज्ञका आरम्भ होगा। प्रातःकाल होतेही तुमलोग सेनाको सजाकर जी-जानसे भीष्मकी रक्षा करना; क्योंकि तुम लोगोंके सामनेही मैं तुम्हारे उन प्रधान रक्षकका वध करूँगा।' जाओ उलूक! तुम उस नीच दुर्योधनसे कह दो, कि वह अपने बन्धु-बान्धवों सहित अवश्य युद्ध करे, जिससे मुझे, मेरे हृदयको शान्त करनेका अवसर मिले।"

अर्जुनके इस भाँति कह चुकनेपर युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव, द्रुपद, विराट्, शिखण्डी और धृष्टद्युम्नने भी उलूकसे, दुर्योधनके लिये, ऐसेही कर्णकटु तथा वीरता-व्यञ्जक सन्देश कहे। उलूकने यहाँसे जाकर कौरव-सभामें अर्जुनकी कही हुई सारी बातें ज्यों-की-त्यों कह सुनायीं। दुर्योधनने क्रोधसे जल-भुनकर उसी समय सारी सेनामें, कल प्रातःकालसे, युद्ध आरम्भ होनेकी सूचना करा दी।

इसी समय एक गुप्तचरने पाण्डवोंको आकर यह संवाद सुनाया, कि "जब दुर्योधनने अपने समस्त महारथियोंसे उनके पृथक्-पृथक् बलके विषयमें पूछा, तब भीष्मने अपना, दस हज़ार सैनिक और एक हज़ार रथी नित्य वध करनेका, बल बताया। द्रोणने एक महीनेमें, कृपने दो महीनेमें, अश्वत्थामाने दस दिनमें और कर्णने पाँचही दिनमें आपकी सारी सेनाको विनष्ट करनेका बीड़ा उठाया है।"

यह सुन युधिष्ठिरने अर्जुनसे पूछा,—"अर्जुन! मैं भी तुम्हारी बात सुनना चाहता हूँ। कहो, तुम कौरवोंका, सेना सहित, संहार करनेमें कितना समय लोगे?"

अर्जुनने श्रीकृष्णके मुखकी ओर देखकर कहा,—"महाराज! वे सभी लोग महात्मा, शास्त्रज्ञ और युद्ध-विद्याके पूर्ण पारदर्शी हैं; परन्तु आप चिन्ता न कीजिये, मैं भगवान्‌को साक्षी रखकर कहता हूँ, कि कृष्णकी सहायता पाकर मैं एकही रथसे, निमेष मात्रमें, वर्तमान समस्त स्थावर, जङ्गम जगत्‌का नाश करनेकी शक्ति रख, आपके चरणोंकी दयासे तीनों लोक और चौदहों भुवनोंका संहार कर सकता हूँ। किरातीय द्वन्द्-युद्धसे प्रसन्न होकर भगवान् शङ्करने जो महान् दिव्यास्त्र मुझे प्रदान किया था,वह मेरे पास मौजूद है। प्रलयके लिये महादेव जिन अस्त्रोंका प्रयोग करते हैं, वे सभी मेरे स्वायत्ताधीन हैं। उन्हें भीष्म, द्रोण, कृप, कर्ण और अश्वत्थामा आदि कोई नहीं जानते। किन्तु साधारण मनुष्योंपर दिव्यास्त्र नहीं प्रयोग किये जाते, अतएव मैं सरल युद्ध द्वाराही शत्रुओंका विनाश करूँगा। इसके अतिरिक्त हमारे परम सहायक श्रीकृष्ण भी दिव्यास्त्रोंके धुरन्धर पण्डित हैं और हमारे सभी सेनानायक समरमें देवताओंको भी जीत लेनेकी सामर्थ्य रखते हैं। शिखण्डी, युयुधान, धृष्टद्युम्न, भीम, नकुल, सहदेव, युधामन्यु, उत्तमौजा, विराट, द्रुपद, शंख, घटोत्कच, अञ्जनपर्व्वा, सात्यकि, अभिमन्यु और द्रौपदीके पाँचों पुत्र आपके सहायक हैं; फिर आपको किस बातकी चिन्ता है?"

व्यूह-निर्माण

सवेरा होनेपर दोनों ओरकी सेनाएँ, अस्त्र-शस्त्रोंसे सुसज्जित हो,कुरुक्षेत्रके मैदानमें आ डटीं। तब महाराजा युधिष्ठिरने कौरव-दलको व्यूह-बद्ध देखकर अर्जुनसे कहा,—"वत्स! परम श्रद्धास्पद, देव-गुरु, बृहस्पतिका कथन है, कि थोड़ी सेनाको समेट और

बहुत सेनाको फैलाकर व्यूह-रचना करनी चाहिये। इसलिये शत्रु-सेनासे अपनी सेना कम होनेके कारण तुम शीघ्र ही सूची-व्यूहकी रचना करो।"

अर्जुनने कहा,—"महाराज! मैं देव-राज इन्द्रके बताये 'वज्राख्य' नामक व्यूहकी रचना करूंगा। सब व्यूहोंमें वह श्रेष्ट 'व्यूह है। मर्त्यलोक-वासी उसे तोड़ना तो दूर रहा, बनाना भी नहीं जानते। प्रचण्ड बलशाली महावीर भीमसेन, उसके अग्रभागमें रहकर, शत्रुकी सेनाका बुरी तरह संहार करेंगे। जिस प्रकार सिंहको देखकर मृग-मण्डली भागती है, उसी प्रकार भीमसेनको देख, दुर्योधनकी सेना भागने लगेगी। जिस तरह देवता लोग इन्द्रका आश्रय लेते हैं, उसी तरह हमलोग भी भीमसेनका आश्रय लेकर युद्धमें प्रवृत्त होंगे। सारांश यह, कि कोई भी ऐसा मनुष्य नहीं, जो भीमसेनके क्रुद्ध होनेपर, उनके आगे ठहर सके।"

इतना कहकर अर्जुनने 'वज्राख्य व्यूह' की रचना की और उसके अग्रभागमें भीमसेनको स्थितकर, मध्यभागमें शिखण्डीकी रक्षा करते हुए चलने लगे। कुछ आगे बढ़नेपर अर्जुनने भीमसेनको दिखाकर युधिष्ठिरसे कहा,—"राजेन्द्र! देखिये, भीमसेन वज्र-सारकी बनी गदा लिये कैसे शोभा पा रहे हैं। इनके, महावेगसे, आक्रमण करनेपर, समुद्र भी सूख सकता है। इन्हें देखकर, सहायकों सहित, दुर्योधनके होश उड़ रहे हैं।"

दोनों ओरकी सेनाओंके चलनेसे सारा मैदान धूलसे आच्छादित होनेके कारण, चारों ओर अन्धेरा सा हो गया। उस समय दुर्योधनकी सेनाको अपनी सेनासे अधिक देख, धर्म्मराज युधिष्ठिरने अर्जुनसे कहा,—"अर्जुन! जिन लोगोंके पास पितामह भीष्म जैसे योद्धा हैं, जिन्होंने सुदृढ़ व्यूहकी रचना की है; ऐसी

महती और बलवती धार्तराष्ट्र-सेनाके साथ हमलोग कैसे युद्ध कर पार पा सकेंगे? मुझे तो भीष्मजीके सेनापति होनेपर अपनी विजय सन्देहजनक जान पड़ती है।"

अर्जुनने अपनी सेनाको देखकर युधिष्ठिरसे कहा,—"राजन्! थोड़ेसे वीर अधिक वीरोंको किस प्रकार जीतते हैं, उसका कारण सुनिये। नारद तथा भीष्म और द्रोण भी यह बात जानते हैं। सत्ययुगमें, देवासुर-संग्रामके समय, ब्रह्माने इन्द्रादि देवताओंसे कहा था, कि 'जय चाहनेवाले मनुष्य बल-वीर्य्य द्वारा उतने जयी नहीं होते, जितने सत्य, धर्म्म और उद्यम द्वारा होते हैं। इसलिये तुम लोग धर्म्माधर्म्मका ध्यान रखते हुए, अहंकार-शून्य हो, युद्ध करो।' हे राजन्! आप भी ऐसाही समझिये। इस युद्धमें हमारीही विजय होगी। नारदजीका कहना है, कि जहाँ कृष्ण हैं, वहीं जय भी है। मुझे भी इस वाक्यपर पूर्ण विश्वास है। क्या महान् रण-पण्डित, अपूर्व नीति-विशारद, योगिराज श्रीकृष्णके रहते हुए भी हमारी हार होगी? नहीं, यह बिल्कुल असम्भव है। अतएव आप चिन्ता न करें, जीत आपकीही होगी।"

मोह और निवृत्ति

अर्जुनके मुखसे उपर्युक्त वाक्य सुन, युधिष्ठिरके मनको शान्ति हुई। इसके बाद अर्जुन अपने सफ़ेद घोड़ोंके सुन्दर रथपर, जिसे श्रीकृष्ण परिचालित कर रहे थे, बैठकर सेनाके मध्यभागमें पहुँचे। इसके बाद श्रीकृष्णने अपने पाञ्चजन्य शङ्खको और अर्जुनने देवदत्त शंखको बड़े जोरसे बजाया। इस प्रकार दोनों ओरके महारथियोंने शंख-ध्वनिकर समस्त रण-भूमिको निनादित कर दिया। इसी समय कौरवोंकी सेनाको युद्धके लिये तैयार

देखकर अर्जुनने श्रीकृष्णसे कहा,—"गोविन्द ! तुम मेरे रथको, दोनों सेनाओंके बीच, ऐसी जगह ले चलकर खड़ा करो, जहाँसे मैं अच्छी तरह देख सकूँ, कि मुझे किन-किन वीरोंके साथ युद्ध करना होगा।"

अर्जुनके मुखसे यह बात सुनतेही श्रीकृष्णने अपना रथ दौड़ाकर दोनों सेनाओंके बीचमें ला खड़ा किया और अर्जुनसे कहा,—"अर्जुन ! अब अपने शत्रुओंको देख लो।"

अर्जुनने दोनों सेनाओंको, दृष्टि पसारकर, देखा और श्रीकृष्णसे कहा,—"भगवन् ! इन सब, युद्ध करनेवाले, अपनेही बन्धु बान्धवों और गुरुजनोंको देखकर मेरी देह सन्नाती, मुँह सूखता, हृदय काँपता, शिर चकराता और गाण्डीव हाथसे फिसला जाता है। मैं अब खड़ा नहीं रह सकता। इस संग्रामको मैं बड़ाही अनिष्ट-कारक समझता हूँ। मुझे अपने आत्मीय-स्वजनोंको मारनेमें कोई भलाई नहीं दिखाई देती। न मुझे ऐसी विजय चाहिये और न ऐसा राज्य-सुखही। गोविन्द ! मुझे राज्य, भोग या सुख लेकर क्या करना है ? जिनके लिये हम राज्य, भोगादि सुखैश्वर्य्य प्राप्त करना चाहते हैं, वे सब तो युद्धमें लिप्त हैं। गुरु, पितृव्य, पुत्र, पितामह, मामा, श्वसुर, पौत्र और अन्यान्य सभी सम्बन्धी यहाँ मौजूद हैं। भलेही ये लोग मुझे मार डालें ; परन्तु मैं इस पृथ्वीका तो क्या, त्रैलोक्यका राज्य पानेपर भी इन लोगोंपर हाथ नहीं उठाऊँगा। इन धृतराष्ट्र-पुत्रोंको मारनेसे हमें क्या लाभ होगा ? लाक्षागृहमें आग लगाकर हमें जलानेवाले, राज्य-हरण करनेवाले, प्राणप्यारी द्रौपदीका अपमान करनेवाले और हमें तेरह वर्ष वन-वासी बनाकर महा कष्ट देनेवाले इन पापियोंको मारनेसे मुझे पापही लगेगा। अतएव, हे कृष्ण ! मुझे



"मुझे अपने आत्मीय-स्वजनोंको मारनेमें कोई भलाई नहीं दिखाई देती।"

Burman Press, Calcutta.

[पृष्ठ—२१४]

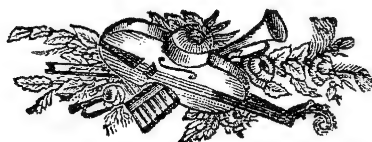
दुर्योधनादिका विनाश नहीं करना चाहिये। हम अपने भाइयोंको मारकर भला कैसे सुखी रह सकेंगे? यद्यपि इन दुष्टोंको राज-लोभके कारण यह घोर पाप और कुल-नाश दिखाई नहीं देता, तथापि मैं जान-बूझकर भी ऐसे पापमें अपनेको क्यों लिप्त करूँ? कुल-क्षय होनेसे कुल-धर्म्मका नाश होता है। अधर्म्म होनेसे कुलकी स्त्रियाँ दूषित होती हैं और स्त्रियोंके दूषित होनेसे वर्ण-सङ्करी सृष्टि उत्पन्न होती है, जिससे उन कुल-घातकियोंका कुल घोर नरकका भागी होता है। जाति-धर्म्म, कुल-धर्म्म और आश्रम-धर्म्म विनष्ट हो जाते हैं। हा भगवान्! मैं ऐसा महान् पाप करनेको तैयार हूँ! राज्य-सुखकी इच्छासे मैं अपनेही कुलका नाश करनेके लिये खड़ा हुआ हूँ! नहीं, कदापि नहीं; मैं ऐसा घोरतर पाप भूलकर भी नहीं करूँगा। भलेही कौरव हमें मार डालें; परन्तु मैं उनपर कदापि हाथ न उठाऊँगा।"

इतना कहकर अर्जुनने गाण्डीव रख दिया और शोकान्वित हो, अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे, नीची गर्दन करके चुपचाप, रथके एक कोनेमें बैठ गये। अर्जुनका रङ्ग-कुरङ्ग देख, श्रीकृष्णने कहा,—"अर्जुन! इस समय एकाएक तुम्हें यह अपयशका देनेवाला मोह किस तरह उत्पन्न हुआ? तुम इतने निराश न हो। तुम्हारे जैसे वीरोंको यह बात शोभा नहीं देती। बस, अब अपने हृदयकी दुर्बलताको त्याग दो और सावधान होकर शस्त्र ग्रहण करो।"

अर्जुनने कहा,—"महात्मन्! आपही बताइये, मैं पूजनीय पितामह और गुरु द्रोणाचार्य्यको अपने हाथों कैसे मारूँ? इनको मारनेकी अपेक्षा तो संसारमें भीख माँगकर पेट भरलेना हज़ार दर्जे अच्छा है; क्योंकि इन लोगोंको मारकर हमें रुधिर-लिप्त राज्य और शोणित-सिक्त धनका उपभोग करना पड़ेगा। मैं

इन्हें जीतूँ या ये लोग मुझे जीतें, परन्तु मैं तो इसमें किसीकी भी भलाई नहीं देखता। इन्हें मारकर भला मैं कैसे जीवित रह सकूँगा? इस कुल-क्षयके दोषको विचारकर मेरा चित्त इस समय धर्म्मके विषयमें किङ्कर्त्तव्य विमूढ़सा हो गया है। अपने कुलका नाशकर यदि मुझे समस्त पृथ्वीका राज्य तथा स्वर्ग-सुख प्राप्त हो, तो भी मैं यह नीच कर्म्म न करूँगा।"

जब कृष्णने देखा, कि अर्जुनको महान् मोह होगया है, तब उन्होंने अर्जुनको इस संसारकी अनित्यता तथा ईश्वर और जीवका वर्णन सुनाकर, उन्हें अपने क्षात्र-धर्म्मपर दृढ़ रहनेका उपदेश दिया। अर्जुनका मोह दूर हो गया और वे युद्धके लिये बद्धपरिकर होगये। अर्जुन और श्रीकृष्णके इस संवादकी पृथक् पुस्तक "श्रीमद्भगवद्-गीता"के नामसे संसार भरमें विख्यात है और प्रायः सभी धर्म्मके लोग इसका सम्मान करते हैं। यही कारण है, कि हमने उसे इस स्थानपर उद्धृतकर पुस्तकका कलेवर बढ़ाना उचित नहीं समझा। जिज्ञासु पाठक श्रीमद्भगवद्गीता पढ़कर अपनी जिज्ञासा निवृत्त कर सकते हैं।*



---

* यदि आप 'श्रीमद्भगवद्गीता'का हिन्दी भावार्थ पढ़ना चाहते हैं, तो हमारे यहाँसे "श्रीकृष्ण-चरित्र" नामक ३२ चित्रों वाला सचित्र ग्रन्थ मँगा देखिये। इसमें श्रीकृष्णके पूरे जीवन चरित्रके सिवा गीताके अठारहों अध्यायोंका निचोड़ और महाभारत सम्बन्धी कितनीही जानने योग्य बातें हिन्दीकी बड़ीही सरल, सुन्दर भाषामें, लिखी गयी हैं। दाम ४।), रे०जि० ४॥)

आठवाँ अध्याय



महाभारतका प्रारम्भ

पहले दिनका युद्ध

श्रीकृष्णके उपर्युक्त प्रभावोत्पादक तथा उत्तेजनावर्धक उपदेश सुनकर अर्जुनने गाण्डीव उठा लिया और वे युद्धके लिये तैयार हो गये। यह देखकर पाण्डव-पक्षके वीर सिंह-नाद और शंख-ध्वनि करने लगे। कौरवोंने महात्मा भीष्मको आगे किया और पाण्डवोंने महावीर भीमसेनको सेनाके अग्र भागपर रखा। भेरी, मृदङ्ग, दुन्दुभि, ढोल, तुरही, रणश्रृङ्ग, विजयघण्ट आदि अनेकानेक बाजे बजने लगे। वीरगण सिंह-नादकर गर्ज्जने लगे। घोड़े हिनहिनाने तथा हाथी चिग्घारने लगे। इस प्रकार चारों ओर महा कोलाहल मच गया। उस समय महावीर भीमसेनने सिंहकी तरह इतनी भयङ्कर गर्ज्जना की, कि अन्य सब आवाज़ें, उनकी प्रलय-कालके समान गर्जनाके भीतर, विलीन हो गयीं और वही ध्वनि दशों दिशाओंमें निनादित हो उठी। शत्रुओं-

के योद्धाओंका कलेजा काँप गया और उनके हाथी, घोड़ों और साधारण सैनिकोंने तो इस भयङ्कर शब्दको सुनकर मल-मूत्र तक त्याग दिया !

अन्तमें दोनों सेनाएँ, मदोन्मत्त होकर भीषण वेगसे, एक दूसरी-पर टूट पड़ीं और लोहा बरसने लगा। प्रत्येक वीर, एक दूसरेको मार डालनेके लिये, प्राणपनसे चेष्टा करने लगा। भीष्म, काल-दण्ड समान धनुष उठाये, अर्जुनपर टूट पड़े। तेजस्वी अर्जुन भी जगत् विख्यात गाण्डीव लिये भीष्मपर झपटे। दोनोंमें महा भया-नक युद्ध होने लगा। एक दूसरेका वध करनेकी इच्छासे भयङ्कर बाण-वृष्टि करने लगे; किन्तु कोई भी किसीको हरा न सका।

अर्जुन कौरव-सेनापर और भीष्म पाण्डव-सेनापर अगणित बाण बरसाने लगे। दोनोंही वीर दोनों ओरकी सेनाओंका मथन करते हुए इधर-उधर विचरण करने लगे। शल्यने शक्ति फेंककर, राजा विराट्के पुत्र, उत्तरको मार डाला। यह देख, उसका छोटा भाई शङ्ख क्रोधसे, घृताहुत अग्निकी तरह, जल उठा और शल्यको मारने दौड़ा। परन्तु भीष्मने उसे बीचमेंही रोककर महायुद्ध करना आरम्भ कर दिया। शंखमें इतनी सामर्थ्य कहाँ थी, जो भीष्मका सामना कर सकता! अतः वह घबरा गया। ऐसे समय भीष्मके हाथसे शंखकी रक्षा करना कर्तव्य समझकर अर्जुन, शीघ्रता पूर्वक, शंखके सामने आये और भीष्मसे भिड़ गये। इसी बीच शल्यने रथसे उतरकर शंखके रथके चारों घोड़ोंको गदासे मार डाला। तब शंख तलवार ले, रथसे कूद-कर, अर्जुनके रथमें जा चढ़ा। भीष्म अर्जुनपर क्रुद्ध हो, बाण-वृष्टि करने लगे और अर्जुन भी अपने दिव्य सायकों द्वारा भीष्मको व्याकुल करने लगे। तब भीष्म अर्जुनको छोड़कर पाण्डव-सेनापर

बाण छोड़ने लगे। पाण्डव-सेना अनाथकी तरह भाग चली। इसी समय सूर्य्यास्त हो जानेसे युद्ध बन्द हो गया और सेनाएँ अपने-अपने शिविरोंमें चली गयीं।

दूसरे दिनका युद्ध

दूसरे दिन प्रातःकाल होतेही महावीर धृष्टद्युम्नने पाण्डव-सेनाकी व्यूह-रचनाकर उसे रण-भूमिकी ओर अग्रसर किया। उस समय चारों ओर जुझाऊ बाजे बजने लगे, जिससे क्षत्रिय-वीरोंके हृदयमें वीर-वारि-धारा बहने लगी। कायरोंकी छातियाँ काँपने लगीं। युद्ध छिड़ गया। महारथी भीष्मने अर्जुन, अभिमन्यु, भीमसेन, विराट, धृष्टद्युम्न और द्रुपदपर पैने बाण बरसाने शुरू कर दिये। भीष्मके बाणोंसे कुछही देर बाद पाण्डवोंका व्यूह टूट जानेके लक्षण दिखाई पड़ने लगे। पाण्डवोंकी सेनामें हाहाकारका हल्ला मच गया। यह देख, महावीर अर्जुनने क्रोधमें आकर कृष्णसे कहा,—"मित्र! आप जितनी जल्दी हो सके, मेरा रथ पितामहके पास ले चलिये। मालूम होता है, दुर्योधनके हितैषी पितामह आज हमारी सारी सेनाका संहार कर डालेंगे। इसलिये मैं अपनी सैन्य-रक्षाके निमित्त, अवश्यही भीष्मका वध करूँगा।"

इतना सुनतेही कृष्णने अर्जुनका रथ, बड़े वेगसे, भीष्मकी ओर हाँक दिया। उधर अर्जुनको अपनी तरफ आते देख, भीष्म भी आगे बढ़े। भीष्मके पीछे-पीछे द्रोण, कर्ण और शल्य आदि योद्धा भी अर्जुनसे युद्ध करनेके लिये आये। जब दोनों ओरसे बाण-वृष्टि होने लगी, तब भीष्मने सत्तर, द्रोणने पचीस, कृपने पचास, दुर्योधनने चौंसठ, शल्य और जयद्रथने नौ, शकुनीने पाँच और विकर्णने दस बाणोंसे अर्जुनको बेध डाला। किन्तु वीर अर्जुन, दो सौ

बयालीस बाणोंसे घायल होनेपर भी, बिल्कुल नहीं घबराये, वरन् उन्होंने भीष्मको पचीस, कृपको नौ, द्रोणको छः, विकर्ण और शल्यको तीन तथा दुर्योधनको पाँच बाणोंसे वेध दिया। इसी समय सात्यकि, विराट, धृष्टद्युम्न, द्रौपदीके पाँचों पुत्र और अभिमन्यु—अर्जुनकी सहायतापर आ पहुँचे। तब पितामह भीष्मने, शीघ्रतापूर्वक एक साथही, अस्सी बाण अर्जुनपर चलाये। यह देख, कौरव-पक्षीय लोग आनन्द-ध्वनि करने लगे। उनको इस प्रकार हर्ष मनाते देखकर अर्जुनके शरीरमें एकदम क्रोधाग्नि भड़क उठी। वे बेधड़क होकर कौरव-सेनामें घुस गये और क्षणभरमेंही उन महारथियोंकी खूब ख़बर लेने लगे, जो अभी-अभी हर्षके समुद्रमें गोते लगा रहे थे। इस प्रकार अर्जुन द्वारा अपनी दुर्दशा होते देखकर दुर्योधनने भीष्मसे कहा,—"पितामह! आप और द्रोण, दोनोंही हम लोगोंमें महान् योद्धा हैं तथापि देखिये—कृष्ण और अर्जुन हमारी कैसी मिट्टी पलीद कर रहे हैं। कर्ण हमारे पूरे हितैषी हैं; परन्तु आपके कारणही वे अनमनेसे होकर तमाशा देख रहे हैं, अतएव आप जिस तरह भी हो, हमारी रक्षा कीजिये।"

दुर्योधनके इन वाक्योंसे उत्तेजित होकर भीष्म अर्जुनके रथकी ओर बढ़े और उनसे घोर युद्ध करने लगे। यह देख, शेष योद्धा लोग उनके उत्साहको बढ़ानेके लिये, शङ्ख-ध्वनि, जय-ध्वनि और धन्य-धन्य करने लगे। भीष्मने नौ बाण अर्जुनपर और अर्जुनने दस बाण भीष्मपर चलाये। इसके बाद एक हज़ार बाण छोड़कर अर्जुनने भीष्मको ढाँक दिया। भीष्मने भी फौरनही उन बाणोंको निवारण कर दिया। इस प्रकार दोनों रण-पण्डित हर्षके साथ भाँति-भाँतिसे युद्ध करने लगे। भीष्म जितने बाण अर्जुनपर चलाते थे, वे सभी अर्जुनके चलाये बाणोंसे नष्ट होते

जाते थे और अर्जुन जितने बाण भीष्मपर चलाते थे, भीष्म उन्हें बात-की-बातमें नष्ट कर डालते थे। अवसर पातेही अर्जुनने पचीस बाणोंसे भीष्मको घायल कर दिया। इस तरह दोनों नर-वीर एक दूसरेके सारथी, घोड़े, ध्वजा और रथ-चक्रोंपर आघात करते हुए युद्ध-क्रीड़ा करने लगे।

इसी समय भीष्मने अर्जुनके सारथी महात्मा श्रीकृष्णकी छातीमें तीन बाण मारे,जिनके आघातसे कृष्णकी छातीसे खून प्रवाहित होने लगा। तब अर्जुनने तीन बाणोंसे भीष्मके सारथीको छेद दिया। इतना होनेपर भी उन दोनों महारथियोंके सारथियोंने उस समय अपना-अपना रथ इतनी शीघ्रता और सावधानीसे मण्डलाकार चलाया, कि एक दूसरेके लिये निशानाही न बाँध सका। दोनोंही महावीर प्रहार करनेका मौका देखते हुए चक्कर काटने और शङ्ख-ध्वनि करने लगे। उन लोगोंकी शङ्ख-ध्वनि तथा रथनेमि शब्दसे पृथ्वी विदारिता, विकम्पिता और अनुनादिता होने लगी।

दोनोंही वीर समान बलवान् थे। अतएव दोनोंमेंसे एक भी किसी तरहका अवकाश न पा सका। कौरव पक्षीय योद्धा भीष्मकी रक्षाके लिये और पाण्डव-पक्षीय वीर अर्जुनकी रक्षाके लिये आगे बढ़े। किन्तु उन दोनों सिंहोंके संग्रामका ऐसा पराक्रम देख, सभी लोग आश्चर्य्य करने लगे। जिस प्रकार धर्म्मनिष्ठ पुरुषोंमें कभी, किसी प्रकारका, पाप नहीं दिखाई देता, उसी प्रकार इन दोनों वीरोंके युद्धमें भी कोई त्रुटि नहीं दिखाई पड़ी ; उस समय आकाशस्थित देववृन्द, गन्धर्वगण और इन्द्र भी बड़े आश्चर्य्यसे इस युद्धको देख रहे थे ; अतएव वे सब कहने लगे, कि 'सम्भवतः ऐसा युद्ध फिर कभी देखनेमें नहीं आयेगा।'

भीष्म और अर्जुन,—दोनोंमें बहुत देरतक घोरतर युद्ध होता रहा ; परन्तु एक दूसरेको जीतनेमें असमर्थ था। बहुत देरतक इस प्रकार लड़ते रहनेके बाद दोनों अलग-अलग हो, अपनी शत्रु-सेनापर बाण बरसाने लगे।

एक जगह दुर्योधनके पुत्र लक्ष्मणसे अर्जुनके पुत्र अभिमन्यु युद्ध कर रहे थे। लेकिन बेचारे लक्ष्मणकी क्या सामर्थ्य थी, जो अभिमन्युकी मारको सह सके। अतः अपने पुत्रको सङ्कटमें पड़ा देख, दुर्योधन वहाँ जा पहुँचा। अर्जुन भी अपने पुत्रको इस प्रकार महारथियोंसे घिरा देख, उसकी रक्षाके लिये दौड़े। अर्जुन-को दुर्योधनकी तरफ जाते देखकर भीष्म, द्रोण तथा अन्य महा-रथी भी अर्जुनकी ओर बढ़े। उस समय, इस भगदड़से, इतनी धूल उड़ी, कि चारों ओर अन्धकार मालूम होने लगा। उसी दशामें अर्जुनने इतने बाण चलाये, कि उनसे कोई भी नहीं बच सका। सभी शत्रु हाय-हाय करते हुए घायल हो, ज़मीनपर गिर पड़े! घोड़े हाथी, रथी और पैदलोंके शरीरोंके पहाड़से लग गये। कौरव-सेनाके पैर उखड़ गये। जिधर दृष्टि जाती, उधरही सैनिक गण भागते नज़र आने लगे। घुड़सवार घोड़ोंपरसे, गजारोही गजोंपरसे और रथी रथोंपरसे, अर्जुनके बाण-प्रहारों द्वारा मर-मरकर पृथ्वीपर गिरने लगे। सारी रण-भूमि आहतों और अधमरोंके आर्त्तनादसे गूँज उठी। अर्जुनने रुद्र-रूप धारणकर, सारी रण-भूमिमें घूम-घूमकर, योद्धाओंके गदा, खड्ग, प्रास, तूणीर, शर, शरासन, अंकुश और पताका सहित हाथोंको काट गिराया! इससे सारी रण-भूमि परिघ, फरसा, मुद्गर, प्रास, भिन्दिपाल, निस्त्रिंश, तीक्ष्ण, परश्वध, तोमर, चर्म्म, कवच, ध्वज, छत्र, हेमदण्ड, अंकुश और चाबुकोंसे पटी हुई दृष्टि आने लगे। उस समय किसीकी

इतनी सामर्थ्य नहीं थी, जो अर्जुनके सामने आनेका साहस करता। यदि किसीने साहस पूर्वक अर्जुनका सामना किया भी, तो वह अर्जुनके एकही तीक्ष्ण बाणसे यमपुरका अतिथि हो गया। इस तरह सारी कौरव-सेनाको भगा तथा रणांगनको सूना पा, कृष्ण और अर्जुन हर्ष-सूचक शङ्ख-ध्वनि करने लगे।

यह देख, भीष्म और द्रोणाचार्य्य अर्जुनकी प्रशंसा करते हुए आपसमें कहने लगे,—"अब अर्जुनका सामना करना हम लोगोंके लिये ज़रा कठिन काम है; साथही भागी हुई सेनाको लौटाकर युद्धमें प्रवृत्त करना भी असम्भव है। इसलिये अब युद्धको बन्द कर देनाही ठीक है। वैसे भी दिन ढल चुका है।" अतएव उन्होंने युद्ध बन्द करनेकी भेरी बजायी। उस भेरी-ध्वनिको सुनकर सारे सैनिक अपनी-अपनी छावनियोंमें चले गये।

तीसरे दिनका युद्ध

तीसरे दिन भीष्म सबेरेही 'गरुड़' नामक व्यूहकी रचना कर जहाँ उसकी चोंच थी, वहाँ वे स्वयम् अवस्थित हुए। उधर अर्जुन 'अर्द्धचन्द्र' नामक व्यूह-रचनाकर, उसके बाँयीं ओर जा डटे।

इस प्रकार दोनों ओरसे व्यूह-रचना हो जानेपर, दोनोंही ओरके योद्धा आपसमें युद्ध करने लगे। साथही उधरसे भीष्म और इधरसे अर्जुन भी घोर बाण-वर्षा करने लगे। आरम्भसेही भीषण युद्ध होनेके कारण रण-भूमिमें इतनी धूल उड़ी, कि प्रत्येक योद्धाको अपने शत्रुको देखना कठिन होगया। दिशाओंका पता नहीं रहा। आखिर, हारकर, वे अपना नाम और गोत्र बता-बताकरही एक दूसरेसे युद्ध करने लगे। जब थोड़ी देरके बाद, भयङ्कर रक्त-पात हुआ, तब धूल आप-ही-आप दब गयी!

अब अर्जुन कौरव-सेनाकी तरफ बढ़ने लगे। उन्हें बढ़ते देख, अनेक कौरव-योद्धाओंने बीचमेंही उन्हें घेर लिया और एक साथही कई हज़ार बाणों द्वारा उन्हें ढाँक दिया। शत्रुगण शक्ति, गदा, परिघ, फरसा, प्रास, मुद्गर और मूसल इत्यादि अस्त्र-शस्त्र अर्जुनके रथपर फेंकते थे, पर पार्थ क्षणभरमेंही उन्हें अपने बाणोंसे विफल कर देते थे। अन्तमें अर्जुनने इतने अगणित बाण चलाये, कि कौरव-सेनाके छक्के छूट गये और वह अपना प्राण लेकर इधर-उधर भागने लगी! यह देख शत्रु-मित्र सभीने "साधु-साधु" कहते हुए अर्जुनकी प्रशंसा की। यह देख दुर्योधनने भागी हुई सेनाको धैर्य बँधाकर वापस लौटाया और कुछ कटु वाक्यों द्वारा भीष्मको उत्तेजित किया, जिससे भीष्मजी क्रोधमें आ, पाण्डव-सेनाका बुरी तरह संहार करने लगे।

पितामह जिस ओर भी अपना रथ दौड़ाते थे, उसी ओर मैदान खाली हो जाता था! इस प्रकार थोड़ीही देरमें उन्होंने सारी समरस्थलीको शत्रुओंकी लोथोंसे भर दिया। यह देख, पाण्डव-पक्षके महारथीगण अपने प्राण ले-लेकर समर-क्षेत्रसे भागने लगे। पाण्डवोंके इस भीषण पराभवको देख, कृष्णने रुष्ट होकर अर्जुनसे कहा,—

"अर्जुन! जिस समयकी तुम वर्षोंसे प्रतीक्षा कर रहे थे, वही समय अब उपस्थित है। तब तुम भीष्मपर प्रहार क्यों नहीं करते हो? क्या तुम्हें फिर मोह हो गया? तुमने प्रण किया था, कि भीष्म, द्रोण इत्यादि, जो कोई वीर, कौरवोंकी ओरसे, मुझसे युद्ध करेगा, उसे मैं, उसके सहायकों सहित, निस्सन्देह मारूँगा; अब तुम अपने उस कथनको सत्य क्यों नहीं करते? ज़रा दृष्टि उठाकर देखो न, हमारी ओरकी सारी सेना किस प्रकार अनाथकी तरह इधर-

उधर भागी फिर रही है। हमारी तरफके सभी राजा लोग किस तरह प्राण-रक्षाके लिये व्याकुल होरहे हैं। जिस प्रकार सिंहको देखकर मृगोंका समूह भाग जाता है, उसी प्रकार भीष्मके आतङ्कसे हमारी सेनाके योद्धा भी भाग रहे हैं। क्या इस बातसे तुम्हें लज्जा नहीं आती ?”

यह सुन अर्जुनने कहा,—“आप मेरे रथको पितामह भीष्मजीके सामने ले चलिये ; आज मैं अवश्यही उनका बध करूँगा।”

यह सुन, कृष्णने अर्जुनका रथ पितामहके सामने लेजाकर खड़ा कर दिया। अर्जुनको भीष्मके मुक़ाबिले जाते देख, पाण्डव-सेना भी लौट पड़ी। वृद्ध भीष्म भी बाण बरसाते हुए अर्जुनके सामने आ डटे। इसी बीच भूरिश्रवाने सात बाण, दुर्योधनने तोमर, शल्यने गदा और भीष्मने शक्ति चलाकर एक साथही अर्जुनपर आक्रमण किया। अर्जुनने भूरिश्रवाके चलाये सात बाणोंको सात बाणोंसे, दुर्योधनके तोमरको क्षुरास्त्रसे, भीष्मकी चलायी शक्तिको विद्युत्प्रभा शक्तिसे और शल्यकी गदाको बाणोंसे काट डाला। इसके बाद अर्जुनने गाण्डीवको दोनों हाथोंसे खींचकर ‘महेन्द्र’ नामक एक महा भीषण अस्त्र छोड़ा। उसके छूटतेही, उसमेंसे, सैकड़ों नुकीले बाण निकलकर शत्रु-सेनाको नष्ट करने लगे। गाण्डीवका भयानक शब्द सुनकर लोगोंके कान सुन्न होगये। शत्रुओंका कलेजा काँपने लगा। उस ऐन्द्रास्त्रके प्रयोगसे रथ, अश्व, गज, सारथी और योद्धा लोग मर-मरकर पृथ्वीपर लोटने लगे। शत्रु-सेनामें प्रलयसा मच गया। लोग भागने भी नहीं पाये। जहाँ वे जाते, वहाँ ही, अर्जुनके बाण उनका पीछा करते। देखते-ही-देखते अर्जुनके बाण-सङ्घसे एक बड़ी भारी बैतरणी-समान खूनकी नदी बह निकली। अर्जुनके इस

महत्कार्यको देखकर पाण्डव-सेना हर्ष-ध्वनि करने लगी। कृष्ण और अर्जुनने भी बड़े ज़ोरसे शङ्ख-ध्वनि की।

दुर्योधनने अर्जुनके इस विस्तृत तथा प्राणान्तकारी ऐन्द्रास्त्रको देखकर युद्ध बन्द करनेकी आज्ञा दी। अर्जुन भी अपना, शत्रु-विमर्दनकारी कार्य पूर्णकर, सेना सहित हर्ष मनाते हुए, अपनी छावनीमें लौट आये। आज अर्जुनने युद्धमें अगणित रथों, असंख्य पदातिकों और सात सौ हाथियोंको विनष्ट किया। प्राच्य, सौवीर क्षुद्र, मालव आदि देशोंके सभी लोग संग्राममें मारे गये।

चौथे दिनका युद्ध

अर्जुनके ऐसे भीषण युद्धको देख, भीष्म अत्यन्त क्रुद्ध होगये। सबेरा होनेपर दोनों ओरकी सेनाएँ फिर संग्राम-भूमिमें आजमीं। अर्जुनने आज अपनी सेनाका 'व्याल व्यूह' बनाया। मारू बाजे बजने लगे। उभयपक्षके वीरोंने बड़े ज़ोरसे सिंह-गर्ज्जना और शङ्ख-ध्वनि की। युद्ध छिड़ गया। रथी-रथीसे, गजारोही गजारोहीसे, अश्वारोही अश्वारोहीसे और पैदल पैदलसे भिड़ गये। पितामह भीष्मने प्रबलवेगसे अर्जुनपर आक्रमण किया और इतने बाण चलाये, कि कृष्ण समेत उनका सारा रथ भी ढँक गया। श्रीकृष्णने धैर्य्य रखकर उन घायल घोड़ोंको-ही हाँका और शीघ्रही शर-जालसे बाहर निकल आये। तब अर्जुनने अपना गाण्डीव उठाया और निशित-बाण द्वारा भीष्मके धनुषको काट डाला। भीष्मने शीघ्रही दूसरा धनुष उठाकर उस-पर प्रत्यञ्चा (डोरी) चढ़ायी; अर्जुनने उसको भी काट गिराया। अर्जुनके हाथकी यह सफाई देख, भीष्मने मुक्तकण्ठसे उनकी प्रशंसा करते हुए कहा:—

"वीर-शिरोमणे! तुम धन्य हो! यह कार्य्य तुम्हारे योग्यही है। बेटा! मैं तुमसे परम प्रसन्न हूँ। तुम मेरे साथ जी खोलकर संग्राम करो।"

इतना कहकर भीष्मने दूसरा धनुष उठा लिया और अर्जुनपर भीषण वेगसे बाण बरसाने लगे। उस समय श्रीकृष्णने अर्जुनका रथ इस तरह मण्डलाकार चलाया, कि भीष्मके चलाये सारे बाण व्यर्थ होगये। परन्तु भीष्मने थोड़ासा अवसर पातेही कृष्णार्जुनको घायल कर बाणोंसे ढँक दिया और वे पाण्डवोंके प्रधान वीरोंको खदेड़ने लगे। भीष्मको इस प्रकार महायुद्धमें प्रवृत्त देख, कृष्णने सोचा, कि "भीष्म अब शीघ्रही युधिष्ठिरकी सेनाका अन्त कर देंगे, क्योंकि ये एक दिनमेंही अकेले दैत्य-दानवोंका संहार कर सकते हैं; फिर भला पाण्डवोंका विनाश करना इनके लिये कौनसी बड़ी बात है? इधर दुर्योधनकी सेना हमारी सेनाको भागती देखकर आनन्द पूर्वक आगे बढ़ती आरही है। इसलिये आज मैं पाण्डवोंका कवच धारणकर भीष्मका बध करूँगा।" श्रीकृष्ण इस प्रकार चिन्ता कर रहे थे और भीष्म बरसाती बादलकी तरह बाण-बृष्टि कर रहे थे। द्रोण, विकर्ण, जयद्रथ, भूरिश्रवा, कृप, श्रुतायु, अम्बपति, विन्द, अनुविन्द आदि अनेक महारथी भीष्मका इशारा पाकर अर्जुनके सामने आये। यह सब हाल सात्यकि देख रहे थे। वे फ़ौरनही अपना रथ दौड़ाकर कृष्णार्जुनकी सहायताके लिये आपहुँचे। उस समय सात्यकिने, भीष्मके भयसे भागते हुए, अपने वीरोंसे कहा,—"वीरो! तुम लोग भागकर कहाँ जारहे हो? रणसे भागना तुम्हारा धर्म्म नहीं है। आओ, अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार क्षात्र-धर्म्म पालन करो।"

यह सुन, कृष्णने सात्यकिकी प्रशंसा करते हुए भगोड़े वीरोंको

ललकारकर क्रोध पूर्वक कहा,—"जो भागते हैं,वे सहर्ष भागें। जो भयभीत हों, वे भी भाग जायें। उनके भी यहाँ रहनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। आज मैं स्वयम् भीष्म और द्रोणका, उनके सहायकों सहित, बध करता हूँ। आज कौरव-सेनाका एक भी योद्धा मेरी क्रोधाग्निमें भस्म हुए बिना नहीं रहेगा। मैं आज निश्चयही भीषण चक्र द्वारा भीष्मका संहार करूँगा। महारथी भीष्म और द्रोणको मारकर मैं पाण्डवोंको सुखी करूँगा। दुर्योधनको भी, उसके रक्षकों सहित, आज यमपुरका यात्री बना, पाण्डवोंको इस ससागरा वसुन्धराका सार्वभौम सम्राट् बनाऊँगा। अर्जुनके बलपर ज़रा भी विश्वास नहीं करना चाहिये। ये खिलवाड़ कर रहे हैं और भीष्म संहार कर रहे हैं। इन्हें अपनी सेनाको, भीष्मके बाणोंसे व्याकुल हो, भागती देख, कुछ भी विचार नहीं होता है। समझमें नहीं आता, कि अर्जुनके हाथ-पैर ढीले क्यों पड़ गये हैं? अर्जुन! क्या तुम इसी बलपर शत्रुओंको जीतनेकी डींग हाँकते थे! क्या तुम्हें बार-बार मोह होता है? क्या तुम देखते नहीं, कि भीष्मके बाणोंसे तुम्हारी, मेरी, घोड़ोंकी और हमारी सेनाकी क्या दुर्गति हो रही है? क्या तुम सोरहे हो? तुम्हारे हाथमें गाण्डीव है या खसक गया? मुझे अब तुमसे कोई आशा नहीं दिखाई देती।"

इतना कह महावीर कृष्ण घोड़ोंकी लगाम तथा चाबुक छोड़, हाथमें प्रलयकारी सुदर्शन चक्र ले, अपने रथसे नीचे कूद पड़े और जिस प्रकार सिंह किसी हाथीको मारनेकी इच्छासे प्रसन्नता पूर्वक दौड़ता है, उसी तरह कृष्ण भी उस चक्रको उठाये, भीष्मको बध करनेकी इच्छासे, उनकी तरफ दौड़ चले। कृष्णके दौड़ते समय उनका नील शरीर, पीत वस्त्र, रक्त नेत्र और चमकता हुआ



श्रीकृष्ण-प्रतिज्ञा-भङ्ग।

"श्रीकृष्ण हाथमें प्रलयकारी सुदर्शन-चक्र ले, रथसे नीचे कूद पड़े और भीष्मको वध करनेकी इच्छासे, उनकी तरफ़ दौड़ पड़े।" [पृष्ठ—२२८]

चक्र अपूर्व शोभा पारहा था। इस प्रकार कृष्णको चक्र लिये रण-भूमिमें दौड़ते देख, सभी लोग कौरवोंका नाश हुआ जान, हाहाकार करने लगे। सामनेसे श्रीकृष्णको हाथमें चक्र लिये आते देख, भीष्मने हाथ जोड़कर कहा,—"भगवन्! पधारिये। महात्मन्! आइये। चक्रपाणि! मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ। हे कृष्ण! तुम मुझे प्रसन्नता पूर्वक अवश्य मार डालो।"

भीष्म इसी प्रकार कह रहे थे और कृष्ण उनपर झपटे हुए जारहे थे। कृष्णको चक्र ग्रहणकर रथसे कूदते देख, अर्जुन भी गाण्डीव फेंक, रथसे कूद पड़े और तेज़ीके साथ दौड़कर उन्होंने श्रीकृष्णकी दोनों भुजाओंको बलपूर्वक पकड़ लिया! परन्तु कृष्णको अत्यन्त क्रोध था। वे नहीं ठहरे। जिस प्रकार भीषण तूफान किसी वृक्षको उड़ाता हुआ ले जाता है, उसी प्रकार श्रीकृष्ण भी अर्जुनको घसीटते हुए भीष्मकी तरफ़ ले जाने लगे। कृष्ण अभी दसही क़दम आगे बढ़े होंगे, कि अर्जुनने उनके दोनों पैर बलपूर्वक पकड़ लिये। अब कृष्ण भाग नहीं सके और वहीं ठहर गये। तब अर्जुनने उन्हें प्रणामकर बड़े विनीत भावसे कहा;—"भगवन्! आप अपने क्रोधको रोकिये। मैं आपसे, अपने पुत्र और भाइयोंकी, क़सम खाकर कहता हूँ, कि मैं अपने प्रतिज्ञानुसार ही कार्य्य करूँगा। आपके आज्ञानुसार जैसे भी होगा, कौरवोंका विनाश करूँगा।"

अर्जुनके इस प्रकार प्रार्थना करने और क़सम खानेपर श्रीकृष्ण-का क्रोध शान्त हो गया और वे रथपर जा बैठे। अर्जुनने भी गाण्डीवका टङ्कार कर, क्रोधपूर्वक, बाण-वृष्टि आरम्भ कर दी। अर्जुनको युद्धमें इस तरह विक्रम प्रकाश करते देख, कृप, शल्य, विविंशति, दुर्योधन और विकर्ण,—द्रोणाचार्य्यको आगेकर,

अर्जुनकी तरफ दौड़े। उन्हें, अपने पितापर दौड़ते देख, वीर अभिमन्यु आगे आ, उन्हें रोक कर युद्ध करने लगे। भीष्म, अभिमन्युकी कुछ भी परवाह न कर, बाण बरसाते हुए अर्जुनसे जा भीड़े। अर्जुन भी घोरतर बाण-वृष्टि करने लगे। दोनोंमें बहुत देरतक द्वैरथ युद्ध होता रहा।

इसी समय दुर्योधनकी आज्ञा पाकर त्रिगर्त, मद्र और केकय देशके पचीस हज़ार योद्धाओंने अर्जुन और अभिमन्युको आ घेरा। जब धृष्टद्युम्नको यह समाचार मिला, तब वे क्रुद्ध हो, कई हज़ार हाथियों, रथियों और सैनिकोंको साथ लिये, पिता-पुत्रकी सहायतार्थ आपहुँचे। कृपाचार्य्यको अर्जुनके सामने जाते देख, धृष्टद्युम्नने उन्हें तीन बाणोंसे विद्ध कर दिया। इसके बाद धृष्टद्युम्नने प्रायः सभी रथियोंको विद्ध कर घोर संग्राम किया। सूर्य्य भगवान् अस्ताचलके निकट पहुँच गये थे और कौरवपक्षीय योद्धा बहुत थक चुके थे। अतएव भीष्मकी आज्ञा पा, द्रोणाचार्य्यने युद्ध बन्द करनेकी रण-भेरी बजादी। दोनों ओरकी सेनाएँ अपनी-अपनी छावनियोंमें चली गयीं।

पाँचवें दिनका युद्ध

प्रातःकाल होतेही दोनों ओरकी सेनाएँ फिर रण-भूमिमें आ-डटीं। आज पाण्डवोंने 'श्येन-व्यूह'की और कौरवोंने 'मकर-व्यूह'-की रचना की। श्येन-व्यूहके कण्ठमें अर्जुन स्थित हुए। कुछही देरमें दोनों सेनाएँ आपसमें भिड़ गयीं। दो पहरतक भीषण युद्ध होता रहा। अर्जुन भी एकही जगह खड़े शत्रुओंपर बाण बरसाते रहे।

दिनके तीसरे पहर अर्जुनने, अपने भाइयोंको अन्यान्य राजाओं सहित भीष्मपर आक्रमण करते देख, स्वयं भी प्रबल आक्रमण

किया। कृष्णकी शङ्ख-ध्वनि और अर्जुनके गाण्डीव-टङ्कारसे संग्राम-भूमि गूँज उठी। जिस प्रकार घोर गर्ज्जनाकर मेघ बरसने लगता है, उसी प्रकार अर्जुन, कौरव सेनापर, पैने बाण बरसाने लगे। उस भीषण-बाण-वृष्टिसे कौरव-वीर इतने घबरा गये, कि उन्हें दिशाओं तकका ज्ञान नहीं रहा! इस तरह अर्जुन द्वारा आक्रान्त कौरव-सेना, व्याकुल हो, भीष्मकी दोहाई देने लगी। बिजलीकी कड़कके समान गाण्डीवकी गड़गड़ाहटको सुन, कौरव-योद्धा कानोंमें अँगुली डाले, इधर-उधर भागने लगे। इसी समय अश्वत्थामाने अर्जुनके सामने आ, उनकी छातीमें बड़ेही पैने छः बाण मारे। अर्जुनकी क्रोधाग्नि भड़क उठी। उन्होंने शीघ्रही अश्वत्थामाके धनुषको काट, उसे बाणोंसे बेतरह घायल कर दिया। अश्वत्थामा कुछ कम नहीं था, उसने भी शीघ्रतापूर्वक नया धनुष उठा, अर्जुनको बाणोंसे बुरी तरह बिद्धकर, कृष्णको भी सत्तर बाणोंसे घायल कर दिया। अर्जुनने ओठ चबा, लाल-लाल आँखें कर, अनेक प्राणहारी बाणोंसे अश्वत्थामाको छेद डाला। अर्जुनके उग्र बाण अश्वत्थमाके कवचको तोड़, शरीरमें घुसकर खून पीने लगे। अर्जुनके बाणोंसे अश्वत्थामा ज़रा भी नहीं घबराया, बल्कि उसी तरह अर्जुनपर बाण बरसाता रहा। अर्जुनने उसे अपना गुरु-पुत्र जान, छोड़ दिया और तेज़ीसे आगे बढ़कर कौरव-सेनाका संहार करने लगे। सन्ध्या होते-न-होते अर्जुनने पचीस हज़ार कौरव-योद्धाओंका बध कर डाला! कई महारथियोंने अर्जुनके कार्य्यमें बाधा देनेके लिये उनका सामना किया, परन्तु सामना होतेही उसे सदाके लिये इस लोकसे विदा होना पड़ा। यह देख, केकय देशके योद्धा लोग अर्जुनपर टूट पड़े। दोनोंमें भयङ्कर युद्ध होने लगा। इसी समय, अपनी सेनाको थका और अँधेरा होते देख, भीष्मने

युद्ध बन्द करनेकी घोषणा करदी। दोनों सेनाएँ अपने-अपने शिविरोंमें चली गयीं।

छठें दिनका युद्ध

सूर्योदय होतेही दोनों सेनाएँ फिर मैदानमें आकर खड़ी होगयीं। आज पाण्डवोंने 'मकर-व्यूह' की रचना की, जिसके मस्तक-स्थानपर हमारे चरित-नायक, गाण्डीव-धारी, अर्जुन अवस्थित हुए। कौरवोंकी ओर आज 'क्रौञ्च-व्यूह' बनाया गया। लड़ाईके जुझाऊ बाजे बजने लगे। दोनों ओरसे युद्धके लिये आज्ञा दीगयी। लड़ाई छिड़ गयी। एक दूसरेसे गुत्थमगुत्था करने लगे। आज अर्जुन और भीष्म—दोनोंही एक ओर, दक्षिण दिशामें, अपना-अपना युद्ध-कौशल प्रदर्शित करते हुए, अनेक प्रकारसे संग्राम करते रहे। आजके युद्धमें अर्जुनका कोई विशेष उल्लेखनीय कार्य्य नहीं हुआ। सूर्य्य अस्त हो जानेपर दोनों सेनाएँ, युद्ध बन्द करके, अपनी-अपनी छावनियोंमें जा आराम करने लगीं।

सातवें दिनका युद्ध

सवेरा होतेही दोनों दल, रण-भूमिमें, युद्धार्थ आपहुँचे। आज पाण्डवोंने 'वज्र-व्यूह' और कौरवोंने 'मण्डल-व्यूह' की रचना की। मारू बाजे बजने लगे। युद्ध आरम्भ हो गया। कौरव-पक्षीय बहुतसे राजाओंने मिलकर एक साथ तोमर, नाराच और गदा आदि अस्त्र-शस्त्र लिये अर्जुनपर बड़े ज़ोरका धावा किया। यह देख अर्जुनने क्रुद्ध हो, श्रीकृष्णसे कहा,—"गोपाल! देखिये, आज पितामहने कैसे दृढ़ व्यूहकी रचना की है! ये राजा लोग कवच पहनकर मेरे साथ लड़ने आये हैं। आज मैं आपके सामनेही इनका बध करूँगा।"

इतना कह, अर्जुनने गाण्डीवकी डोरीको हाथसे रगड़, उसपर बाण चढ़ाकर, उन राजा लोगोंपर बाण-वर्षा आरम्भ करदी। जैसे वर्षाकालमें बादल अपनी बूँदोंसे सूखे तालाबको भर देते हैं, उसी भाँति अर्जुनने अपने बाणोंसे उन राजा लोगोंको ढाँप दिया। इसके बाद अर्जुनने ऐन्द्रास्त्रका प्रयोगकर उन राजाओंको व्याकुल कर दिया। उस ऐन्द्रास्त्रसे घोड़े, हाथी, सैनिक—सभी बिद्ध हो गये। अर्जुनको मारना तो दूर रहा, अब वे बेचारे अपनीही प्राण-रक्षाके निमित्त भागकर भीष्मकी शरणमें जा छिपे।

अब अर्जुन सबको छोड़कर सीधेही भीष्मपर दौड़े। भीष्म भी अर्जुनको आते देख, कुछ आगे बढ़े। दूसरेही क्षण दोनोंमें भीषण संग्राम प्रारम्भ हो गया। कुछ देरतक दोनोंही लड़ते रहे। इसके बाद दोनों अलग-अलग हो, अपनी-अपनी शत्रु-सेनापर बाण बरसाने लगे। थोड़ी देर बाद अर्जुनने श्रीकृष्णसे कहा,—"वासुदेव! अब आप कृपाकर रथको इस ढँगसे चलाइये, कि जहाँ-जहाँ कौरव-महारथी हैं, वहाँ-वहाँ पहुँचकर मैं उनसे युद्ध कर सकूँ।"

यह सुनतेही श्रीकृष्णने कौरव-सेनाके बीचमें रथको घुसेड़ दिया। श्रीकृष्णको लापरवाहीके साथ इधर-उधर रथ दौड़ाते तथा अर्जुनको बाण बर्साते देख, कौरव-सेनाके लोग हाहाकार करने लगे। अर्जुनने एक जगह सुशर्माको खड़ा देखकर कहा:—"तुम इस युद्धके प्रधान मनुष्य और हमलोगोंके पक्के शत्रु हो। तुम्हें मैं खूब अच्छी तरह जानता हूँ और तुम्हारे पूर्वकृत अत्याचारोंका बदला चुकाना चाहता हूं। आज मैं तुम्हें बिना मारे नहीं छोड़ूँगा। सावधान होकर युद्ध करो।"

यह सुन सुशर्मा मारे क्रोधके जल गया और अपने सहायकों सहित अर्जुनपर बाण-वृष्टि करने लगा। अर्जुनने उन सबके

धनुषोंको काट डाला और एक साथही सबको बाणोंसे बिद्ध कर दिया। बहुतोंके कवच टूट गये और बहुत बुरी तरह घायल हुए। कई वीरोंके मस्तक कटकर पृथ्वीपर लुढ़कने लगे। सारांश यह, कि वे सब एकही साथ कालके कराल गालमें जा पड़े। उन राजाओंको मरा देख, उनके पृष्ठ-रक्षक त्रिगर्तराज, बत्तीस योद्धाओं सहित; रथपर चढ़कर अर्जुनके सामने आये। उन्होंने आतेही जल-धाराकी तरह अर्जुनपर बाण चलाये। तब अर्जुनने उन पृष्ठ-रक्षकोंको साठ बाणोंसे मार डाला और अब वे प्रसन्न मनसे शत्रु-सेनाका संहार करते हुए भीष्मकी ओर बढ़ने लगे।

त्रिगर्तराज, अर्जुन द्वारा अपने भाइयोंको मरता देख, कितनेही रथी राजाओंको इकट्ठाकर, अर्जुनको मारनेकी इच्छासे, उनके सामने आया।

शिखण्डी आदि पाण्डव-वीरगण अर्जुनको त्रिगर्त्तों द्वारा आक्रान्त देख, शीघ्रही उनकी सहायतापर आपहुँचे। अर्जुन भीष्म-के पास पहुँचनेके लिये अत्यन्त आतुर थे; अतः उन्होंने त्रिगर्त्तों-को सामनेसे आते देख, क्रुद्ध हो, देखते-ही-देखते उन्हें छिन्न-भिन्न कर दिया। अपना रास्ता साफ़कर अर्जुन आगे बढ़ेही थे, कि इस बार दुर्योधन और जयद्रथने उन्हें रोकना चाहा। परन्तु अर्जु-नने इन मार्ग-बाधकोंको भी अपने तीखे बाणोंकी मारसे मार कर भगा दिया। इस प्रकार अपना मार्ग साफ करते हुए अर्जुन, भीष्मके पास जा पहुँचे। इसी समय धर्म्मराज युधिष्ठिर भी, भीमसेन, नकुल और सहदेवको साथ लिये भीष्मके पास आपहुँचे। इन पाँचों भाइयोंको एक साथ सामना करते देख, भीष्म तनिक भी नहीं घबराये। इधर भीष्मके पक्षपर भी दुर्योधन, जयद्रथ आदि महारथी आपहुँचे। दोनों ओरसे खूब लोहा बरसा। अर्जुनने

इन्द्रकी तरह अचल भावसे घण्टोंतक भयङ्कर युद्ध किया। भीष्मने भी अपने तीखे तीरोंसे अर्जुनको बेतरह व्याकुल कर दिया। किन्तु वे सहजमेंही पीछे हटने वाले नहीं थे, अतः उन्होंने दूना उत्साह दिखाकर भीष्मको रथ सहित बाणोंसे ढाँक दिया। पितामह भीष्मने भी अपने दिव्य बाणों द्वारा अर्जुनके बाणोंको काटकर बाण छोड़नेमें अत्यन्त पराक्रम प्रदर्शित किया। इसी बीच अर्जुनने मौका पा, भीष्मके धनुषको भल्लास्त्र द्वारा काट गिराया। किन्तु भीष्म उसी क्षण दूसरा धनुष उठाकर बाण बरसाने लगे। अर्जुन भी अपने बाणोंसे उनके बाणोंको निष्फल करने लगे। इस भाँति दोनोंही रणवीर बहुत समय तक रोमाञ्चकारी महाभीषण युद्ध करते रहे। जब साँझ होनेतक दोनोंमेंसे कोई भी पीछे नहीं हटा, तब लाचार युद्ध बन्द करना पड़ा। दोनों सेनाएँ अपने-अपने शिविरोंमें विश्रामके लिये चली गयीं।

आठवें दिनका युद्ध

अगले दिन सवेरा हुआ। सूर्य्य निकलतेही दोनों ओरके युद्धार्थी दल भी कुरुक्षेत्रके मैदानमें आ डटे। भीष्मने आज 'सागर व्यूह'की रचना की थी और पाण्डवोंने 'श्रृङ्गाटक व्यूह' की। अर्जुन व्यूह-रचनाकर उसके ठीक मध्यमें अवस्थित हुए। दोनों ओरसे बाजे बजने लगे। दोनों ओरके योद्धा लोग एक दूसरेको ललकार कर युद्ध करने लगे। आज अर्जुनने शत्रु-पक्षके अनेक राजाओंसे महान् युद्धकर, उनको सदाके लिये इस भूतलसे बिदा कर दिया।

इसी समय नाग-कन्याके गर्भसे उत्पन्न हुआ, अर्जुनका इरावान् नामक पुत्र, अपने पिताके सहायतार्थ, अपने साथ बड़ी भारी सेना लिये आ पहुँचा और अर्जुनसे आज्ञा प्राप्तकर कौरवोंसे महा भया-

नक युद्ध करने लगा। उसके हाथसे शत्रुओंकी अनन्त सेना मारी गयी और अन्तमें वह भी वीर-गतिको प्राप्त हो गया।

अन्यत्र लड़ते हुए अर्जुनको जब इरावान्के मरनेका दुःखद समाचार मिला, तब सर्पकी तरह लम्बी साँस छोड़कर कृष्णसे बोले,--"महाराज! विदुरजीने इस युद्धके परिणामका अनुमान कर धृतराष्ट्रको कितना ही मना किया था, परन्तु उन्होंने एक न माना। फलतः आज यह समय आ ही पहुँचा, जबकि कौरवगण हमें मारते हैं और हम उन्हें। यह महान् अनर्थ केवल धनके लिये हो रहा है! कितने खेदकी बात है, कि धनके लोभमें फँसकर हमलोग अपने कुलका अपने आपही संहार कर रहे हैं। इसलिये, हे केशव! धनको धिक्कार है। निर्धनता सहित मर जाना अच्छा; परन्तु कुलका नाश करके धन प्राप्त करना महापाप है। आपही बताइये, हमलोग इस प्रकार अपना वंश-नाशकर क्या लाभ उठायेंगे? शकुनि और कर्णकी अनुचित सलाहोंमें दुर्योधनके फँस जानेसेही आज यह क्षत्रिय-कुल-संहारी महाभीषण हत्याकाण्ड उपस्थित हुआ है। वासुदेव! यद्यपि अब मेरी इच्छा लड़नेकी बिल्कुल नहीं है; किन्तु युद्धसे विरत देख, क्षत्रिय-समाज मुझे कायर या निर्बल ठहरायेगा। इसी भयसे मैं युद्ध कर रहा हूँ। ख़ैर, अब आप मेरे रथको कौरव-सेनामें ले चलिये; क्योंकि मैं इस झगड़ेको शीघ्र ही समाप्त करना चाहता हूँ। व्यर्थ समय गँवानेसे कोई लाभ नहीं है।"

यह सुन, श्रीकृष्णने रथको बड़े वेगसे कौरव-सेनाकी तरफ दौड़ाया। अर्जुनको आते देख, भीष्म, कृप, भगदत्त और सुशर्मा आदि कई महारथी उनके सामने आये और उनका मार्ग रोकनेके लिये भीषण रूपसे बाण-वर्षा करने लगे। परन्तु अर्जुनने उनकी तरफ

आँख उठाकर भी नहीं देखा। वे बराबर आगे बढ़ते गये और जिस तरह भेड़ोंके झुण्डमें भेड़िया घुसकर महा उत्पात मचा देता है, उसी तरह कौरव-महारथियोंमें प्रवेशकर, उनके दाँत खट्टे करने लगे। इस तरह युद्ध करते हुए उन्हें साँझ हो गयी। रण भूमिमें अन्धेरा छा गया। उस समय कुछ दिखाई न पड़नेके कारण, दोनों ओरसे युद्ध बन्द कर दिया गया।

नवें दिनका युद्ध

सूर्योदय हो आया। दोनों दल समराङ्गणमें अपना-अपना व्यूह बनाकर आ डटे। आज भीष्मदेव युद्धके नये-नये मन्सूबे गाँठ, 'सर्व्वतोभद्र' नामक व्यूहकी रचनाकर, अनेक महारथियोंसे सुरक्षित होकर रण-भूमिमें आये थे। इधर पाण्डवोंने 'दुर्ज्जय' नामक व्यूहकी रचना की थी। चारों ओर भेरी, मृदङ्ग, ढोल, दुन्दुभि आदि बाजे खूब ज़ोरसे बजकर वीरोंमें उत्साह भर रहे थे। सब तैयारी हो जानेपर युद्ध छिड़ गया। अर्जुन भी अनेक पाण्डव-वीरोंसे रक्षित हो, भीष्मकी ओर बढ़े। कुछ दूर अग्रसर होते-न-होते, कृपाचार्य्यने अर्जुनको बीचमेंही पचीस बाणोंसे बिद्ध कर दिया। यह देख, सात्यकिने कृपाचार्य्यपर आक्रमण किया और नौ बाणोंसे उन्हें छेद डाला। इस प्रकार सात्यकि, आचार्य्यको बाणोंसे बिद्धकर, उनकी सहायता करनेवाले, अश्वत्थामापर टूट पड़े। इधर द्रोणाचार्य्य और अर्जुन दोनोंही महा लोमहर्षण युद्ध कर रहे थे।

पहले अर्जुनने आचार्य्यको तीन बाणोंसे बिद्ध कर दिया। अर्जुनके इस आक्रमणसे द्रोण घबराये नहीं, बल्कि उन्होंने अर्जुनको तत्काल कई बाणोंसे छेद डाला। तब अर्जुनने क्रुद्ध होकर महान् बाण-वर्षा की, जिससे द्रोणाचार्य्यकी रोषाग्नि प्रखर रूपसे प्रज्ज्व-

लित हो उठी। उन्होंने अत्यन्त क्रोध करके बाण-वर्षा द्वारा अर्जुन-को छिपा दिया। इसी समय दुर्योधनने सुशर्माको द्रोणाचार्य्यकी सहायताके लिये भेजा। सुशर्माने भी आतेही अर्जुनपर बाण बरसाना शुरू कर दिया। वीर अर्जुनने उन दोनोंके चलाये बाणोंको तत्काल नष्टकर, पहले सुशर्माको बाणोंसे घायल किया, अनन्तर उन्होंने वायव्यास्त्रका प्रयोगकर, बड़े ज़ोरकी आँधी चला दी। यह देख, द्रोणाचार्य्यने शैलास्त्र चलाकर अर्जुनके वायव्यास्त्रको निष्फल कर दिया। तब अर्जुनने फिर महाक्रुद्ध हो, सुशर्मा और आचार्य्यको युद्धमें खूबही छकाया। इस प्रकार अर्जुन द्वारा आचार्य्य और सुशर्माकी दुर्द्दशा होती देखकर दुर्योधन, कृप, अश्वत्थामा, शल्य, सुदक्षिण, बिन्द, अनुविन्द और बाल्हीकराजने सेना-सहित पहुँचकर अर्जुनको चारों ओरसे घेर लिया। इस बार पार्थ सुशर्माके साथी क्षत्रियोंका संहार करने लगे। इसी बीचमें, मौक़ा पाकर सुशर्माने सत्रह बाणोंसे कृष्णको बिद्धकर, नौ बाणोंसे अर्जुनको घायल कर दिया। अब अर्जुन कानतक गाण्डीवको खींचकर दनादन बाण छोड़ने लगे, जिनके लगतेही सुशर्माके सारे सहायकोंका वहीं ढेर हो गया और जो बच रहे, वे बेचारे प्राण लेकर भाग गये।

अब सुशर्माका जीवन सङ्कटमें पड़ गया। यह देख दुर्योधन, भीष्मको आगेकर, उसकी प्राण-रक्षाके लिये, अर्जुनकी ओर बढ़ा। इस समय अन्यान्य पाण्डव भी अर्जुनकी सहायताके लिये उनके पास आपहुँचे थे। पाण्डवोंके पक्षको प्रबल पड़ता देख, इस बार भीष्मने पाण्डव-सेनापर बड़े पैने बाण चलाये ; किन्तु अर्जुनने भीष्मको फ़ौरनही नौ बाणोंसे बिद्ध कर दिया। इससे क्रुद्ध हो, भीष्मने यम-रूप धारणकर पाण्डव-सेनाको बुरी तरह मथना आरम्भ कर

दिया, जिससे पाण्डव-सेना, कुछ देर बाद, प्राण लेकर भागने लगी। यह देख, कृष्णने रथ ठहराकर अर्जुनसे कहा,—"कौन्तेय! मैं तुमसे आज फिर अनुरोध करता हूँ, कि सारा ममत्व छोड़कर तुम भीष्मका बध करो। अपने वचनोंको स्मरण कर, उन्हें जिस तरह भी हो, पूरा करो; नहीं तो भीष्म आज समस्त पाण्डव-पक्षीय राजाओंको नष्ट कर डालेंगे।"

अर्जुनने कहा,—"अबध्य लोगोंका बधकर नरक-वास करना या उन्हें न मारकर वन-वास करना, दोनों बातें समान हैं। अतएव बताइये, इस समय मुझे कौनसा काम करना चाहिये?"

कृष्णने कहा,—"अर्जुन! क्षत्रियोंको, कर्त्तव्य उपस्थित होनेपर, इन लौकिक बातोंका तनिक भी ख़याल न करना चाहिये। तुम तो इस समय बध्याबध्यकेही फेरमें पड़े हुए हो और भीष्म यह सुयोग पाकर तुम्हारे पक्षका अनवरत नाश कर रहे हैं।"

कृष्णके इस कथनको सुनकर अर्जुन मन-ही-मन लज्जित हुए और अब उन्होंने महा क्रोधमें भरकर भीष्मपर दनादन बाण चलाना आरम्भ कर दिया। अर्जुनको समरमें इस प्रकार उत्साहपूर्वक युद्ध करते देख, पाण्डवोंकी भागी हुई सेना फिर हिम्मत बाँधकर रण-भूमिमें लौट आयी। भीष्मने इस बार फिर सिंहनादकर पार्थके रथको बाणोंसे आच्छादित कर दिया। अर्जुनने उन बाणोंको शीघ्रही हटाकर भीष्मके धनुषको काट गिराया। भीष्मने दूसरा धनुष उठा, उसे डोरी चढ़ानेके लिये जैसेही झुकाया, कि अर्जुनने वह धनुष भी काट दिया! अर्जुनकी ऐसी हस्तलाघवता देख, भीष्मने उनकी प्रशंसा करते हुए अनेक साधुवाद दिये और फौरनही दूसरा धनुष उठा, उसपर डोरी चढ़ाकर, वे अर्जुनपर फिर बाण चलाने लगे। इस समय कृष्णने रथको मण्डलाकार घुमाकर भीष्मके चलाये सारे

बाणोंको निष्फल कर दिया ; परन्तु अर्जुन और कृष्ण, दोनोंही अत्यन्त घायल हो गये।

इधर अर्जुन लापरवाहीसे युद्ध कर रहे थे और उधर भीष्म बुरी तरह पाण्डव-सेनाका विनाश कर रहे थे। कृष्णसे पाण्डवोंका यह नाश किसी तरह देखा न गया । वे घोड़ोंकी लगाम छोड़कर रथसे कूद पड़े तथा क्रोधसे लाल-लाल आँखें किये, हाथमें चाबुक लिये, सिंह-नाद करते हुए, भीष्मकी ओर दौड़े।

श्रीकृष्णको भीष्मकी तरफ बढ़ते देख, कौरव-सेना जहाँकी तहाँ सन्न होकर, पाषाण-प्रतिमाकी तरह, खड़ी रह गयी। "भीष्म मारे गये, भीष्म मारे गये"—यही कोलाहल सर्वत्र सुनाई पड़ने लगा। कृष्ण भी अपना पीताम्बर फहराते हुए बड़े वेगसे भीष्मपर झपटे। यह देख, भीष्मने कहा,—"गोविन्द! पधारिये। मैं आपको प्रणाम करता हूँ। गोपाल! मैं आपका दास हूँ, आप मुझे अवश्यही मारिये।"

कृष्णको भीष्म-बधके निमित्त चाबुक हाथमें लिये दौड़ते देख, अर्जुनने पीछेसे जाकर उनकी दोनों भुजाएँ पकड़ीं। कृष्ण इतनेपर भी नहीं रुके और दौड़तेही रहे। अर्जुनमें इतनी शक्ति कहाँ, जो उन्हें ठहरा सकें? अतः वे भी कृष्णके साथ-साथ घिसटते हुए जाने लगे। परन्तु कृष्णके आठ-नौ पग अग्रसर होतेही अर्जुनने उनके पैरोंको पकड़ लिया। अब कृष्ण आगे न बढ़ सके और वहीं रुक गये। तब अर्जुनने कातर हो, क्रोधाकुल नेत्रोंसे, सर्पकी तरह साँस लेते हुए, कृष्णसे प्रार्थनाकर कहाः—"माधव! शान्त होइये। तनिक ठहरिये। देखिये, रण-निमन्त्रणके समय आपने कहा था, कि मैं युद्ध नहीं करूंगा; इस समय क्रोध-वश होकर आप अपनी उस बातको मिथ्या प्रमाणित न कीजिये। यदि आप

युद्ध करेंगे, तो लोग आपको मिथ्यावादी कहेंगे। गोविन्द! यह सारा भार मेरे ऊपर है। मैं भीष्मको अवश्य मारूँगा। मैं शस्त्र, पुत्र और सत्यकी शपथ खाकर कहता हूँ, कि मैं भीष्मको मारकर शत्रुओंका नाम-निशानतक मिटा दूँगा।"

यह सुनकर कृष्ण वहीं रुक गये और चुपचाप रथपर आकर बैठ गये। उन दोनोंके रथपर बैठतेही भीष्मने फिर उनपर अगणित बाण चलाने आरम्भ कर दिये। अर्जुनने भी तीक्ष्ण-बाणों द्वारा भीष्मका सामना किया। कुछ देरतक दोनोंमें द्वन्द युद्ध होता रहा; परन्तु कोई भी एक दूसरेको परास्त न कर सका। आज भीष्मजीके पराक्रमका सामना करनेकी किसीमें भी सामर्थ्य नहीं थी और सारी पाण्डव-सेना हतोत्साह होकर इधर-उधर भाग रही थी।

सूर्य्य अस्त होतेही युद्ध बन्द हो गया और दोनों ओरकी सेनाएँ अपने-अपने डेरोंमें चली गयीं।

आज भीष्म द्वारा अपनी सेनाका इस प्रकार भीषण नाश होते देख, युधिष्ठिरको बड़ा भारी दुःख हुआ। रातको पाँचों भाई, कृष्ण सहित, भीष्मको मारनेकी तदबीर सोचने लगे। कृष्णने कहा,—"राजन्! आप व्यर्थ ही चिन्ता न करें। भीष्मको मारना कौनसी बड़ी बात है? यदि मोहवश अर्जुन उनके बधकी इच्छा नहीं करते, तो न सही; मैं तो उन्हें अवश्य ही मारूँगा। क्योंकि जो लोग पाण्डवोंके शत्रु हैं, वे मेरे भी शत्रु हैं। विशेषतः अर्जुन मेरे मित्र हैं; मैं उनके लिये अपने शरीरका मांसतक भी काट कर दे सकता हूँ। अतः अर्जुनने जो भीष्मको मारनेकी प्रतिज्ञा की है, उसे मैंही पूर्णकरके उनकी बात रखूँगा। मेरे इस कथनका यह मतलब नहीं, कि अर्जुन भीष्मको नहीं मार सकते। यदि वे चाहें,

तो भीष्मको आसानीसे मार सकते हैं। इनके लिये यह कोई बड़ी बात नहीं है।"

यह सुन युधिष्ठिरने कहा,—"भगवन्! भीष्म-बधके लिये आपका शस्त्र ग्रहण करना ठीक न होगा। अतः मेरी समझमें भीष्मजीके पास जाकर उन्हींसे यह पूछा जाये, कि हमारी विजय कैसे होगी?"

युधिष्ठिरकी यह बात सबको अच्छी लगी। अतएव पाँचों पाण्डव श्रीकृष्णको साथ लिये, भीष्मकी छावनीमें गये और उन्होंने भीष्मजीसे अपनी सारी बातें कह सुनायीं। उन्होंने कहा :—

"मेरे जीवित रहते तुम लोग कदापि जीत नहीं सकते। मुझे मारकरही तुम लोग जीत सकते हो। इस लिये यदि तुम अपनी विजय चाहते हो, तो सबसे पहले मुझे मारो। यों तो जबतक मेरे हाथमें धनुष है, तबतक मुझे कोई भी जीत नहीं सकता, पर एक उपाय है। मैं स्त्रियोंपर शस्त्र नहीं उठा सकता। तुम्हारे पक्षका शिखण्डी नामका महारथी, जो जन्मके समय स्त्री था और अब पुरुष हो गया है, कलके युद्धमें अर्जुन उसेही आगेकर मुझपर प्रहार करे। मैं तो उसपर वार करूँगा नहीं, अतः कल मैं सहजमेंही मारा जाऊँगा।"

उस समय सबने अत्यन्त भक्तिके साथ भीष्मको प्रणाम किया; फिर सब अपनी छावनीमें लौट आये। छावनीमें आकर अत्यन्त दुःखके साथ अर्जुनने कृष्णसे कहा,—"महात्मन्! मैं पितामह भीष्मको कैसे मारूँगा? मैंने बचपनमें, धूलमें सने अंगसे उनकी गोदीमें चढ़कर, उनके स्वच्छ अंगोंको मलिन किया है। वे तो मेरे बापके भी बाप हैं। भला, ऐसी दशामें मैं उन्हें कैसे मार सकूँगा? मेरी सारी सेना भलेही उनको मारे, परन्तु मैं तो उनपर कदापि अस्त्र-प्रहार नहीं करूँगा!"

कृष्णने कहा,—"अर्जुन! तुमने तो पहलेही प्रतिज्ञा की है, कि 'मैं भीष्मको मारूँगा'; अतएव तुमको अपने प्रतिज्ञानुसार उन्हें अवश्य मारना चाहिये। प्रतिज्ञासे विमुख होना तुम जैसे वीर क्षत्रियोंके लिये कदापि उचित नहीं है। विना उनको वध किये तुम्हारी जीत कभी होही नहीं सकती। अतएव तुम भीष्मको अवश्य मारो। तुम्हारे सिवा उन्हें युद्धमें स्वयम् इन्द्र भी नहीं मार सकते; इसलिये तुम उन्हें, किसी बातका भी विचार न करके, अवश्य मारो। वृहस्पतिने अपनी नीतिमें कहा है, कि "श्रेष्ठ अथवा वृद्ध मनुष्य भी यदि अत्याचारी और दूसरों-के प्राणोंका लेनेवाला हो, तो उसे अवश्य मार डालना चाहिये। अतएव हे अर्जुन! शत्रुके साथ संग्राम करना, प्रजाकी रक्षा और यज्ञ करनाही क्षत्रियोंका एकमात्र धर्म्म है।"

इस प्रकार परस्परमें वार्त्तालाप करते हुए दोनों वीर सोरहे।

दसवें दिनका युद्ध

सवेरा होनेपर, नित्य-क्रियासे निपटकर, दोनों सेनाएँ मैदानमें आकर खड़ी हो गयीं। पाण्डवोंने "सर्व शत्रु-निवर्हण व्यूह" बनाकर उसके अग्रभागपर शिखण्डीको रखा और अर्जुन आदि वीर उसके पीछे रहे। युद्धारम्भके समय अर्जुनने शिखण्डीको अभय देते हुए कहा,—"वीरवर! आज मैं शत्रु-पक्षको मर्द्दन करता हुआ तुम्हारे साथही रहूँगा; अतएव तुम निधड़क होकर भीष्मपर आक्रमण करो। वे तुम्हें किसी तरह भी पीड़ित नहीं कर सकेंगे। आज हमने भीष्मको मारनाही तुम्हारा कर्तव्य निर्द्धारित किया है। यदि तुम भीष्मको बिना मारे हट आओगे, तो लोग तुम्हारा और मेरा—दोनोंका उपहास करेंगे। इसलिये आज ऐसी चेष्टा की जाये,

जिससे हमलोगोंकी हँसी न हो और पितामह भी सहजमेंही मारे जायें। द्रोण, अश्वत्थामा, कृप, दुर्योधन, चित्रसेन, विकर्ण, जयद्रथ, अवन्तिराज, विन्द, अनुविन्द, कम्बोजराज, सुदक्षिण, भगदत्त, मगधराज, सोमदत्तके पुत्र, राक्षस और अन्यान्य महावीरोंकी तुम तनिक भी परवाह न करना। मैं इन्हें तुम्हारे पास भी न फटकने दूँगा।"

इतना कहकर महावीर अर्जुन, शिखण्डी सहित, विपक्षियोंका मंथन करते हुए भीष्मकी ओर बढ़े और सिंहनादकर शत्रुओंका हृदय दहलाने लगे।

उधर शत्रु-पक्षके लोगोंमेंसे दुश्शासन, शिखण्डीको आगे किये, अर्जुनको भीष्मपर आक्रमण करते देख, उन्हें निवारण करनेकी चेष्टा करने लगा। अतएव उसका अर्जुनसे महा संग्राम छिड़ गया। दुश्शासनने अर्जुनको तीन और कृष्णको बीस बाण मारे। अर्जुनने भी कृष्णको बाणोंसे बेतरह बिद्ध हुआ देख, क्रोधमें भरकर, सौ बाणों द्वारा दुश्शासनको बिद्ध कर दिया। वे सब बाण उसके कवचको तोड़कर शरीरमें घुस गये। उनसे व्यथित हो, दुश्शासनने अर्जुनके ललाटमें पाँच बाण मारे। इस वारके आक्रमणने अर्जुनको बेतरह क्रुद्ध कर दिया। वे आग बबूला हो, बुरी-तरहसे दुश्शासनको खदेड़ने लगे। दुश्शासन भी अर्जुनपर अचल भावसे बाण-वृष्टि करता रहा। अन्तमें अर्जुनने तीन बाणों द्वारा उसके धनुष और रथको तोड़, नौ बाण मारकर उसे घायलकर दिया। किन्तु अपने घायल होनेकी तनिक भी परवाह न कर दुश्शासनने दूसरा धनुष उठाकर अर्जुनको दोनों भुजाओं तथा वक्षःस्थलपर पच्चीस बाण मारे। तब अर्जुनने यमदण्डके समान कई बाण चलाये, जिन्हें दुश्शासनने आते-ही-आते मार्गमें काट

गिराया और निशित बाणों द्वारा अर्जुनको घायल कर दिया। तब तो अर्जुनने कानतक गाण्डीव खींचकर कितनेही बाणोंसे दुश्शासनको छेद डाला, जिनसे वह घबरा गया और अपने प्राण-रक्षार्थ दौड़कर तुरन्तही भीष्मके रथपर जा चढ़ा। जब दुश्शासनको कुछ चेतना हुई, तब वह फिर पूर्ववत् अर्जुनसे भिड़ गया और अर्जुन भी उसे निवारण करते रहे। थोड़ी देरमेंही अर्जुनने फिर दुश्शासनको मार भगाया और दूने उत्साहसे शत्रु-सेनाको मर्द्दन करना आरम्भ कर दिया।

एक जगह भीमसेन अकेलेही दस महारथियोंसे लड़ रहे थे। अर्जुन उनके सहायतार्थ वहाँ जा पहुँचे। यह देख, दुर्योधनने, अर्जुनको बध करनेके लिये, सुशर्माको भेजा। सुशर्माने दुर्योधनकी आज्ञा पातेही, हज़ारों रथियों सहित आकर, भीमार्जुनको घेर लिया। दोनोंमें घोर युद्ध होने लगा। वहाँ भगदत्त, कृपाचार्य्य, कृतवर्मा, जयद्रथ, चित्रसेन और विकर्ण आदि जितने भी नामी-नामी योद्धा थे, सभीको अर्जुनने तीन-तीन बाणोंसे घायल कर दिया। अनन्तर वे शत्रु-सेनाका संहार करने लगे। जयद्रथने चित्रसेनके रथपरसे अर्जुनपर बहुतसे बाण छोड़े। शल्य और कृपाचार्य्यने कितनेही बाणोंसे अर्जुनको विद्ध किया। चित्रसेन आदि वीरोंने भी पाँच-पाँच बाणों द्वारा अर्जुनको घायल करनेकी चेष्टा की। इससे अर्जुन क्रुद्ध सर्पकी भाँति उन लोगोंकी महा दुर्गति करने लगे। उस दिन अर्जुनने सैकड़ों वीरोंके मस्तक काटकर, उन्हें इस दुनियासे, सदाके लिये विदा कर दिया। रण-भूमि लोथों, टूटे हुए रथ-खण्डों, हथियारों और बाणोंसे भर गयी। आज अर्जुनने इतनी भयङ्करताके साथ युद्ध किया था, कि रथियोंके लाख निवारण करनेपर भी बहुतसी

शत्रु-सेनाका नाश होगया। यह देख, शत्रुगण अर्जुनपर असंख्य बाण बरसाने लगे। अर्जुन उन बाणोंको निवारण करते हुए शत्रु-पक्षीय वीरोंको भी ठिकाने लगाने लगे। इसी बीच शल्यने अनेक भाले अर्जुनके वक्षःस्थलपर मारे। अर्जुनने पाँच बाणोंसे उनके धनुषको काट, उनके मर्म्मस्थानको बेध दिया। उस चोटसे क्रोधमें आ, शल्यने एक मज़बूत धनुष ले, तीन बाण अर्जुनके और पाँच बाण कृष्णके मारे, पर अर्जुनने इसका बदला फौरनही चुका लिया।

इसके बाद अर्जुनने सुशर्माको कितनेही बाणोंसे घायलकर उसकी बहुतसी सेनाका भी संहार कर डाला। अब अर्जुन शिखण्डीको आगेकर, भीष्म-बधकी कामनासे उनकी ओर बढ़े। भीष्मको देखतेही अर्जुन उनपर ऐसे झपटे, जैसे एक मत-वाला हाथी दूसरे मस्त हाथीपर दौड़ता है। अर्जुनको रोकनेके लिये भगदत्त, एक विशाल हाथीपर चढ़कर, सामने आया और अर्जुनपर घोर बाण-वर्षा करने लगा। अर्जुनने हाथीको अपनी ओर आते देख, उसे एक नुकीले बाणसे विद्धकर, शिखण्डीसे कहा,—"प्रिय मित्र! शीघ्र बढ़ो और भीष्मपर पूर्ण रूपसे आक्रमण करो। तुम्हारे मार्गका रोड़ा भगदत्त, मुँहकी खाकर, लौट गया है; अब देर न करो।"

शिखण्डी इस उत्तेजनासे दूना उत्साहित हो, बड़ी सफाईसे भीष्मके सामने जा पहुँचा और उसने फौरन भीष्मपर बाण-वृष्टि करनी आरम्भ कर दी। भीष्म इस समय पाण्डव-सेनाका संहार करनेमें संलग्न थे। आज उनके आगे कोई भी वीर देरतक नहीं ठहरता था। जो ठहरा, वह तत्काल यमके भवनका अतिथि हुआ। अतः उस समय कृष्ण, अर्जुन और शिखण्डीके अतिरिक्त कोई भी उनकी ओर न बढ़ सका।

भीष्मके पास पहुँचतेही शिखण्डीने उनकी छातीमें दस अत्यन्त पैने भाले मारे। भीष्म केवल शिखण्डीकी तरफ क्रोध भरी दृष्टिसे देखकर रह गये। तव अर्जुनने फिर शिखण्डीसे कहा,—"वीरवर! जल्दी आगे बढ़ो और पितामहका बध करो। इससे बढ़कर तुम्हारे लिये और कोई यशःप्रद कार्य्य नहीं होगा। महाराजा युधिष्ठिर और हमारी ओरके सब वीरोंने तुम्हेंही इनके बध करनेमें समर्थ समझा है। अतएव तुम इन्हें शीघ्रही मार डालो।"

अर्जुनके इतना कहनेपर शिखण्डीने बड़ी शीघ्रतासे भीष्मपर बाण बरसाना आरम्भ कर दिया। भीष्म उसके बाणोंकी कुछ भी परवाह न कर, अर्जुनपरही बाण चलाते रहे। पाण्डवोंने भी ससैन्य भीष्मपर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया। इस चारों ओरकी बाण-वर्षासे पितामह भीष्म बेतरह ढँक गये। उस समय भीष्मके रक्षार्थ दुश्शासन सामने आकर अर्जुनसे लड़ने लगा। अर्जुन भी उससे महाघोर संग्राम करने लगे। इस सुयोगमें शिखण्डी अपने बज्र-तुल्य बाणोंसे बराबर भीष्मको बिद्ध करते रहे, किन्तु भीष्मको वे बाण अधिक कष्टप्रद नहीं हुए!

पाण्डवोंके बलको बढ़ा देख, दुर्योधनने अनेक राजाओंको अर्जुनसे युद्ध करने भेजा। वे लोग दुर्योधनके आज्ञानुसार अर्जुनपर टूट पड़े। अर्जुनने शत्रुओंका प्रबल आक्रमण देखकर दिव्यास्त्र-प्रयोग-द्वारा शीघ्रही उन्हें मार भगाया। इस प्रकार उन राजाओंको भगाकर अर्जुन दुश्शासनकी ओर अग्रसर हुए और उसे शीघ्रही बाणोंसे घायलकर, उन्होंने उसके घोड़ों और सारथिको मार डाला। साथही विविंशतिको बीस और कृप, शल्य, तथा विकर्णको अगणित बाणों द्वारा बिद्धकर उन्हें रथ और सारथि-हीन कर दिया। यह देख दुर्योधन, कृप, शल्य, विकर्ण और विविंशतिके

साथ, प्राण लेकर मैदानसे भाग गया! इसके बाद अर्जुनने अन्यान्य क्षत्रिय वीरोंको मारना आरम्भ कर दिया। देखते-देखते रण-भूमि लोथोंसे भर गयी और लोहूकी नदी बह निकली।

भीष्मसे इस प्रकार अपनी फ़ौजका संहार होते देखा न गया। वे दिव्यास्त्रको धनुषपर चढ़ा, अर्जुनकी ओर बढ़े। उन्हें आगे बढ़ते देख, शिखण्डी उनकी तरफ़ बढ़ा और ज़ोरोंसे बाण-वर्षा करने लगा। भीष्म शिखण्डीके बाणोंको तो चुपचाप सहते रहे, पर पाण्डवोंकी सेनाका वे बेतरह संहार करने लगे। यह देख कृष्णने अर्जुनसे कहा,—"धनञ्जय! देखो, भीष्म पाण्डवी सेनाका कैसा विनाश कर रहे हैं। अब तुम उन्हें मारकर सेनाकी रक्षा क्यों नहीं करते? अधिक देर न करो और जहाँ वे युद्धकर रहे हैं, वहीं पहुँचकर उनसे सावधानतापूर्वक लड़ो। तुम्हारे सिवा और किसीमें भी भीष्मके बाणोंको सहनेकी शक्ति नहीं है।"

कृष्णके मुखसे इस कातर वाणीको सुन, अर्जुनने भीष्मके ध्वज, रथ और घोड़ोंको मारे बाणोंके छा डाला। भीष्मने भी पर-सैन्य विनाशिनी विद्या द्वारा पाण्डवोंके अधिकांश सैनिकोंका नाश कर दिया। यह देखकर अर्जुन, शिखण्डीको आगेकर, अत्यन्त वेगसे भीष्मकी ओर बढ़े। अर्जुनके पीछे-पीछे अन्य पाण्डव-योद्धा भी भीष्मकी तरफ़ जाने लगे; किन्तु भीष्म बड़े निर्भीक भावसे उनके चलाये बाणोंको नष्ट करने लगे। तब अर्जुन उचित स्थानपर पहुँच, शिखण्डीकी आड़से, भीष्मको बड़े तीखे तीरोंसे बिद्ध करने लगे। शिखण्डी भी उनके इस कार्य्यमें प्रसंशनीय रूपसे सहायता कर रहा था। मौक़ा पातेही अर्जुनने भीष्मका धनुष काट दिया। पितामहका धनुष कटा देख, द्रोण, कृतवर्मा, जयद्रथ, भूरिश्रवा, शल, शल्य और भगदत्त—ये सातों महारथी दिव्यास्त्र फेंकते हुए अर्जुन-

पर झपटे और उन्हें अस्त्रोंकी बाढ़से ढँक दिया। फिर अर्जुनके निकट पहुँचकर वे—"पकड़ लो ! मारो ! जाने न पाये !" इत्यादि वाक्य कहने लगे। इस कोलाहलको सुनतेही सात्यकि, भीमसेन, धृष्टद्युम्न, विराट, द्रुपद, घटोत्कच और अभिमन्यु आदि क्रुद्ध हो, अपना-अपना धनुष उठाये अर्जुनकी रक्षाके लिये दौड़े। शिखण्डीने धनुष-हीन भीष्म और उनके सारथिको दस-दस बाणोंसे विद्ध कर, उनकी ध्वजाको भी काट डाला। यह देख, भीष्मने दूसरा धनुष उठाया ; किन्तु अर्जुनने उसे भी काट दिया। इस प्रकार जितनी बार भीष्मने नया धनुष उठाया, उतनी ही बार अर्जुनने उसे काट डाला। इस समय भीष्म बेतरह परेशान थे। अन्तमें उन्होंने नवीन धनुष न उठाकर ओठ चबाते हुए एक अत्यन्त मज़बूत शक्ति अर्जुनपर चलायी। अर्जुनने उस शक्तिको पाँच बाणोंसे पाँच टुकड़े कर निष्फल कर दिया। तत्पश्चात् भीष्मने प्राणोंका मोह त्याग-कर महावेगसे अर्जुनपरआक्रमण किया। यह देख, शिखण्डीने क्रुद्ध हो, भीष्मकी छातीमें नौ बाण मारे; परन्तु भीष्म अचल रहे। इसके बाद अर्जुनने हँसकर पचीस बाणोंसे भीष्मके सब मर्म्मस्थानोंको छेद डाला। भीष्म इन बाणोंसे अत्यन्त विद्ध होनेपर भी, घोरतर शर-वृष्टिकर पाण्डव-सैनिकोंका मंथन करने लगे। यह देख अर्जुनने, शिखण्डीको आगे कर, भीष्मका धनुष काट दिया और शीघ्रही नौ बाणोंसे उन्हें तथा दससे उनके सारथिको विद्ध कर दिया। भीष्म-ने दूसरा धनुष उठाया, किन्तु अर्जुनने उसके भी तीन टुकड़े कर डाले। इस तरह भीष्मने जितने धनुष उठाये, अर्जुनने उन सभीको नष्ट कर दिया! भीष्म कुछ शिथिलसे होकर दुश्शासनसे बातें करने लगे। इतने समयमें अर्जुनने उन्हें कितनेही बाणोंसे पूरी तरह बेध दिया। अब तो भीष्मने क्रुद्ध हो, अर्जुनको मारनेके लिये,

फिर एक शक्ति चलायी, किन्तु अर्जुनने मार्गमेंही तीन बाणोंसे उसके तीन टुकड़े कर डाले !

अर्जुनके, आजके इस भीषण विक्रमको देख, पितामह इस बातको अच्छी तरह समझ गये, कि अर्जुनके हाथोंसे मैं आज किसी प्रकार भी बचने न पाऊँगा। अतएव प्राणका मोह छोड़कर वे बड़े क्रोधके साथ स्वर्ण-विभूषित ढाल और तलवार लिये रथसे उतरेही थे, कि अर्जुनने ढाल-तलवारके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। यह देख, पाण्डव-योद्धा भीष्मके रथको चारों ओरसे घेरकर, उनपर विविध अस्त्र चलाने लगे। अर्जुन भी भीष्मके सहायकोंको मार-मारकर भगाने लगे। थोड़ी देर तक सहायक-हीन हो, भीष्म पितामह अकेलेही शत्रुओंका सामना करते रहे।

अन्तमें सन्ध्या समय भीष्म, अर्जुनके बाणोंसे व्याकुल हो, पृथ्वीपर गिर पड़े। उनके शरीरमें इतने बाण छिदे हुए थे, कि वे बाणोंपरही रह गये, पृथ्वीपर नहीं गिरने पाये ! भीष्मको गिरते देख, सारे कौरव-योद्धा हाहाकार करने लगे, पर पाण्डव-सेनामें हर्ष तथा वाद्यध्वनि होने लगी।

भीष्मकी शर-शय्या

युद्ध बन्द होगया। दोनों दलोंके प्रधान वीर समर-सज्जा त्यागकर भीष्मके दर्शनार्थ उनके पास गये। उस समय शत्रुता-परायण दो दलोंको एकत्र देख, मरण-शय्यापर पड़े हुए, भीष्मको बड़ा हर्ष हुआ। फिर उन्होंने समुपस्थित लोगोंसे कहा,—"मेरा मस्तक लटका पड़ता है, इससे मुझे अत्यन्त कष्ट हो रहा है, अतएव तुममेंसे कोई, मेरे सिरके नीचे किसी वस्तुके लगानेका प्रयत्न करो।"

यह सुनतेही कौरवोंने दौड़कर वहाँ बहुतसे मख़मली तकिये ला इकट्ठे किये। उन कोमल तकियोंको देख, भीष्मने कहा,—"कायरो! क्या वीरोंके लिये ये कोमल तकिये कभी सुख-प्रद हो सकते हैं? बेटा अर्जुन! ज़रा यहाँ तो आओ।"

यह सुन अर्जुनने गाण्डीव चढ़ा, आँखोंको आँसुओंसे भरकर कहा,—"पितामह! आपका दास अर्जुन आपकी सेवामें उपस्थित है। आज्ञा दीजिये, मुझे क्या करना होगा?"

भीष्मने कहा,—"बेटा! बिना तकियेके मेरा सिर नीचे लटक रहा है। इसलिये तुम मेरे सिरहाने, जैसा तकिया उपयुक्त समझो, लगा दो।"

अर्जुनने भीष्मका अभिप्राय समझकर गाण्डीवपर तीन बाण चढ़ाये और उन्हें चलाकर पितामहके सिरके लिये उपयुक्त तकिया बना दिया। भीष्मका सिर उन तीन तीरोंपर टिक गया। तब भीष्मने कहा,—"बेटा अर्जुन! तुमने मेरे इच्छानुसार ही मुझे तकिया दिया है; यदि तुम ऐसा न करते, तो मैं रुष्ट होकर तुम्हें श्राप देता; क्योंकि धर्म्मनिष्ठ क्षत्रियोंका धर्म्म ऐसीही शय्यापर सोना है। तुम यदि इस समय मुझे अन्य लोगोंकी भाँतिही मख़मली तकिया देते, तो मुझे बड़ा परिताप होता। अब मैं जान गया, कि इन सब वीरोंमें तुम्हीं एक सच्चे वीर हो।"

इसके बाद सब लोग उनकी तीन बार प्रदक्षिणा और प्रणाम-कर अपने-अपने डेरोंमें चले गये।

सवेरा होतेही सारे योद्धा भीष्मके पास आये। तब उन्होंने पानी पीनेकी इच्छा प्रकट की। दुर्योधनने बहुतही शीतल जल और कुछ खानेकी सामग्री शीघ्रही मँगवा ली। उसे देख, भीष्म-ने कहा,—"इस समय मैं मनुष्य-भोग्य वस्तुओंको कदापि ग्रहण

न करूँगा। मैं सूर्य्यके उत्तरायणकी प्रतीक्षामेंही प्राणधारण किये हुए हूँ। अच्छा, मैं इस समय अर्जुनको देखना चाहता हूँ।"

फौरनही अर्जुनने आगे बढ़, अपना नामोच्चारण पूर्वक, अभिवादन किया और हाथ जोड़कर विनीत भावसे कहा,—"प्रभो! आज्ञा कीजिये, सेवकको क्या करना होगा?"

भीष्मने आँखें खोलकर अर्जुनकी ओर देखते हुए कहा,—"अर्जुन! तुम्हारेही बाणोंसे मेरा पतन हुआ है और उन बाणोंकी पीड़ासे इस समय मेरा शरीर जला और मुख सूखा जाता है। अतएव तुम्हीं मुझे इस दशामें पानी पिलाकर परितृप्तकर सकते हो।"

अर्जुनने "जो आज्ञा" कहकर गाण्डीवपर रोदा चढ़ाया और रथपर बैठ, पितामहकी प्रदक्षिणा की। तत्पश्चात् उन्होंने पर्जन्यास्त्रको गाण्डीवपर चढ़ा, भीष्मके दक्षिण भागकी पृथ्वीको छेद डाला। साथही उसमेंसे दिव्य गन्ध और स्वादयुक्त, अमृत-तुल्य, शीतल जल-धारा निकलकर भीष्मकी तृष्णा शान्त करने लगी। अर्जुनका यह अद्भुत देव-कार्य्य देख कर सभी लोग दाँतों तले उँगली दबाने लगे। कौरव-योद्धा अर्जुनके इस विस्मय-कारक कार्य्यको देख काँप उठे। पाण्डवोंने प्रसन्न हो, दुन्दुभि बजानी शुरू की एवम् आकाशस्थित देवगण अर्जुनका जयजयकार करने लगे। उस समय भीष्मने उपस्थित लोगोंकी ओर देखकर कहा,—"अर्जुन! यह कार्य्य तुम्हारे लिये विचित्र नहीं है। देवताओंके स्वामी इन्द्र भी जिस कार्य्यको नहीं कर सकते, उसे तुम कृष्णकी सहायतासे तत्काल करनेमें समर्थ हो। बेटा! मैं आशीर्वाद करता हूँ, कि तुम इस युद्धमें विजयी होओ।"

इतना कहकर भीष्मने नेत्र बन्द कर लिये। तब सबलोग अपने-अपने डेरोंको लौट आये और युद्धकी तैयारी करने लगे।



भीष्म-शर-शय्या।

"शीतल जल-धारा निकलकर भीष्मकी तृष्णा शान्त करने लगी।" [पृष्ठ—२८७]

नवाँ अध्याय



महाभारतका मध्य

ग्यारहवें दिनका युद्ध

खूब तरहसे लैस हो, दोनों सेनाएँ युद्धके मैदानमें आ डटीं। आज कौरवोंने द्रोणाचार्य्यको अपना सेनापति बनाकर भीष्मजीके स्थानकी पूर्ति की। अपने-अपने सेनापतियोंकी आज्ञा प्राप्त करके दोनों दल एक दूसरेसे युद्ध करने लगे।

द्रोणाचार्य्य पाण्डव-सेनापर बुरी तरह टूट पड़े और युधिष्ठिर-से भिड़ गये। यह देखकर अर्जुन अपने बड़े भाईके रक्षार्थ वहाँ आ पहुँचे। गुरु-शिष्यका युद्ध होने लगा। अर्जुनने अपने हाथकी ऐसी फुरती दिखायी, कि द्रोणाचार्य्य युधिष्ठिरको युद्धमें पकड़ना चाहते थे, परन्तु अर्जुनके मारे उन्हें अपना पीछा छुड़ाना भी कठिन हो गया। अर्जुनने अपने दिव्य बाणोंसे द्रोणाचार्य्यके सहा-यकोंकी भी बुरी तरह ख़बर ली। उस समय अर्जुनके गाण्डीव निर्घोष तथा रथनेमिकी ध्वनिसे समस्त दिशा-विदिशाएँ निनादित

हो उठीं। कौरव-सैनिकोंका साहस टूट गया और वे अर्जुनके आतङ्कसे प्राण लेकर भागने लगे।

आज युद्ध कुछ देरसे आरम्भ हुआ था, अतएव कोई विशेष उल्लेखनीय घटना नहीं हुई और सन्ध्या होतेही युद्ध बन्द होगया।

बारहवें दिनका युद्ध

सबेरा होतेही गुप्तचरोंने आकर युधिष्ठिरको यह ख़बर दी, कि "द्रोणाचार्य्य आज जैसे बनेगा तैसे, आपको पकड़नेका उद्योग करेंगे। इस कामके लिये कौरवोंने यह चालाकी करनेका विचार किया है, कि त्रिगर्त्तराज महावीर अर्जुनको ललकारेंगे और लड़ते-लड़ते उन्हें समर-क्षेत्रसे दूर ले जायेंगे। तब अकेला पाकर द्रोणाचार्य्य आपको पकड़ लेंगे।"

अस्तु। यथासमय दोनों सेनाएँ युद्धके लिये तैयार होकर मैदानमें आ जमीं। जुझाऊ बाजे बजने लगे। युद्ध छिड़ गया। युद्ध छिड़तेही सबसे आगे आ, त्रिगर्त्तोंने अर्जुनको युद्धके लिये ललकारा। यह सुन अर्जुन युधिष्ठिरके पास जाकर कहने लगे,—"राजन्! आज आप मुझे त्रिगर्त्तोंसे युद्ध करनेकी आज्ञा दीजिये। उन लोगोंने मुझे मैदानमें ललकारा है। मुझे निश्चय है, कि आज उन लोगोंकी मृत्यु मेरेही हाथोंसे होगी।"

युधिष्ठिरने कहा,—"अर्जुन! द्रोणाचार्य्यकी, मुझे पकड़नेकी, इच्छाका समाचार तुमने दूतों द्वारा सुनाही होगा। तुम्हारे चले जानेसे उनका मनोरथ पूर्ण हो जाना कोई बड़ी बात नहीं है; क्योंकि सिवा तुम्हारे उनको रोकनेवाला और कोई मुझे दिखायी नहीं देता। ऐसी दशामें तुम वही कार्य्य करो, जिससे द्रोणाचार्य्यकी प्रतिज्ञा पूरी न हो सके।"

अर्जुनने कहा,—"महोदय ! युद्धके लिये ललकारनेवालेके साथ मैं अवश्यही युद्ध किया करता हूँ ; यह आपपर भलीभाँति प्रकटही है। इसलिये मैं तो अब यहाँ ठहर नहीं सकता ; परन्तु आप कुछ चिन्ता न करें। महापराक्रमी, पाञ्चाल-वीर सत्यजित् आपकी रक्षा करेंगे। जबतक ये जीवित रहेंगे, द्रोणाचार्य्य आपको पकड़नेमें कभी सफलता नहीं पा सकेंगे। साथही यह बात भी याद रखिये, कि यदि सत्यजित् युद्धमें मारे जायें, तो आप एक क्षण भी यहाँ न ठहरियेगा।"

इतना कहकर अर्जुन त्रिगर्त्तोंसे लड़नेके लिये चले गये। अर्जुनको त्रिगर्त्तोंके पास गया जानकर कौरवोंने महान् हर्ष प्रकट किया। अर्जुन भी भूखे व्याघ्रकी तरह त्रिगर्त्तोंपर झपटनेका मौक़ा ढूँढ़ने लगे। त्रिगर्तोंने आज चक्रव्यूह बनाकर अर्जुनसे लड़नेकी तय्यारी की थी। उसे देखकर अर्जुनने अपने मित्र श्रीकृष्णसे कहा:—

"मित्र ! ज़रा इन त्रिगर्त्तोंको तो देखिये। यद्यपि इनकी मृत्यु निकट है, तो भी मेरे पराजयके स्वप्न देखकर ये प्रसन्नता प्रकट कर रहे हैं ! शायद इन्होंने मुझे इसी इच्छासे ललकारा है, कि रणमें मरनेसे स्वर्गकी प्राप्ति होगी।"

इतना कहकर अर्जुनने अपना देवदत्त शङ्ख बड़े ज़ोरसे बजाया, जिसे सुन त्रिगर्त्तोंने भी प्रत्युत्तरमें शङ्ख-ध्वनि की। अब युद्ध शुरू हुआ। त्रिगर्त्त लोग, एक साथ मिलकर, अर्जुनपर बाण बरसाने लगे। अर्जुन भी उनके बाणोंको विफल करते हुए, घोर युद्धमें प्रवृत्त हो गये। उनमें त्रिगर्त्त-राजका एक भाई भी था। उसने इतना दुस्साहस किया, कि अर्जुनके किरीटको लक्ष्यकर एक अस्त्र चलाया। अर्जुनने तत्कालही अर्द्धचन्द्र बाण द्वारा उसका

सिर धड़से अलग कर दिया। यह देख, त्रिगर्त्तगण क्रोधपूर्वक अर्जुन-पर बाण छोड़ने लगे। अर्जुनके सर्प-समान भयङ्कर बाण भी क्रुद्ध भुजङ्गकी तरह शत्रुओंपर जाने लगे। अर्जुनके बाण उस समय सावन-भादोंकी झड़ीकी तरह बरस रहे थे; जिनसे त्रिगर्त्त मर-मरकर पृथ्वीपर गिरने लगे। अन्तमें व्यथित हो, वे अर्जुनके सामनेसे भाग जानेका विचार करही रहे थे, कि इसी बीच त्रिगर्त्तराजने उन्हें उत्तेजितकर भागनेसे रोक लिया। जो सैनिक भाग गये थे, वे भी लौट आये।

उन लोगोंको लौटते देखकर अर्जुनने कृष्णसे कहा,—"मित्र! मालूम होता है, कि शरीरमें प्राण रहते ये लोग युद्धका मैदान न छोड़ेंगे। इसलिये आज आप मेरे बाहुबल और गाण्डीव-बलको देखिये, मैं इन्हें कैसा छकाता हूँ। आप ज़रा सावधानीसे रथको चलाइये।"

यह सुनतेही कृष्णने बड़ी चतुराईसे रथ हाँकना शुरू किया, जिसे देख अर्जुनका उत्साह दूना हो गया। उन्होंने अनन्त बाण-वृष्टिकर सामना करनेवाले वीरोंको मार डाला और जो शेष बच रहे, उनकी बड़ीही दुर्दशा करनी आरम्भ कर दी।

यह देख त्रिगर्त्त योद्धालोग अब अपने जीवनकी आशा छोड़कर युद्ध करने लगे। उन्होंने एक साथ, एक स्थानपर इकट्ठे होकर, एकबारगी अर्जुनपर आक्रमण किया। उनके चलाये अगणित बाण एकही साथ अर्जुनपर बरसने लगे। त्रिगर्त्तोंकी उस भीषण बाण-वृष्टिसे अर्जुन और कृष्ण दोनोंही छिप गये। उन्हें बाणोंमें ढँका देखकर त्रिगर्त्तोंने समझ लिया, कि कृष्ण और अर्जुन दोनोंही मारे गये। तब वे अपना-अपना वस्त्र उठाकर हिलाने और आनन्द तथा हर्ष-सूचक शब्द करने लगे। कृष्णको

कई बाण लग जानेसे वे घायल हो गये और अर्जुनसे कहने लगे,—"अर्जुन ! तुम तो अच्छी तरहसे हो ? तुम्हारे कोई घाव तो नहीं हुआ ? रथमेंही हो या नीचे ? क्योंकि तुम मुझे दिखाई नहीं पड़ते ?"

अर्जुन, कृष्णके मुखसे यह उपालम्भ-स्वरूप वाक्य सुन, बहुतही लज्जित हुए। उन्होंने एक वायव्यास्त्र छोड़कर त्रिगर्त्तोंके चलाये सारे बाणोंको दूर कर दिया। उस बाण-जालसे निकलतेही अर्जुनने त्रिगर्त्तोंमें महान् हत्याकाण्ड उपस्थित कर दिया। जो भी सामने आता था, अर्जुन उसेही छिन्न-भिन्न कर, यमलोक भेज देते थे। इस तरह अधिकांश त्रिगर्त्त-सेना अर्जुन-द्वारा मारी गयी और बची-खुची अपने प्राण लेकर रण-भूमिसे भाग गयी।

त्रिगर्त्तोंको हार खाकर भागते देख, अर्जुनने श्रीकृष्णसे अपना रथ युधिष्ठिरके पास ले चलनेको कहा। कृष्णने उनके इच्छानुसारही बड़े सपाटेसे रथ चलाया। लोगोंने उन्हें मार्गमें रोक-रखनेकी बहुत चेष्टा की, किन्तु महावीर अर्जुन सामने आनेवाली बाधाओंको दूर करते हुए शीघ्रतासे आगे बढ़ने लगे। जिस प्रकार हाथी कमल-वनको कुचल डालता है, उसी तरह अर्जुनने भी आगे आनेवाले वीरोंका संहार कर डाला। शत्रुओंको इस प्रकार ठिकाने लगाकर अर्जुन युधिष्ठिरके समीप पहुँचनेहीवाले थे, कि फिर एक विघ्न आ उपस्थित हुआ। प्राग्ज्योतिषका राजा भगदत्त एक बड़े हाथीपर चढ़कर अर्जुनके सामने आया और उनपर दनादन बाण-वृष्टि करने लगा।

दोनोंमें देरतक ख़ूबही लोहा बरसा। भगदत्तने पहले अर्जुनके छोड़े हुए सब बाणोंको विफल कर दिया और इसके बाद रथ-

समेत श्रीकृष्ण और अर्जुनको कुचल डालनेके इरादेसे अपने भीषणकाय हाथीको आगे बढ़ाया। उस हाथीको कालान्तक यमकी तरह अपनी ओर आते देख, कृष्णने बड़ी फुर्तीसे अपना रथ दाहिनी तरफ़ हटाकर अर्जुनको बिल्कुल बचा लिया। यद्यपि अर्जुनके लिये यह अवसर, भगदत्त सहित हाथीको मार डालनेके लिये, बड़ाही अच्छा था, तथापि अधर्म्मके भयसे अर्जुनने वैसा नहीं किया। उधर उस महागजने पाण्डवोंकी सेनाका संहार करना प्रारम्भ कर दिया। यह देखकर अर्जुन बेतरह क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने हाथीपर पड़ी लोहेकी जालीको अपने पैने बाणोंसे काट डाला और भगदत्तके फेंके हुए समस्त अस्त्रोंको विफल कर, उसे बुरी तरह घायल कर दिया। तब भगदत्तने क्रुद्ध हो, तोमर नामक हथियार अर्जुनके सिरपर मारा, जिससे अर्जुनका किरीट टेढ़ा हो गया। किरीटको सीधाकर, अर्जुनने बड़े क्रोधमें आकर भगदत्तसे कहा,—"भगदत्त! मेरे किरीटको मस्तकसे हटानेवाला व्यक्ति बहुत देरतक जीवित नहीं रहता। इसलिये तुम सब लोगोंको एक बार दृष्टि उठाकर देख लो ; जिन्हें याद करना हो कर लो।"

अर्जुनके मुखसे यह बात सुनतेही भगदत्तने अत्यन्त क्रुद्ध हो, अर्जुनको एक अङ्कुश फेंककर मारा। जब श्रीकृष्णने देखा, कि अर्जुन इस अङ्कुशसे अपना बचाव नहीं कर सकते, तब उन्होंने शीघ्रही अर्जुनको अपनी आड़में कर लिया और अङ्कुश अपने ऊपर झेल लिया! अर्जुनको कृष्णकी यह बात बहुत बुरी लगी। उन्होंने दुःखी होकर कहा,—"महात्मन्! आप यह क्या करते हैं? आपने तो उस दिन युद्ध न करनेकी प्रतिज्ञा की थी ; फिर इस समय आपने उसके विरुद्ध कार्य्य क्यों किया?

यदि मैं निर्बल अथवा अपनी रक्षा करनेमें असमर्थ ठहरूँ, तो मेरी रक्षा करना आपका अवश्य कर्त्तव्य है। किन्तु मेरी भुजाएँ तो क्षणभरमें संसार-संहार करनेका पराक्रम रखती हैं। फिर आप वृथाही—मोहवश—क्यों प्रतिज्ञा-भ्रष्ट होते हैं?"

इतना कहकर अर्जुनने सैकड़ों शाणित बाणों द्वारा भगदत्तका मस्तक छेद डाला। भगदत्तने हाथीको अगाड़ी बढ़ानेकी अनेक तदबीरें कीं, परन्तु वह वहाँसे एक अङ्गुल भी नहीं हटा। अत्यन्त घायल होजानेके कारण भगदत्तका शरीर सुन्न होगया और वह औंधे मुँह हाथीसे नीचे भूमिपर गिरकर—वहीं ठण्डा होगया। अब अर्जुनका मार्ग सब ओरसे साफ़ होगया था; अतएव वे बड़े वेगसे महाराज युधिष्ठिरकी ओर चल पड़े।

यहाँ आकर उन्होंने देखा, कि आचार्य्य द्रोण जी-जानसे युधिष्ठिरको पकड़नेका उद्योग कर रहे हैं और धर्म्मराजके रक्षक सत्यजित् कभीके मारे जा चुके हैं। यह देख, अर्जुन बड़े वेगसे द्रोणाचार्य्यकी ओर बढ़े। अर्जुनको आया देख, कौरव-सेनाने युधिष्ठिरके पकड़नेकी आशा त्याग दी और अपनी रक्षाके लिये बड़ी सावधानीसे खड़ी हो गयी। अर्जुनको सामने देख, पाण्डव-वीरोंका उत्साह दूना हो गया। वे लोग बड़ी शीघ्रतासे आगे बढ़ने लगे। अर्जुनने आतेही घोर संग्राम शुरू कर दिया, जिससे व्यथित होकर कौरव-सेना एक क्षण भी उनके सामने नहीं ठहर सकी और प्राण लेकर भाग गयी। अब अकेले आचार्य्यपर चारों तरफ़से आक्रमण होने लगा। यह देख, आचार्य्यने सोचा, कि "अब यहाँसे जितनी जल्दी हो सके, भाग जानाही श्रेष्ठ है।" यह सोच उन्होंने फ़ौरन युद्ध बन्द करनेका बाजा बजा दिया।

तेरहवें दिनका युद्ध

अगले दिन प्रातःकाल फिर युद्ध आरम्भ हुआ। कलकी तरह आज भी अर्जुनको बचेबचाये त्रिगर्त्तोंने युद्धके लिये ललकारा। अर्जुन भी उनसे लड़नेके लिये चले गये। इधर द्रोणाचार्य्यने राजा युधिष्ठिरको पकड़नेके लिये चक्रव्यूहकी रचना करके कहा,—"आज जो पाण्डव-वीर इसमें फँस जायेगा, वह किसी तरह भी जीवित न बच सकेगा।" यही हुआ भी। इस व्यूहमें प्रवेश करनेकी हिकमत सिवा अर्जुन-पुत्र महावीर अभिमन्युके और किसीको मालूम न थी, अतः वह व्यूहमें घुस गया और सूर्य्यास्त होनेतक कौरव-सेनासे महालोमहर्षण युद्ध करता रहा। उस दिन उसने अनेक योद्धाओंको सदाके लिये इस दुनियासे उठा दिया। अन्तमें सात कौरव-महारथियोंने एक साथ मिलकर उस अजेय अभिमन्युको निरस्त्रकर, बधिककी तरह मारना आरम्भ कर दिया, जिससे वह वीर, वीर-गतिको प्राप्त हो गया।*

सूर्य्यास्त हो जानेपर युद्ध बन्द हो गया। कौरव लोग हर्ष मनाते हुए अपने डेरोंको लौट गये और पाण्डवगण पुत्र-शोकसे रोते हुए अपनी छावनीमें लौट आये।

---

* अर्जुन-तनय महावीर 'अभिमन्यु' ने महाभारतमें १३ दिनोंतक बड़ी वीरतासे युद्ध किया और भीष्म, कर्ण, द्रोण, दुर्योधन आदि बड़े-बड़े महारथियोंके छक्के छुड़ा दिये थे। यदि इस सोलह वर्षीय वीर-बालकके भीषण युद्धोंका पूरा हाल जानना हो, तो हमारे यहाँसे "वीर-बालक अभिमन्यु" नामक सचित्र ग्रन्थ मँगा देखिये। उसमें अभिमन्युके जन्मसे लेकर मरणतककी सारी घटनाएँ बड़ी खोजके साथ लिखी गयी हैं। रंग-बिरंगे अनेक चित्र भी दिये गये हैं। दाम सिर्फ १), रेशमी जिल्द १॥) रु०

अर्जुन अभीतक युद्धसे नहीं लौटे थे। इसलिये पाण्डवलोग बड़ी उदासीके साथ उनके आनेकी राह देख रहे थे। इसी समय श्रीकृष्ण सहित अर्जुन, त्रिगर्त्तोंको समूल विनष्टकर, अपनी छावनीकी ओर लौटे। रास्ते भर उन्हें अमङ्गलके चिह्न दिखायी दिये और शिविरमें पहुँचनेपर, सबको उदास देख, उन्हें बड़ा भय हुआ। वे कृष्णको सम्बोधन कर कहने लगे:—

"गोविन्द! आज हमारी सेनामें सन्नाटा क्यों छाया हुआ है? यहाँ न आज दुन्दुभि बज रही है, न कहीं शङ्ख ध्वनि सुनायी देती है और न आज मङ्गल-सूचक तुरहीका ही शब्द हो रहा है! यह क्या बात है? योद्धालोग भी हमें देखकर इधर-उधर मुँह छिपा रहे हैं। भगवन्! कहीं हमलोगोंपर कोई भयङ्कर आपत्ति तो नहीं आपड़ी है?"

इस प्रकार बातचीत करते हुए श्रीकृष्ण और अर्जुनने अपने डेरोंमें प्रवेश किया। वहाँ उन लोगोंने देखा, कि पाण्डवगण मुख-मलीन और सिर नीचा किये शोकमें विह्वल हुए बैठे हैं। यह देखकर अर्जुनका हृदय काँप उठा। वे शोकसे व्याकुल हो, सब वीरोंको तीक्ष्ण दृष्टिसे देखने लगे। जब उन्हें वहाँ अभिमन्यु नहीं दिखाई दिया, तब वे अधीर होकर कहने लगे:—

"वीरो! तुम सब लोगोंके मुख आज मलिन क्यों दिखाई पड़ रहे हैं? आज तुम हमसे नित्यकी भाँति प्रसन्नतासे क्यों नहीं मिलते? आज पुत्र अभिमन्यु कहाँ है? वह नित्य मुझसे और अपने मामा कृष्णसे दौड़कर आगे मिलने आया करता था। आज हम यद्यपि शत्रुओंका संहार करके देरसे लौटे हैं, तथापि वह हँसता हुआ सामने नहीं आया। हमने सुना था, कि द्रोणाचार्य्यने आज चक्रव्यूहकी रचना की थी; कहीं उसमें तो उसे

नहीं भेज दिया है ? क्योंकि उसे केवल चक्रव्यूहमें घुसनाही आता था। अभी मैंने उसे उसमेंसे निकलनेकी युक्ति नहीं सिखायी थी।”

अर्जुनकी इस बातका किसीने भी उत्तर नहीं दिया। सब-लोग लम्बी-लम्बी और दुःख-भरी साँसें छोड़ने लगे। यह देख-कर अर्जुनने जान लिया, कि मेरा महावीर और प्यारा पुत्र अभि-मन्यु अब इस संसारमें नहीं है। इससे उन्हें अत्यन्त दुःसह दुःख हुआ। वे बालकोंकी तरह पुक्का फाड़कर रो दिये ! कृष्ण अपना मस्तक पकड़ और एक ओर बैठकर अभिमन्युके लिये अश्रुपात करने लगे ! अर्जुनने रोते-रोते कहा:—

“प्यारे पुत्र ! आज तुम कहाँ छिपे बैठे हो ? बेटा ! आज तुम नित्यकी भाँति आकर अपने मामा कृष्ण और मुझसे क्यों नहीं मिलते ? हाय ! तेरे जिस कमलसे खिले मुखको देखकर मैं अत्यन्त प्रसन्न होता था, उसे अब कहाँ देखूँगा ? बेटा ! तेरे मरणको सुन-कर यह मेरा वज्रसा हृदय फट क्यों नहीं जाता ? वीर सौभद्र ! क्या आज तुम अपने शत्रुओंको इस प्रकार हर्ष मनाते देख-कर दुःखी नहीं होते ? अब मेरी समझमें आ गया, कि रास्तेमें मेरे प्रिय पुत्र अभिमन्युको मारकरही कौरवगण हर्ष-ध्वनि कर रहे थे। जिस समय कृष्ण और मैं यहाँ आ रहे थे, उस समय कृष्णने सुना था, कि युयुत्सु कौरवोंको यह कहकर धिक्कार रहे थे कि, “पापियो ! अर्जुनपर तो कुछ बस चलता नहीं, उस एक बालकके अन्यायपूर्वक प्राण लेकर तुम इस प्रकार हर्ष मना रहे हो ?”

अर्जुनको पुत्र-वियोगसे इस प्रकार व्यथित देखकर श्रीकृष्णने अपने आँसू पोंछते हुए कहा :—

“अर्जुन ! इतने विकल मत होओ। शूर-वीरोंके लिये तो यही गति सर्वोत्तम मानी गयी है। वे लोग सदैव रणमें अपने नाश-

वान् शरीरको त्यागकर, अमर-कीर्त्ति प्राप्तकर, अक्षय स्वर्ग-सुखकी इच्छा करते हैं। अभिमन्यु आज उसी इच्छित गतिको प्राप्त हुआ है। तुम्हारे भाई-बन्धु तुम्हें इस तरह शोकाकुल देख, अत्यन्त दुःखी और सन्तप्त हो रहे हैं। अतएव हे मित्र! अब शोकको विसर्जन करो।"

श्रीकृष्णके वचन सुनकर अर्जुनने बड़ी कठिनतासे धैर्य्य धरा। अनन्तर वे युधिष्ठिरकी ओर देखकर कहने लगे:—

"भाई! उस वीर अभिमन्युने किस तरह युद्ध किया? यदि आपको कुछ मालूम हो, तो कृपाकर कह सुनाइये। मुझे उसके वीरतापूर्ण कार्य्य सुनकर बहुत कुछ धैर्य होगा। हा! मैं तो यही समझता था, कि युद्धमें आप लोगोंके साथ रहते हुए इन्द्र भी उसका बाल बाँका नहीं कर सकेंगे। यदि मुझे यह मालूम होता, कि पाण्डव और पाञ्चाल मिलकर भी अभिमन्युकी रक्षा करनेमें असमर्थ हैं, तो मैं उसकी रक्षाके लिये स्वयं रणक्षेत्रमें उपस्थित रहता; किन्तु आप लोगोंको दोष देना वृथा है। दोष मेरे इस भाग्यका है, जो मेरे उस वीर पुत्रको सीधी आँख न देख सका।"

पुत्र-शोकसे दुःखी अर्जुनने इस प्रकार अश्रु-पूर्ण नेत्रोंसे अपने भाई-बन्धुओंके बलपर आक्षेप किया। फिर धनुष और तलवार उठाकर वे ऐसे साँस छोड़ने लगे, जैसे कोई विषधर सर्प फुँफकार मारता हो। उस समय युधिष्ठिर और कृष्णके अतिरिक्त किसीमें इतना साहस नहीं था, जो उनकी ओर देख सकता। अन्तमें धर्म्मराजने धीमे स्वरसे अभिमन्युका व्यूह-प्रवेश और उसका मरण-वृत्तान्त, जितना उन्हें मालूम था, विस्तारपूर्वक कृष्णार्जुनको कह सुनाया।

युधिष्ठिरकी बातें सुनकर अर्जुनका शोक और भी बढ़ गया।

वे उनके कह चुकनेपर "हा पुत्र !" कहकर पृथ्वीपर गिर पड़े और मूर्च्छित होगये ! इस प्रकार अर्जुनको मूर्च्छित होकर गिरते देख, सभी प्रधान-प्रधान योद्धा शोकाकुल चित्तसे, उनको चारों ओरसे घेरकर बैठ गये। किसीको कुछ नहीं सूझता था, कि क्या करें ? वे सब किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो, एक दूसरेका मुख देखने लगे। थोड़ी देर बाद जब अर्जुनकी मूर्च्छा भङ्ग हुई, तब वे काँपने लगे और उनके नेत्रोंसे अश्रुओंकी अविरल धारा बह चली।

कुछ देर बाद ही अर्जुनके शरीरमें क्रोधकी लहर उठने लगी। वे दांत पीसते और ओठ चबाते, अपने हाथोंको मसलते हुए उन्मत्तकी भाँति इधर-उधर देखने लगे। उस समय किसीकी भी हिम्मत नहीं हुई, जो अर्जुन के मुखकी ओर देख सके। कुछ देर बाद अर्जुनने युधिष्ठिरसे कहा:—

"महाराज ! मैं आपके चरणोंकी सौगन्ध खाकर प्रतिज्ञा करता हूँ, कि कल सन्ध्या होनेके पहले मैं जयद्रथको अवश्य मारूँगा। उस नीचने हमारे पहले उपकारोंको भूलकर दुर्योधनका साथ दिया है, इसका मज़ा मैं कल उसे चखाऊँगा। यदि वह दुर्योधनका साथ देकरही रह जाता, तो कोई हर्ज नहीं था, परन्तु आज वही मेरे पुत्र अभिमन्युकी मृत्युका मूल कारण हुआ है। अतएव कल सूर्य्यास्तके पूर्व मैं अवश्यही जयद्रथको इस लोकसे उठा दूँगा। नहीं तो मैं जीवितही अग्निमें जलकर इस शरीरका अन्त कर दूँगा। यदि मैं अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार ऐसा न करूँ, तो पुण्यशील मनुष्योंकी गति मुझे न मिले—मैं स्वर्ग न पाऊँ। यदि मैं कल सूर्य्यास्त होनेके पहले-पहले जयद्रथका वध न करूँ, तो मेरी वही गति हो, जो माता-पिताके मारनेवाले और विश्वासघातियोंकी होती है।"

इतना कहकर अर्जुनने अपने गाण्डीवको इतने ज़ोरसे पृथ्वी-पर पटका, कि उसके धमाकेसे पृथ्वीसे आकाशतक काँप उठा। श्रीकृष्णचन्द्रने भी अपने पांचजन्य नामक शंखको बड़े ज़ोरसे बजाकर अर्जुनकी उस भीषण प्रतिज्ञाका समर्थन किया। कृष्ण-को शंख बजाते देख, अर्जुनने भी अपना शंख बड़े ज़ोरसे फूँका। फिर क्या था? सारी सेनामें सैकड़ों, हज़ारों शंख बजने लगे। लोगोंने दुन्दुभि, सहनाई, भेरी आदि हर्ष-सूचक वाद्यों-द्वारा उस स्थानको गुँजा दिया। वीर लोग सिंहनाद करने लगे। तात्पर्य्य यह, कि उसी पाण्डव-सेनामें, जहाँ अभी एक क्षण पहले शोकका समुद्र उमड़ पड़ा था, अब हर्ष-सूचक ध्वनियोंसे तुमुल शब्द हो उठा।

उस घोर रात्रिके समय अचानक इन हर्ष-ध्वनियोंको सुन-कर कौरव-वीरोंका कलेजा थरथर काँप गया। इसी समय जासूसोंने आकर अर्जुनकी भीषण प्रतिज्ञाका वृत्तान्त दुर्योधनको कह सुनाया। दुर्योधन काँप गया। उसने जयद्रथको रातों-रात भगा देनेका विचार किया, परन्तु फिर कर्ण, द्रोण आदि वीरों-के धैर्य्य दिलानेपर उसने अपना विचार स्थगित कर दिया।

चौदहवें दिनका युद्ध

अर्जुन भी रातभर प्रतिज्ञापूर्ण करनेके विचारों और महादेव-जीके दिये अस्त्रोंके जुटानेमें निमग्न रहे। प्रातःकाल होतेही दोनों सेनाएँ रणांगणमें आकर खड़ी हो गयीं। आज अर्जुनने जयद्रथ-को मारनेकी प्रतिज्ञा की है; इसलिये कौरवोंकी ओरसे आचार्य्य-ने जयद्रथकी प्राण-रक्षाका बड़ा भारी प्रबन्ध किया है। उन्होंने अपनी सेनाका व्यूह छः कोसकी लम्बाईमें बनाया और सबके

अन्तमें जयद्रथको कृप, शल्य, कर्ण और अश्वत्थामाकी रक्षामें, एक लाख सेनाके बीचमें छिपा रखा। आचार्य्यका अनुमान था, कि छः कोसतक सेनाको पार करते हुए अर्जुनका, सूर्य्यास्तके पूर्व जयद्रथ तक पहुँचना असम्भव है; क्योंकि आज शकट-व्यूह, चक्र-व्यूह तथा सूची व्यूह इन तीन व्यूहोंकी रचना की गयी थी और अन्तके 'सूची व्यूह' में जयद्रथ रखा गया था।

अर्जुनने युधिष्ठिरकी रक्षाका पूरा प्रबन्ध करके श्री कृष्णसे कहा,—"गोविन्द! अब आप मेरे रथको वहाँ ले चलिये, जहाँ पापात्मा जयद्रथ है। पहले हमें व्यूहमें घुसनेके लिये इन हाथियोंकी सेनामें प्रवेश करना पड़ेगा।"

अर्जुनकी बात सुनतेही कृष्णने रथ हाँक दिया। रथका आगे बढ़ना था, कि विकट युद्ध छिड़ गया। कौरव अर्जुनको व्यूहमें घुसनेसे रोक रहे थे और अर्जुन व्यूहमें घुसतेही चले जा रहे थे! कौरव-वीर असंख्य बाणोंकी वृष्टि कर रहे थे, जिन्हें निवारणकर अर्जुन शत्रुओंको बाणोंसे घायल कर रहे थे। उस समय देखतेही-देखते अर्जुनने असंख्य रथी, हाथी और पैदल सेनाको भूमिपर सुला दिया। कौरव-सैनिकोंका साहस टूट गया और वे खेत छोड़कर भागने लगे।

सेनाको भागते देखकर दुश्शासनने बड़े वेगके साथ अर्जुनपर आक्रमण किया। अर्जुन भी जी-जान लड़ाकर घोरतर बाण-वर्षा करने लगे। इसी समय हाथियोंकी एक भयङ्कर सेनाने अर्जुनको आ घेरा, किन्तु अकेले अर्जुनने दुश्शासन सहित उन सबोंको छठीका दूध याद करा दिया। अर्जुन उन्मत्तोंकी तरह शत्रु-सैनिकोंके सिर काट-काटकर गेंदकी तरह पृथ्वीपर पटकने लगे। थोड़ीही देरमें घायल और मृत मनुष्यों तथा हाथी, घोड़ोंसे

रण-भूमि पट गयी। रक्तकी नदी बह-चली। उस समय रुद्र-मूर्त्ति अर्जुनका सामना करनेकी हिम्मत किसीकी न हुई। सब अपने अपने प्राण लेकर भागने लगे। दुश्शासन भी अर्जुनकी मार न सह सका और भागकर द्रोणाचार्य्यके व्यूहमें घुस गया।

यहाँसे अर्जुनका रथ आगे बढ़ा और शकटव्यूहके द्वारपर जा पहुँचा। इस व्यूहके द्वारपर स्वयम् द्रोणाचार्य्य अवस्थित थे। अर्जुनने आचार्य्यको प्रणामकर, बड़ीही नम्रतासे कहा,—"गुरो! आपके लिये तो कौरव और पाण्डव—दोनोंही समान हैं; अतएव मुझे कृपाकर, इस व्यूहमें घुस जानेकी आज्ञा दीजिये।"

द्रोणाचार्य्यने हँसकर कहा,—"अर्जुन! क्या तुम मुझे बिना जीते व्यूहमें प्रवेशकर, जयद्रथके पास पहुँचना चाहते हो? यह कदापि नहीं हो सकता। तुम्हें पहले मुझसे युद्ध करना होगा।"

इतना कहकर द्रोणाचार्य्यने अपने पैने बाणोंसे अर्जुनको ढँक दिया। अब तो विवश होकर अर्जुनको द्रोणसे लड़नाही पड़ा। युद्ध-विद्यामें गुरुजी जितने दक्ष थे, शिष्य भी उतनेही पटु थे। दोनोंकी चपलता, हस्तलाघवता और निशानेबाज़ी प्रशंसनीय थी। दोनोंनेही एक दूसरेके अस्त्रोंको विफलकर धनुषकी डोरी काटना आरम्भ कर दिया। कुछ समयतक दोनोंमें अभूतपूर्व युद्ध होता रहा, जिसे दोनोंही दलके सैनिक खड़े रहकर देखते रहे। अर्जुन द्रोणाचार्य्यसे युद्ध करते समय जयद्रथको मारनेकी प्रतिज्ञा तक भूल गये और उनसे अनेक प्रकारके युद्ध करके व्यर्थ समय गँवाने लगे। यह हाल देख, महात्मा कृष्णने सोचा, कि यदि इसी प्रकार जिससे-तिससे युद्ध करनेमें समय व्यतीत किया गया, तो सूर्य्यास्तके पहले जयद्रथका मरना असम्भव ही है। यह सोचकर उन्होंने अर्जुनसे कहाः—

"पार्थ! द्रोणाचार्य्यके साथ युद्ध करनेमें व्यर्थही समय जा रहा है। अतएव अब अधिक समय खोना उचित नहीं, नहीं तो प्रतिज्ञा पूर्ण न हो सकेगी! आचार्य्यके साथ युद्ध हो चुका, अब उन्हें छोड़कर व्यूहमें प्रवेश करना चाहिये।"

अर्जुनको कृष्णकी बात उचित मालूम हुई। कृष्णने भी बड़ी शीघ्रतासे घोड़ोंको चलाया और देखते-देखते रथको आचार्य्यकी प्रदक्षिणा करा, उनके पीछेसे, व्यूहमें घुसा ले गये। अब अर्जुनके रथको रोक लेना द्रोणाचार्य्यके लिये ज़रा टेढ़ी खीर थी। अतएव वे अर्जुनको बड़ी तेज़ीसे व्यूहमें जाते देख, पुकारकर कहने लगे,—"अर्जुन! तुम्हारा तो यह नियम था न, कि बिना शत्रुको हराये कभी नहीं हटते थे? अब बिना मुझे हराये कहाँ भागे जा रहे हो? आओ मुझसे जमकर युद्ध करो।"

परन्तु अर्जुनने आचार्य्यके तानेकी कुछ परवाह न की; क्योंकि उन्हें तो सूर्य्यास्तके पहले प्रतिज्ञा पूर्ण करना सूझ रहा था। उन्होंने भी पुकारकर आचार्य्यसे कहा,—"महाराज! आप मेरे गुरु हैं। मैं आपको अपना शत्रु नहीं मानता। अतएव मेरा वह नियम आपके लिये लागू नहीं हो सकता।"

इसके बाद अर्जुनने अपने दोनों, उत्तमौजा और युधामन्यु नामक, चक्र-रक्षकों सहित कौरव-सेना-सागरको पार करना आरम्भ कर दिया। सामनेसे कम्बोज और भोजराजने आकर अर्जुनको रोकनेकी चेष्टा की। दोनोंमें भीषण युद्ध छिड़ गया। अर्जुनके बाणोंसे उनकी सेनाके सैनिक, अश्व और हाथी कट-कट कर गिरने लगे। उस समय अर्जुनने बड़ीही शीघ्रताके साथ शत्रु-सेनासे युद्ध किया। जिसे देखनेवाले यह भी न देख सके, कि अर्जुन, तूणीरसे कब बाण निकाल, कब धनुषपर चढ़ाकर

कब खींचते और छोड़ते हैं! परन्तु एक और अनेकके बलमें बड़ा अन्तर होता है। टिड्डी-दलकी भाँति कौरव-सेना उनके आगे बढ़नेमें विघ्न डालने लगी। यह देख, अर्जुनको बढ़ावा देनेके लिये श्रीकृष्णने कहा:—

"वीभत्सु! आज इन लोगोंपर दया दिखानेका दिन नहीं है। इन्हें मारनेमें देरी मत करो। देखते नहीं, अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेका समय चला आ रहा है और तुम अभी यहीं उलझे हुए हो। यदि इसी प्रकार शिथिलतासे युद्ध करना था, तो प्रतिज्ञा ज़रा सोच-समझकर करनी चाहिये थी।"

यह सुनतेही अर्जुनने बड़े वेगसे बाण-वर्षा आरम्भ कर दी। उसे कृतवर्मा और सुदक्षिण न सह सके और दोनोंही अर्जुनके बाणोंकी मारसे मूर्च्छित हो गये। यह अच्छा मौका जानकर श्रीकृष्णने अपने रथको इतने सपाटेसे दौड़ाया, कि पलक झपकते-न-झपकते वह लोगोंकी निगाहसे दूर हो गया।

दुर्योधनको जब यह मालूम हुआ, कि अर्जुन द्रोणाचार्य्यके शकट-व्यूहको पारकर सूची-व्यूहके पास पहुँच गये हैं, तब वह रोता-खीझता द्रोणाचार्य्यके पास आकर कहने लगा,—"गुरुदेव! जयद्रथ आपकी शरण है, उसे शीघ्र बचाइये।"

द्रोणने कहा,—"मेरी प्रतिज्ञा युधिष्ठिरको पकड़नेकी है और वे मेरे सामने खड़े हैं। मैं यहाँसे हट नहीं सकता। ख़ैर, मैं तुम्हारे शरीरपर एक ऐसा कवच बाँधे देता हूँ, जिसे पहनकर तुम मज़ेमें अर्जुनसे युद्ध कर सकोगे। उस कवचको कोई तोड़ नहीं सकता, जिससे तुम्हें अस्त्र-शस्त्र घायल न कर सकेंगे।"

इतना कहकर द्रोणाचार्य्यने दुर्योधनके शरीरपर एक कवच बाँध दिया और उसे अर्जुनसे लड़नेके लिये, उस महा भयानक

युद्धमें, भेज दिया। दुर्योधन भी उस कवचके घमण्डमें एक हज़ार चतुरङ्गिणी सेना और बहुतसे महारथी योद्धा लेकर, मारू बाजे बजाता हुआ, बड़े आडम्बरके साथ, अर्जुनको रोक रखनेके लिये, उनकी ओर दौड़ चला।

तीसरे प्रहरतक अर्जुनने कौरव-सेनाके असंख्य वीरोंको इस संसारसे बिदा कर दिया। सर्वत्र हाहाकार सुनाई देने लगा। यद्यपि अर्जुन महान योद्धा थे, तथापि थे तो मनुष्यही। दिन-भर इस तरहकी भयङ्कर मार-काट और भाग-दौड़के कारण इस समय वे बहुत थक गये थे। उनके रथके घोड़े भी थककर चूर हो चुके थे। वे कौरव-सेनाको, जैसे-तैसे, छिन्न-भिन्न करते हुए, शकट-व्यूहके पार निकल आये थे। अभी सूची-व्यूह, जिसमें जयद्रथ था, बहुत दूर था। यह देख अर्जुनने श्रीकृष्णसे कहा,—"वासुदेव! घोड़े बहुतही घायल हो चुके हैं। अब इनमें आगे बढ़नेकी ज़रा भी शक्ति नहीं है। अतएव इन्हें थोड़ी देर विश्राम देनेका यही अच्छा अवसर है।"

कृष्णने भी इस बातको उचित समझकर, रथ ठहरा दिया। अर्जुन रथसे नीचे उतर पड़े और हाथमें गाण्डीव लेकर कृष्ण, रथ और घोड़ोंकी रक्षा करने लगे। श्रीकृष्ण घोड़ोंकी चिकित्सामें बड़े प्रवीण थे। उन्होंने रथसे घोड़े खोल दिये और उनके शरीर-में घुसे हुए बाणोंको निकालकर उनकी खूब मालिश की। इसके बाद दाना खिलाकर पानी भी पिला दिया। कुछ देरतक आराम भी कर लेनेपर घोड़ोंकी थकावट दूर हो गयी और ज़ख्मोंकी पीड़ा जाती रही। तब श्रीकृष्णने रथ जोत और अर्जुनको उसपर चढ़ाकर बड़े वेगसे उस ओर रथ चलाया, जहाँ खड़ा हुआ अभागा जयद्रथ, अपने एक-एक पलकी कुशल मना रहा था।

अर्जुनको सामनेसे, साक्षात् कालकी तरह, आते देख, कौरव-सैनिक हाहाकार करने लगे। तब उन्हें रोकनेके लिये, दल-बल सहित, दुर्योधन आगे बढ़ा। अर्जुनने, अत्यन्त क्रुद्ध हो, भीषण-वेगसे दुर्योधनपर आक्रमण किया। इतनेमें किसीने दुर्योधनके मारे जानेकी झूठी ख़बर उड़ा दी, जिससे कौरव-सेनामें महान कोलाहल मच गया। परन्तु जब लोगोंने देखा, कि अर्जुनके साथ दुर्योधन बड़ी वीरतासे लड़ रहे हैं, तब सबको धीरज हुआ। दुर्योधन, अर्जुनके महा प्रचण्ड दिव्यास्त्रोंको सहन करता हुआ, कृष्ण और अर्जुनको व्याकुल करने लगा। यह देख, कौरव-सेना मारे हर्षके सिंहनाद करने लगी। तब कृष्णने अर्जुनसे कहा,—

"धनञ्जय! बड़ेही आश्चर्य्यकी बात है, कि दुर्योधनपर तुम्हारा एक भी बाण काम नहीं करता! सभी बाण व्यर्थ हो रहे हैं। यह बात क्या है? आज क्या और दिनोंकी अपेक्षा गाण्डीव कुछ कमज़ोर हो गया है? या तुम्हारी मुट्ठी और भुजाओंमेंही कुछ निर्बलता आ गयी है?"

अर्जुन बोले,—"महाराज! आज दुर्योधन कहींसे अभेद्य कवच पहन आया है। जहाँतक मेरा अनुमान है, आचार्य्य द्रोणने इसके शरीरपर कवच बाँध दिया है। यही कारण है, कि वह शस्त्रास्त्र द्वारा नहीं छिद् सकता। इस कवचको पहननेकी युक्ति आचार्य्यने केवल मुझेही सिखायी थी। मनुष्यके चलाये हुए शस्त्रास्त्रोंसे तो क्या, यह इन्द्रके वज्रकी मारसे भी नहीं टूट सकता! किन्तु इस कवचको दुर्योधनने केवल स्त्रियोंकी तरह, शृङ्गार-रूपमें, अपने शरीरपर बँधाया है। ऐसे कवचधारीको युद्ध करनेका भी सर्वोत्तम ढँग आना चाहिये। मगर यह बात बेचारे दुर्योधनमें

कहाँ ? ख़ैर, अब आप ज़रा सावधान होकर मेरे हाथकी सफाई देखिये, मैं इसे कैसा छकाता हूँ।"

इतना कहकर अर्जुनने दुर्योधनके कवचको विदीर्ण करनेका विचार त्याग दिया और उसके धनुषको काट, घोड़ोंको मार, रथके टुकड़े-टुकड़ेकर डाले। दुर्योधनको इस प्रकार विपत्तिमें फँसा देख, कौरवोंकी असंख्य सेना वहाँ आपहुँची और अर्जुनको आगे बढ़नेसे रोकने लगी। अर्जुन भी उन्हें हटाने लगे।

ठीक इसी समय युधिष्ठिरके भेजे हुए भीमसेन और सात्यकि भी अर्जुनके सहायतार्थ, व्यूहको चीरते-फाड़ते, अर्जुनके पास आपहुँचे। परन्तु अर्जुन इससे प्रसन्न नहीं हुए। उन्होंने कृष्णसे कहा,—"भगवन्! हमने सात्यकिको युधिष्ठिरकी रक्षाका भार सौंपा था, फिर उन्हें यहाँ आनेकी क्या आवश्यकता थी? इसके अतिरिक्त वे थके हुए घोड़ों और चुके हुए अस्त्रोंसे, इस शत्रुओंसे पूर्ण स्थानमें, आकर करही क्या सकते हैं? अभीतक तो हमें केवल जयद्रथके बधकाही ध्यान था। परन्तु अब सात्यकिके आजानेसे उनकी रक्षाका ध्यान भी रखना पड़ेगा, जिससे हमारे समयका व्यर्थही अपव्यय होगा। मैं नहीं समझता, कि महाराजा युधिष्ठरकी बुद्धि क्यों मारी गयी है? उन्होंने महान पराक्रमी द्रोणकी कुछ भी परवाह न कर सात्यकिको भी यहाँ भेज दिया है! यदि भीमसेनको भेजा था, तो सात्यकिको न भेजते। आपही कहिये, इन दोनोंका यहाँ क्या काम है?"

अर्जुन इस प्रकार कहही रहे थे, कि सात्यकिको, आगे बढ़नेसे, रोकनेके लिये भूरिश्रवा उनके सामने आ पहुँचे। दोनोंमें युद्ध होने लगा। सात्यकि बहुत थके हुए थे, वे भूरिश्रवाके वेगको सह न सके। भूरिश्रवाने सात्यकिके सारथिको मार, रथको तोड़ डाला।



सात्यकिकी प्राण-रक्षा।

श्रीकृष्णने कहा,—"अर्जुन! तुम चुपचाप खड़े तमाशा देख रहे हो? सात्यकिको शीघ्र बचाओ।"

[पृष्ठ—२७३]

यह देख श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा,—"पार्थ! देखो, तुम्हारे प्यारे शिष्य सात्यकि विपद्ग्रस्त हैं। उन्हें इस समय सहायता देना तुम्हारा मुख्य कर्तव्य है। तुम्हारे हितके लियेही उनकी यह दुर्द्दशा हुई है, अतएव उनकी रक्षा भी तुम्हेंही करनी चाहिये।"

युधिष्ठिरको अकेले छोड़कर यहाँ चले आनेके कारण एक तो वैसेही अर्जुन सात्यकिपर रुष्ट थे, दूसरे भूरिश्रवाका युद्ध-कौशल देख, वे मन-ही-मन प्रसन्नता प्रकट कर रहे थे। इसलिये न तो उन्होंने कृष्णकी इस बातपरही ध्यान दिया और न सात्यकि-को भूरिश्रवाके पञ्जेसे छुड़ानेकाही कोई प्रयत्न किया।

इसी समय भूरिश्रवाने लात मारकर सात्यकिको पृथ्वीपर पटक दिया और उसके बाल पकड़कर सिर काटनेके लिये म्यान-से तलवार खींच ली। यह देख, कृष्णने फौरनही अर्जुनके रथको उनके पास लेजाकर खड़ा कर दिया और आग्रहपूर्वक अर्जुनसे कहा,—"अर्जुन! तुम बड़े निर्दयी हो। देखते नहीं, तुम्हारा प्यारा शिष्य सात्यकि भूरिश्रवाके हाथों मारा जा रहा है और तुम चुप-चाप खड़े तमाशा देख रहे हो! वह भी तुम्हारेही समान वीर है, उसको शीघ्र बचाओ।"

अर्जुनने यह सोचकर, कि सात्यकिकी प्राण-रक्षा करनीही होगी, श्रीकृष्णसे कहा,—"वासुदेव! मेरा चित्त अभीतक जय-द्रथके वधकी चिन्तामेंही लीन था, अतएव भूरिश्रवाके कार्य्यकी तरफ़ मैंने कुछ भी लक्ष्य नहीं किया। यद्यपि इन दोनों वीरोंके युद्धमें हस्तक्षेप करना अन्याय है, तथापि मैं सात्यकिकी प्राण-रक्षाके लिये अवश्य भूरिश्रवापर प्रहार करूँगा।"

ऐसा कहकर अर्जुनने एक अर्द्धचन्द्र बाण गाण्डीवपर चढ़ाया और भूरिश्रवाके हाथोंका लक्ष्य करके उसे छोड़ दिया। बाणके

लगतेही भूरिश्रवाके दोनों हाथ कटकर पृथ्वीपर गिर पड़े! हाथ कट जानेसे भूरिश्रवा किसी कामका न रहा और अर्जुनको बहुत तरहसे धिक्कारने लगे। अर्जुनने भी मुँह तोड़ जवाब देकर अपना रथ आगे बढ़ाया।

अर्जुनको आते देख स्वयम् जयद्रथ, कृप, कर्ण, अश्वत्थामा और दुर्योधन आदि अनेक वीर उनसे लड़नेके लिये तैयार होगये। दिनभर मार-काट करनेके बाद जयद्रथको देखकर अर्जुन बड़े प्रसन्न हुए और उसके पास पहुँचनेके लिये कौरवी सेनाका बुरी तरह संहार करने लगे। वीरोंकी भुजाएँ और मस्तक कट-कटकर पृथ्वीपर गिरने लगे। थोड़ी देरमेंही वहाँ ख़ूनके परनाले बह निकले। अपनी सेनाका इस प्रकार विनाश होता देख, दुर्योधन, कर्ण, शल्य, कृप और अश्वत्थामाने एक साथ मिलकर अर्जुनपर आक्रमण किया। साथही सूर्य्यको अस्ताचलके निकट जाते देख, अन्यान्य कौरव-वीरोंने भी जी लगाकर युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया। अब उन लोगोंको पूर्ण निश्चय हो गया, कि सूर्य्यास्ततक अर्जुनको रोक रखना कोई बड़ी बात नहीं है। बल्कि यों समझना चाहिये, कि जयद्रथ बच गये और अर्जुन जल मरे।

सबसे पहले अर्जुनने सामनेसे आते हुए कर्णकी ख़बर ली। उन्होंने फौरनही कर्णके घोड़ों और सारथिको मार डाला तथा उसके मर्म्मस्थानोंको बाणोंसे विद्ध कर दिया। कर्णकी सिट्टी बँध गयी। वह अपनी सारी चौकड़ी भूल गया। उसको इस समय सिवा अपनी प्राण-रक्षाके और कुछभी नहीं सूझता था। उसका सारा शरीर ख़ूनसे शराबोर हो रहा था। अन्तमें उसने अश्वत्थामाके रथपर जाकर अपनी प्राण-रक्षा की। तब अर्जुन शल्य और अश्वत्थामासे लड़ने लगे। कौरवोंने इस समय इतने

बाण बरसाये, कि वहाँ अँधेरा छा गया। अर्जुनने यह देख, एक दिव्यास्त्र छोड़कर, उन सब बाणोंको दूर कर दिया और वे अपनी प्रतिज्ञा यादकर जी-जानसे युद्ध करने लगे। फिर किसकी सामर्थ्य थी, जो अर्जुनका सामना करता। जो सामने आया, उसेही अर्जुनने यमपुरका अतिथि बनाया। बिजलीकी कड़कके समान उनके गाण्डीवकी ध्वनि सुनकर शत्रुओंका हृदय दहलने लगा! अर्जुनके भयसे सारी सेना प्राण लेकर भागने लगी। परन्तु प्रधान-प्रधान कौरव-वीर, अपने रथोंको भिड़ाकर, जयद्रथकी प्राण-रक्षाके लिये, प्राण-पनसे लड़ने लगे। इस तरह उनके प्रयत्नसे जयद्रथ, अछूता बच गया और अर्जुनको उसपर एक भी बाण चलानेका मौक़ा न मिला।

दैवयोगसे इसी समय, आकाशके रङ्गके समान एक बादलके टुकड़ेकी आड़में, सूर्य्य छिप गया। तब वे हर्ष-प्रदर्शनार्थ उछ-लने-कूदने और कोलाहल मचाने लगे। उनलोगोंने सोचा, कि सूर्य्यास्त हो चुका, अब विशेष सावधानीकी कोई आवश्यकता नहीं। अतएव वे लापरवाहीसे युद्ध करने लगे। उस समय जयद्रथके हर्षका पारावार न रहा। वह अपनी प्राण-रक्षा देख, मारे आनन्दके, फूला न समाया और अन्य वीरोंकी आड़से निकल-कर बेफिक्रीसे सूर्य्यास्तको देखने लगा।

वास्तवमें सूर्य्य छिपा है या नहीं, इसका पता सिवा श्री-कृष्णके और किसीको नहीं था। एकमात्र उन्हींको मालूम था, कि सूर्य्य अभी अस्त नहीं हुआ और बादलोंकी आड़में छिप गया है। अतएव उन्होंने अर्जुनको धीरेसे कहा:—

"अर्जुन! हताश मत हो। अभी सूर्य्य अस्त नहीं हुआ, बल्कि बादलकी ओटमें छिप गया है। तुम ख़ूब होशियारीके साथ एक

दिव्यास्त्र गाण्डीवपर चढ़ा रखो ; जब मैं रथको दौड़ाकर जयद्रथके पास पहुँचा दूँ, तब तुम बिना कुछ सोचे-विचारे उसका सिर धड़से अलग कर देना।"

इतना सुनतेही अर्जुनने, जयद्रथको बध करनेकी इच्छासे, एक अव्यर्थ दिव्यास्त्र निकालकर गाण्डीवपर चढ़ा लिया। कृष्णने अत्यन्त वेगपूर्वक रथ बढ़ाया। कौरवगण युद्धके लिये सावधान तो थे ही नहीं, सैनिकोंने भी मारे भयके रास्ता दे दिया। जिस प्रकार मृग-यूथमें व्याघ्र निर्भय होकर घुस जाता है, उसी तरह अर्जुन भी कौरव-दलको चीरते-फाड़ते जयद्रथके सामने जा पहुँचे और पहुँचतेही उन्होंने अपना भीषण दिव्यास्त्र छोड़ दिया। जिस तरह बाज-पक्षी किसी चिड़ियाको लेकर उड़ता है, वैसेही वह बाण भी जयद्रथके मस्तकको आकाशमें ले उड़ा और उसका धड़ कटे हुए कदली-वृक्षकी तरह धड़ामसे पृथ्वीपर गिर पड़ा!

इसी समय बादल हट गया और सूर्य्य-बिम्ब निकल आया! यह सबने देख लिया, कि अर्जुनने अपनी प्रतिज्ञा सूर्य्यास्त होनेके पहलेही पूर्ण कर दी। प्रतिज्ञापूर्ण होनेकी सूचना देनेके लिये अर्जुन तथा श्रीकृष्णने अपना-अपना शङ्ख ज़ोरसे बजाकर पृथ्वी और आकाशको प्रतिध्वनित कर दिया। इस शंख-ध्वनिको सुनतेही पाण्डव-सेनामें खुशीके बाजे बजने लगे।

इसी समय कृष्णने अर्जुनको अपनी छातीसे लगाकर कहा,—"प्यारे अर्जुन! आज ईश्वरको अनेकानेक धन्यवाद देना चाहिये, कि तुम अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण कर सके, नहीं तो बड़ी कठिन समस्या उपस्थित हो गयी थी। इन लोगोंने आज जैसा प्रबन्ध किया था, उसे देखकर तो यही विश्वास होता था, कि आज कौरवोंको जीतना हमारे लिये कठिनही नहीं वरन् असम्भव है। यदि आज

देवताओंके सेनापति स्वयम् स्वामिकार्तिकेय भी कौरवोंसे युद्ध करते, तो उन्हें भी व्याकुल हो जाना पड़ता। सिवा तुम्हारे ऐसे विकट कार्य्यको पूरा करने योग्य, मुझे तो इस भू-मण्डलपर और कोई भी दिखाई नहीं देता।"

अर्जुनने कहा,—"भगवन्! मुझे तो यह बड़ाई केवल आपकी-ही कृपासे प्राप्त हुई है। आज यदि आप न होते, तो मेरी प्रतिज्ञाका पूर्ण होना बिल्कुलही असम्भव था। जिसके सहायक आप हों, उसकी सदा-सर्वदा जीत है; इसमें आश्चर्य्यही क्या है?"

इसके बाद अर्जुन और श्रीकृष्ण, अपनी सेनामें लौटकर आनन्दपूर्वक, युधिष्ठिरसे मिले। युद्ध बन्द करनेकी इच्छा किसीकी नहीं हुई, अतएव रात हो जानेपर भी सेनाएँ लड़ती रहीं।

अँधेरा अधिक हो जानेपर पैदल सैनिकोंको प्रकाशके लिये जलती हुई मसालें दी गयीं। युद्ध-भूमि मसालोंकी रोशनीसे जगमगा उठी। दोनों ओरसे भयङ्कर मार-काट होने लगी। कौरव-वीर जयद्रथके मरणसे चिढ़े हुए तो थे ही, अतः वे सारा बल लगाकर लड़ने लगे। महारथी कर्ण, अत्यन्त क्रुद्ध हो, बड़ी निर्दयतासे पाण्डव-सेनाका संहार करने लगे। यह देखकर युधिष्ठिरने अर्जुनसे कहा,—"भाई! ज़रा देखो तो, कर्ण किस तरह हमारी सेनाका संहार कर रहा है। हमारे योद्धा उसके आक्रमणको न सह सकनेके कारण, हाहाकार मचा रहे हैं। अतएव इसका प्रतिकार शीघ्र होना चाहिये।

यह सुनकर अर्जुनने, युधिष्ठिरको कुछ भी उत्तर न देकर, श्रीकृष्णसे कहा,—"गोविन्द! मैं कर्णको युद्धस्थलमें इस प्रकार स्वतन्त्रता पूर्वक विचरण करते नहीं देख सकता। मेरा शरीर मारे

क्रोधके जला जा रहा है। अतः आप मेरा रथ इसी क्षण कर्णके सामने ले चलिये।"

श्रीकृष्णको मालूम था, कि इन्द्रकी दी हुई अमोघ शक्ति, अर्जुनका संहार करनेके लिये, उसने अपने पास बड़ी सावधानीसे रख छोड़ी है। यदि वह प्राणघातिनी शक्ति उसने अर्जुनपर छोड़ दी, तो फिर वह निष्फल नहीं हो सकती। इस बातको ध्यानमें रखकर श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा :—

"महावीर धनञ्जय! कई कारणोंसे इस समय तुम्हारा रथ कर्णके सामने लेजाना मैं उचित नहीं समझता। तुम्हारा भतीजा घटोत्कच कर्णको भलीभाँति छका सकता है, अतएव तुम उसीको कर्णके सामने भेजनेका प्रयत्न करो।"

श्रीकृष्णकी यह बात सुनतेही अर्जुनने घटोत्कचको बुलाकर कहा,—"वत्स घटोत्कच! आज तुम्हें, अपना पराक्रम दिखानेका, अच्छा अवसर प्राप्त हुआ है। अतः तुम शीघ्र अपनी सेना लेकर कर्णका सामना करो। जितना तुममें विक्रम है, उसे आज सबके सामने प्रदर्शित कर दिखाओ। आसुरी माया आदि कार्य्योंसे, जैसे बने वैसे, कर्णके दाँत खट्टे कर दो।"

घटोत्कचने कहा,—"आर्य्य! आज मैं आपके आज्ञानुसार कर्णके साथ ऐसा युद्ध करूँगा, कि वह भी मान जायेगा।"

इतना कहकर घटोत्कच कर्णपर टूट पड़ा और कर्णके साथ ऐसा भयानक युद्ध करने लगा, कि कर्णको उससे प्राणोंकी रक्षा करना कठिन हो गया। अन्तमें कर्णने घबराकर अपनी प्राण-रक्षाके लिये वही अमोघ शक्ति, जो उसने अर्जुनके लिये आज तक रख छोड़ी थी, घटोत्कचपर छोड़ दी। शक्तिके लगतेही घटोत्कच मर गया। घटोत्कचका मरना सुन, पाण्डवोंको बड़ा

शोक हुआ, किन्तु कृष्ण खुशी मनाने लगे! यह देख अर्जुनने श्रीकृष्णसे पूछा,—"जनार्दन! घटोत्कचकी मृत्युसे कहाँ तो हमलोग दुःखी हो रहे हैं और कहाँ आप ऐसे कुसमयमें हर्ष प्रकट कर रहे हैं! प्रभो! इसका कारण क्या है?"

श्रीकृष्णने कहा,—"अर्जुन! घटोत्कचके मरनेका मुझे भी दुःख है; परन्तु उससे कहीं अधिक हर्ष भी है। क्योंकि आज मेरे जीका सारा भय दूर हो गया। इसका मतलब यह है, कि कर्णने इन्द्रकी दी हुई अमोघ शक्तिको तुम्हारे लिये रख छोड़ा था और उसीके बलपर वह सदा तुमसे स्पर्द्धायमान रहता हुआ, युद्धकी इच्छा किया करता था। जब कभी तुम उससे युद्ध करते, तब मुझे सदा इस शक्तिका भय बना रहता था; क्योंकि इसके होते हुए स्वयम् यमराज भी उसका सामना नहीं कर सकते थे। इस शक्तिको उसने, अपने सहजातकवच और कुण्डल देकर, इन्द्रसे परिवर्त्तन-रूपमें, केवल तुम्हारे बधकी इच्छासे ही प्राप्त किया था, अभीतक उससे मुझे सदा तुम्हारे मारे जानेका भय बना रहता था; पर अब तुम उसे मराही समझो। अब उसे तुम निर्भयतापूर्वक, जब चाहोगे, बध कर सकोगे। यही कारण था, कि मैंने तुम्हारे कथनानुसार तुम्हें, कर्णके आगे युद्धार्थ न ले चलकर घटोत्कचको उससे भिड़ानेके लिये, भिजवाया था। वह शक्ति तुम्हारी प्राण-घातिनी थी। मुझे रात-दिन उसका ध्यान बना रहता था; अतएव चिन्ताके कारण नींद भी नहीं आती थी और रात-दिन उसे व्यर्थ करनेके उपाय सोचा करता था। मुझे आज तुम्हारी प्राण-रक्षा हुई समझकर और अपनी युक्तिमें सफलता प्राप्त हुई जानकर इस समय महान आनन्द हो रहा है। अब कहो तो मैं तुम्हारा रथ कर्णके सामने ले चलूँ! परन्तु

देखो, द्रोणाचार्य्यकी मारसे हमारी सेना हाहाकार करती हुई तितर-बितर हो रही है। इसलिये अब द्रोणाचार्य्यसेही युद्ध करना उचित है।

यह सुनतेही अर्जुनने, सेना सहित, द्रोणपर आक्रमण किया। दोनोंमें भयानक युद्ध होने लगा। योद्धा और वाहन, सभी दिन भरके थके हुए थे अतएव अँधाधुन्ध लड़ने लगे। उन्हें अपना और पराया भी नहीं सूझता था। यह देख, अर्जुनने ज़ोरसे पुकारकर कहा :—

"सैनिक वीरो! रात बहुत बीत गयी है। अँधेरा इतना हो गया है, कि कुछ भी दिखाई नहीं देता। इसके अतिरिक्त निद्रा और थकावटके कारण सब योद्धा लोग शिथिल हो रहे हैं। अतएव थोड़ी देरके लिये युद्ध बन्द करके सभी लोग यहीं, लड़ाईके मैदानमें, सो रहो।"

उधर द्रोणाचार्य्यने भी यही आज्ञा देदी। दोनों ओरकी सेनाएँ जहाँ-की-तहाँ सो रहीं। अर्जुन और श्रीकृष्ण भी रथमें बैठे-बैठेही निद्रा लेने लगे। पिछली रातको, जब चन्द्रोदय हुआ, तब सब लोग जाग उठे और युद्धके लिये तैयार हो गये।

पन्द्रहवें दिनका युद्ध

आज कौरवोंकी सेनाके दो भाग हुए। एक भाग द्रोणाचार्य्यकी सहायताके लिये और दूसरा भाग कर्ण तथा दुर्योधनकी सहायताके लिये, उनके पीछे-पीछे चलने लगा। युद्ध आरम्भ होनेपर युधिष्ठिरने कृष्णसे कहा :—

"केशव! अभिमन्युके बधमें बेचारे जयद्रथका कुछ विशेष अपराध न होनेपर भी उसे सूर्य्यास्त तक मार करही अर्जुनको चैन

पड़ी। परन्तु अब बिना किसी प्रधान वीरके मारे, काम नहीं चलेगा। अर्जुनको इस समय द्रोण या कर्ण; दोनोंमेंसे किसी एकको अवश्यही मारना चाहिये। इन दोनोंके मरतेंही दुर्योधन-का सारा जोश ठंडा पड़ जायेगा।"

इतना कहकर युधिष्ठिरने द्रोणाचार्य्यपर आक्रमण किया। अर्जुन, अन्य वीरों सहित, उनकी रक्षा करने लगे। परन्तु अर्जुन द्रोणाचार्य्यको बध करना महापाप समझते थे; क्योंकि द्रोण उन-के गुरु थे और एक दूसरेका आपसमें प्रेम भी विशेष था। आचार्य्य क्रुद्ध हो पाण्डव-सेनाका संहार करने लगे। यह देख पाण्डवोंने कहा,—"आज हमें आचार्य्यके हाथों मर मिटना होगा; क्योंकि अर्जुन, उन्हें गुरु समझकर, उनपर हाथ नहीं उठाते!"

यह सुन कृष्णने अर्जुनसे कहा,—"अर्जुन! इस समय द्रोणा-चार्य्यको मारना बहुतही आवश्यक है और बिना तुम्हारे किसीकी सामर्थ्य नहीं, जो उन्हें मार सके। यदि और किसीके हाथसे आचार्य्यका बध कराना हो, तो कुछ चाल खेलनी पड़ेगी। अगर इस समय आचार्य्यको, उनके पुत्र अश्वत्थामाके मरनेकी झूठी ख़बर कोई जा सुनाये, तो वे निस्सन्देह शोकाकुल हो शिथिलगात्र हो जायेंगे और सहजमेंही मारे जा सकेंगे। अतएव इस समय कोई उनके पास जाकर यह कहे, कि—'अश्वत्थामा मारे गये'।"

अर्जुनने श्रीकृष्णकी इस सलाहपर कानही नहीं दिया। वे सुनी-अनसुनी कर गये। किन्तु भीमसेनने कृष्णका कहा कर दिखाया। द्रोण अपने पुत्रके मरनेका समाचार सुनतेही अस्त्र-शस्त्र फेंक, आँखें मींचकर, चुपचाप बैठ गये। यह अच्छा मौका जानकर, आचार्य्यको बध करनेकी इच्छासे, धृष्टद्युम्न नङ्गी तल-

वार लिये द्रोणकी ओर दौड़ चले। यह देख, अर्जुन रथसे कूद पड़े और धृष्टद्युम्नको रोकनेकी इच्छासे, उसके पीछे दौड़ते हुए, कहने लगे,—"ख़बरदार, धृष्टद्युम्न ! आचार्य्यको हाथ मत लगाना। उनको मत मारना, सावधान !"

परन्तु हाय ! अर्जुन पहुँचने भी नहीं पाये थे, कि धृष्टद्युम्नने आचार्य्यका सिर काटकर पृथ्वीपर पटक दिया ! यह देख अर्जुनकी आँखोंमें आँसू भर आये। वे रोते-रोते श्रीकृष्णसे कहने लगे,— "मित्र ! आचार्य्य मुझपर अत्यन्त स्नेह रखते थे। उन्हें पूरा विश्वास था, कि मेरे रहते उनको कोई मार न सकेगा। परन्तु हाय ! कितने आश्चर्य्यकी बात है, कि मेरे बार-बार चिल्लाने और मना करनेपर भी इस नीच धृष्टद्युम्नने अपनी नीचता दिखाही दी। इस अन्याय-को मैं हरगिज़ नहीं सह सकता। यद्यपि आचार्य्य दुर्योधनके पक्षपर थे, तथापि वे हमलोगोंपर भी बड़ा स्नेह रखते थे। अपने जिन शिष्योंकी वीरता देख या सुनकर वे फूले नहीं समाते थे, आह ! कितनी लज्जाकी बात है, कि उन्हींने झूठ बोलकर धोकेसे आचार्य्यकी जान ले ली ! धिक्कार है ऐसी वीरतापर !"

इतना कहकर अर्जुन रोने लगे। उनकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी। वे कुछ और भी बोलना चाहते थे, किन्तु उनका कण्ठ भर आया। सात्यकिने अर्जुनको रोते देख, म्यानसे तलवार खींच ली और धृष्टद्युम्नको मारने दौड़े। यह गृह-कलह होते देख कृष्ण और भीमसेनने सात्यकिको पकड़ लिया। अन्तमें श्रीकृष्णने संसारकी अनित्यतापर एक बड़ी हृदय-ग्राहिणी वक्तृता दी, जिससे अर्जुन और सात्यकि शान्त हो गये।

कुछ देर बाद फिर युद्ध आरम्भ हुआ। दुर्योधनने कर्णको, द्रोणाचार्य्यके स्थानपर, सेनापति बनाकर युद्धका काम शुरू किया।

थोड़ी देरतक युद्ध होता रहा। अन्तमें सूर्य्यास्त हो जानेके कारण युद्ध बन्द कर दिया गया और दोनों पक्षके योद्धा अपने-अपने डेरोंमें जाकर आराम करने लगे।

सोलहवें दिनका युद्ध

सवेरा होतेही दोनों सेनाएँ फिर मैदानमें आ पहुँचीं। युद्धके बाजे बजने लगे। कर्णने अपनी सेनाका 'मकर-व्यूह' बनाया और अर्जुनने 'अर्द्धचन्द्र-व्यूह'की रचना की।

युद्ध छिड़नेके पहले युधिष्ठिरने अर्जुनको अपने पास बुलाकर कहा,—"भाई! आज कर्ण सेनापति बनकर युद्धमें सामने आ रहा है। अब तुम उसे शीघ्र मारकर बारह वर्षसे हमारी छातीमें चुभे हुए काँटेको निकाल फेंको। कौरवोंके प्रायः सभी बड़े-बड़े योद्धा मारे जा चुके हैं, अतः अब तुम्हारी जीत होनेमें ज़रा भी सन्देह नहीं रहा।"

इस प्रकार बातचीत होनेके बाद दोनों सेनाओंको युद्ध करनेकी आज्ञा दी गयी। युद्ध छिड़ गया। एक वीर दूसरे वीरपर प्रहार करने लगा। कर्ण बड़ी निर्दयतासे पाण्डव-सेनाको मारने लगे, जिससे पाण्डव-सैनिक व्याकुल होकर भागने लगे। अब-तक अर्जुन संसप्तकोंसे युद्ध कर रहे थे। पाण्डव-योद्धाओंको अनाथकी भाँति भागते देखकर श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा,—"पार्थ! तुम यह क्या खिलवाड़ कर रहे हो? इन संसप्तकोंको शीघ्रही मारकर, कर्णका विनाश करो। देखो, वह हमारी सेनाका किस बेदर्दीसे संहार कर रहा है।"

श्रीकृष्णकी बात सुनतेही अर्जुनको जोश आ गया। वे भयङ्कर बाण-वृष्टिकर संसप्तक लोगोंका नाश करने लगे। अर्जुनने

इस समय बाण चलानेमें इतनी सफाई दिखायी कि, श्रीकृष्ण भी आश्चर्य्यमें आ गये। देखते-ही-देखते अर्जुनने सारी संसप्तक-सेनाको पृथ्वीपर सुला दिया और कर्णको मारनेकी इच्छासे उनकी ओर रथ दौड़ाया।

अर्जुनको कर्णकी ओर जाते देख, अश्वत्थामा और दुर्योधन, उन्हें मार्गमें रोकनेकी चेष्टा करने लगे। किन्तु महावीर अर्जुनने, उन दोनोंकेही सारथि, घोड़ों और धनुषोंको नष्टकर डाला। वे बेचारे अर्जुनका मुँह देखते हुए अपनासा मुँह लेकर रह गये।

रास्ता साफ होजानेपर श्रीकृष्णने अर्जुनके रथको बड़े वेगसे दौड़ाकर वहाँ पहुंचाया, जहाँ कर्ण पाण्डव-सेनाका संहार कर रहे थे। पहुँचतेही अर्जुनने भीषण वेगसे बाण-वृष्टि आरम्भकर दी। अर्जुनके बाणोंका निवारणकर कर्णने अर्जुनपर असंख्य बाण फेंके, परन्तु अर्जुनने उन सबको व्यर्थकर दिया। इसके बाद अर्जुनने इतने बाण बरसाये, कि चारों ओर अर्जुनकेही बाण दिखाई देने लगे। क्रमशः अर्जुनके बाणोंने इतनी भयङ्करता धारण कर ली, कि वे मूसल, परिघ, शतघ्नी और वज्रकी तरह गिरने लगे; उनके लगनेसे कौरवोंकी सेनाका चूर्ण होने लगा। शत्रुकी आँखें मिच गयीं और वे त्राहि त्राहिकर इधर-उधर भागने लगे।

इसी समय एक साथ दस राजाओंने आकर अर्जुनको घेर लिया और उनपर चारों ओरसे अस्त्र-शस्त्रोंकी मार करने लगे। अर्जुन भी अपना बचाव करने लगे। राजा सत्यसेनने, मौक़ा पातेही, कृष्णके हाथमें एक तोमर बड़े ज़ोरसे खींच मारा, जिसके लगतेही कृष्णके हाथोंसे चाबुक और घोड़ोंकी रास छूट गयी। साथही ख़ून भी बहने लगा। अब तो अर्जुनके क्रोधका वारापार न रहा। उन्होंने दाँत पीसते हुए, एक अर्द्धचन्द्र बाण गाण्डीवपर

चढ़ाकर ऐसा मारा, कि सत्यसेनका सिर, धड़से अलग हो, पृथ्वी-पर लुढ़कने लगा। इसके बाद अर्जुनने उन बाकी बचे हुए राजाओंका भी काम तमाम कर दिया और उनकी सेनाको भी मिट्टीमें मिला दिया।

अर्जुन कुछ आगे बढ़े ही थे, कि कृपाचार्य्यसे उनकी टक्कर हो गयी। दोनों वीर आपसमें बाण-वृष्टिकर लड़ने लगे। अन्तमें अर्जुनने कृपाचार्य्यके सारथिको मारकर फौरनही उनका धनुष भी काट गिराया। सारथिके मरतेही रथके घोड़े कृपाचार्य्यको एक तरफ ले भागे।

इस समय सूर्यास्त हुए बहुत देर होचुकी थी और अँधेरा भी ख़ूब छा गया था; अतएव लड़ाई बन्दकर दी गयी और दोनों सेनाएँ अपने-अपने शिविरोंमें चली गयीं।

सत्रहवें दिनका युद्ध

प्रातःकाल होगया। दोनों पक्षके योद्धागण रण-भूमिमें आ पहुँचे। जुझाऊ बाजे बजने लगे।

आज कर्णने, अर्जुनको जीतनेकी इच्छासे, शल्यको अपना सारथि बना, द्वैरथ-युद्धके लिये रण-यात्रा की। कर्णको कौरवोंकी सेनाके आगे आता देख, युधिष्ठिरने कहा,—"धनञ्जय! देखो, आज कर्णने कैसे विकट व्यूहकी रचना की है? इस समय तुम कर्णके साथ युद्ध करो और हम कृपाचार्य्यके साथ युद्ध करते हैं।"

अर्जुनने "तथास्तु" कहकर कौरव-सेनापर बड़े वेगसे आक्रमण किया। अर्जुनको आगे बढ़ते देख, कलके बचे-बचाये संसप्तक लोग, जो भागकर बच गये थे, अर्जुनसे लड़नेके लिये आगे बढ़े। दोनोंमें युद्ध छिड़ गया। वे जी-जानसे अर्जुनपर बाण बरसाने लगे।

उनकी इस महान् बाण-वर्षासे अर्जुन बाणोंमें ढँक गये। किन्तु अर्जुनने दूसरेही क्षण उन्हें दूरकर, उन लोगोंको बुरी तरहसे मारना आरम्भ कर दिया। यह देख, अश्वत्थामा अर्जुनके आगे आये; परन्तु वे भी अधिक देर नहीं ठहर सके। तब अर्जुन वहाँ पहुँचे, जहाँ पहले युधिष्ठिर लड़ रहे थे। उन्हें वहाँ न देखकर वे भीमसेनसे पूछने लगे,—"आर्य्य! कुछ समय पहले यहाँ धर्म्मराज युद्ध कर रहे थे, वे अब कहाँ हैं?"

भीमसेनने कहा,—"कर्णके बाणोंसे अत्यन्त घायल होकर वे शिविरमें चले गये हैं। मैं यहाँ युद्ध करता हूँ, तुम जाकर उनकी तबीयतका समाचार ले आओ।"

भीमके मुखसे यह बात सुनतेही श्रीकृष्णने बड़े वेगसे शिविरकी ओर रथ चलाया। वहाँ पहुँचकर कृष्ण और अर्जुन, दोनों रथसे उतर पड़े। युधिष्ठिरको अच्छी दशामें देखकर उनकी चिन्ता जाती रही। श्रीकृष्ण और अर्जुनके चले आनेसे युधिष्ठिरने समझा, कि कर्ण मारा गया। अतः वे गद्गद् होकर कहने लगे:—

"वासुदेव! अर्जुन! कहो, कुशल तो है? तुमने बिना किसी आपत्तिका सामना किये और बिना कोई घाव लगे, कर्णका बध किया, इसलिये मैं तुम्हारा स्वागत करता हूँ। वह अभिमानी सदा हमलोगोंसे जला करता और दुर्योधनके हित साधनार्थ हमारी सेनाका संहार किया करता था। भीष्म और द्रोणके हाथोंसे हमारी जो दशा नहीं हुई, वह आज कर्णके हाथों हुई है। मैं बड़ी देरसे तुम्हारे आनेकी प्रतीक्षा कर रहा था। अब तुमलोग मुझे विस्तार पूर्वक सारा हाल कह सुनाओ, कि तुमने कर्णको कैसे मारा?"

यह सुन अर्जुनने विस्मित होकर कहा,—"महाराज! मैं

संसतकोंसे युद्ध करके ज्योंही आगे बढ़ा, कि अश्वत्थामाने, मुझे रोक रखनेके लिये, युद्ध आरम्भकर दिया। बहुत देरतक उनसे हमारा युद्ध होता रहा। उन्होंने विषैले बाणोंसे मुझे और महाशय श्रीकृष्णको अत्यन्त व्यथित कर डाला। अन्तमें जब मैंने उनके बाणोंको विफल कर, उनकी ख़बर लेनी आरम्भ की, तब वे अपने प्राण बचानेके लिये कर्णकी सेनामें जा घुसे। हम भी उनके पीछे दौड़े ; परन्तु मार्गमें भीमसेनसे, आपके घायल होकर शिविरमें लौट जानेका समाचार सुन, आपका कुशल-समाचार जाननेके लिये यहाँ दौड़े चले आये हैं। चलिये, अब देखिये, मैं कर्णको कैसे मारता हूँ!"

"कर्ण अभी नहीं मारा गया", यह सुनतेही युधिष्ठिर आपेसे बाहर होगये। वे कर्णके बाणोंसे घायल होकर उसपर बेतरह किटकिटा रहे थे। अतः क्रुद्ध हो, अर्जुनसे कहने लगे,—

"अर्जुन! तुमने बार-बार प्रतिज्ञा की है, कि—'मैं अकेलाही कर्णका बध करूँगा।' अब तुम्हारी वह प्रतिज्ञा कहाँ गयी? कर्णके भयसे भयातुर हो, मुझे देखनेके बहाने, भीमसेनको युद्धमें अकेला छोड़, तुम यहाँ चले आये हो! केवल तुम्हारेही बाहु-बलपर भरोसाकर, तेरह वर्षों से हम राज्य पानेकी आशा करते चले आये हैं। परन्तु आज तुमने हमारी उस आशा-लताको छिन्न भिन्न कर दिया। धिक्कार है, तुम्हारे इस गाण्डीव और अक्षय तुणीरोंको! कपिध्वज रथ तथा अग्निके दिये उस दिव्य रथको भी शतबार, धिक्कार है! यदि तुम उस महाबली कर्णके दमन करनेमें असमर्थ हो, तो व्यर्थके लिये इस गाण्डीवको क्यों उठाये फिरते हो? तुम्हें उचित है, कि तुम इसे किसी योग्य व्यक्तिके हवाले कर दो।"

अभी युधिष्ठिरकी बात समाप्त भी नहीं होने पायी थी, कि अर्जुनने अपनी कमरसे लटकती हुई तलवार म्यानसे बाहर खींच ली! यह देख, श्रीकृष्ण अत्यन्त घबराकर बोल उठे,—"अर्जुन! इस तरह तलवार निकालनेका क्या प्रयोजन है? यहाँ कोई तुम्हारा शत्रु तो है नहीं, फिर तुमने तलवार क्यों निकाली? धर्म्मराजको सकुशल देखकर तुम्हें हर्ष मनाना चाहिये, नकि तलवार निकालना! कहीं तुम पागल तो नहीं होगये हो? मैं तुम्हारी इस तलवार निकालनेकी आवश्यकताको ही अभी तक नहीं समझ सका? कहो, तुम किसपर चोट करना चाहते हो?"

इतना सुनतेही अर्जुनने एक बार क्रोध-भरी दृष्टिसे युधिष्ठिरकी ओर देखकर, भुजङ्गकी तरह फुँफकार मारते हुए, श्रीकृष्णसे कहा,—"वासुदेव! जो मेरा अपमान करे, वही मेरा शत्रु है। जो मुझे दूसरेके हाथ गाण्डीव सौंपनेका उपदेश दे, वही मेरा शत्रु है। इसीलिये मैंने तलवार निकाली है। इस विषयमें तुम्हें जो कहना हो, कह लो, फिर मैं अपने अपमानका बदला चुका लूँगा।"

यह सुन श्रीकृष्णने दुःखित होकर कहा,—"शोक! महाशोक! अर्जुन! तुम्हारी इस बुद्धिमत्ताको शतबार धिक्कार है! धनञ्जय! आज तुम्हारी बुद्धि कहाँ चली गयी है? एक मूर्ख, नादान और अधर्म्मी मनुष्यकी तरह, तुम्हें अपने बड़े भाईपर तलवार निकालते देख, मुझे बड़ाही आश्चर्य्य होता है। इस समय कर्णके बाणोंसे युधिष्ठिर अत्यन्त दुःखित हो रहे हैं, इसीलिये उन्होंने तुम्हें ऐसे कठोर शब्द कहे हैं। इससे उनका तात्पर्य्य यही है, कि तुम्हें क्रोध और उत्तेजना हो जाये, जिसमें कि तुम शीघ्रही कर्णका विनाश कर डालो।"

यह सुनकर अर्जुनने तलवार म्यानमें रखते हुए, युधिष्ठिरको

कठोर वाक्योंमें कहा,—"राजन्! आप युद्ध-भूमिसे एक कोस-की दूरीपर पड़े हैं, अतएव आपको युद्ध-भूमिका कुछ भी हाल मालूम नहीं है। फिर क्या समझकर आपने मेरे बल-पौरुषकी निन्दा की है? भीमसेन इस समय युद्ध कर रहे हैं, वे चाहें तो भलेही मेरी निन्दा कर सकते हैं। परन्तु आप यहाँ डेरेमें लेटे हुए मुझे कुछ भी नहीं कह सकते। इसके अतिरिक्त हमलोग सदा आपकी रक्षामें भिड़े रहते हैं—सदा आपको आफ़तोंसे बचाते रहनेका प्रयत्न करते हैं। स्त्री, पुत्र और प्राणोंतककी परवाह न कर, हम रात-दिन आपकी ताबेदारी बजाया करते हैं, तो भी आप हमें वाक्य-बाणोंसे विद्ध करनेमें नहीं चूकते! यदि वास्तव-में देखा जाये, तो इन सारे फसादोंकी जड़ आपही हैं। आपनेही जुआ खेलकर यह सर्वनाशका बीज बोया था, आज उसीका यह कड़वा फल चखनेमें आ रहा है। ख़ैर, जो कुछ हुआ सो ठीकही हुआ; परन्तु अब फिर कभी ऐसे कठोर वाक्योंसे मेरे चित्तको व्यथित न कीजियेगा।"

यह सुन युधिष्ठिर अत्यन्त दुःखित होकर कहने लगे,—"अर्जुन! सचमुच मैंने घोर अन्याय किया है। मैं बड़ाही कायर, अदूरदर्शी और कटुभाषी हूँ। वास्तवमें मेरेही कारण यह सब उपद्रव हुआ है। मेरेही कारण यह जन-संहार और हमारे कुलका नाश हुआ है। इसका अपराधी एकमात्र मैंही हूँ, इसलिये तुम शीघ्रही मेरे सिरको काट डालो।"

अपने बड़े भाईके मुखसे ऐसे नम्र वचन सुनकर अर्जुनका क्रोध काफ़ूर होगया। वे युधिष्ठिरके पैरोंपर गिर पड़े और रो-रो कर कहने लगे,—"आर्य्य! मैंने क्रोधके वशीभूत होकर आपको जो कुछ कड़े वचन कहे हैं, उनके लिये आप मुझे क्षमा कीजिये।"

इतना सुनतेही युधिष्ठिरने अर्जुनको उठाकर छातीसे लगा लिया और उनके आँसू पोंछकर धीरज बँधाया। दोनोंका मनो-मालिन्य दूर होगया और एक दूसरेसे पूर्ववत् स्नेह करने लगे। तब धर्म्मराजने कहा,—"अर्जुन! तुमने जो कुछ भी कहा, वह बुरा नहीं कहा। यद्यपि तुम्हारी बात कठोर थी, तथापि वह हितकर और सत्य थी। अतएव मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ। अब तुम शीघ्र जाकर कर्णका संहार करो।"

युधिष्ठिरकी आज्ञा पा, अर्जुनने उनके पैरोंको छूकर कहा,—

"राजेन्द्र! मैं आपके चरणोंको छूकर यह प्रतिज्ञा करता हूँ, कि आज मैं कर्णको मारे बिना युद्ध-भूमिसे कदापि न लौटूँगा।"

युधिष्ठिरने गद्गद् कण्ठसे कहा,—"अर्जुन! तुम्हारा कल्याण हो। अब तुम शीघ्र जाओ; क्योंकि वहाँ अकेले भीमसेनही लड़ रहे हैं। तुमने मेरे रोनेसे आजही कर्णको मारनेकी भयङ्कर प्रतिज्ञा कर ली है। जाओ, उसे प्रिय मित्र श्रीकृष्णकी सहायतासे पूर्ण करो।"

श्रीकृष्णने रथमें नये घोड़े जोत लिये और सब प्रकारके हथियारोंकी कमी पूरी कर ली। इसके बाद कृष्ण और अर्जुन, रथमें बैठकर, शंख बजाते हुए रण-भूमिकी ओर चल दिये।

रास्तेमें श्रीकृष्णने अर्जुनको, कर्णका बध करनेके लिये, बहुत उत्तेजना दी, जिससे अर्जुनका साहस दूना होगया। फिर कृष्णने, अर्जुनके अनेकानेक वीर-कार्य्योंकी याद दिलाकर, उन्हें कर्ण-बध-के लिये पूरी तरह तैयार कर दिया। अन्तमें अर्जुनने कहा,—"भगवन्! भाई भीमसेन अकेले युद्ध करते-करते बहुत थक गये होंगे, पहले उन्हें चलकर सहायता देना ठीक होगा।"

यह सुन श्रीकृष्णने रथको भीमसेनकी तरफ़ बढ़ाया। कौरव-सेनाने आगे बढ़कर उनके मार्गमें रुकावट डाली और अर्जुनको

चारों ओरसे घेरकर युद्ध करना आरम्भ कर दिया। अर्जुन भी क्रोधमें आकर उन्हें बुरी तरह मारने लगे। थोड़ीही देरमें अर्जुनने सैकड़ों रथी, सारथी, हाथी, पदाती और घोड़ोंको मार गिराया। कौरव-सेनाके पैर उखड़ गये और वह, हाय! हाय! करती हुई, जिधर-तिधर भागने लगी।

उधर कर्णने भी कौरव-सेनामें भयङ्कर मार-काट मचा दी थी, जिसे न सह सकनेके कारण पाण्डव-सैनिक प्राण-रक्षार्थ खेत छोड़ भाग रहे थे। यह देखकर अर्जुनने श्रीकृष्णसे कहा,—

"मधुसूदन! देखिये, कर्णके भयसे हमारी सेना किस तरह भागी जा रही है? वह देखिये, हमारे सहस्रों हाथी, घोड़े और पदातिक उसने मार गिराये हैं। यह जो टूटे रथोंका ढेर लगा है, यह उसीके तोड़े हुए हैं। अब आप कृपया शीघ्रही मेरे रथको उस पापात्माके पास ले चलिये; क्योंकि आज मैंने उसे मार डालनेकी घोर प्रतिज्ञा कर ली है।"

यह सुन श्रीकृष्णने कर्णकी ओर रथ चलाया। अर्जुनको कर्णसे युद्ध करनेके लिये सामनेसे आते देख, दुर्योधनने उनको रोकनेके लिये अश्वत्थामा, कृपाचार्य्य, कृतवर्मा आदि वीरोंको भेजते हुए कहा,—"वीरो! तुम सब एक साथ मिलकर, घोर युद्ध द्वारा, अर्जुनको ऐसा थका दो, जिससे कर्णको अर्जुनके, बध करनेमें अधिक कष्ट न हो।"

दुर्योधनके आज्ञानुसार उक्त वीरोंने अर्जुनपर भीषण वेगसे आक्रमण किया। परन्तु श्रीकृष्ण रथ चलानेमें बड़ेही निपुण थे। उन्होंने रथको बड़ी सावधानीसे घुमाकर उनके बाईं तरफ कर दिया और अर्जुनने शीघ्रही शत्रुओंके सैकड़ों योद्धा मार डाले! जिस तरह वनमें आग लगनेपर वन्य-पशु अपने प्राण बचानेके

लिये भागते हैं, उसी तरह कौरव-सनिक पार्थके बाणोंसे पीड़ित हो, इधर-उधर भागने लगे। अर्जुनके सामने एक भी योद्धा नहीं रहा। मैदान ख़ाली होगया। इसी समय भीमसेनने अर्जुनके पास आकर कहा,—"अर्जुन! कहो, धर्म्मराजकी तबीयत कैसी है?"

अर्जुनने युधिष्ठिरका कुशल-समाचार सुनाकर कहा,—"आर्य्य! अब आप मुझे कर्णसे युद्ध करनेकी आज्ञा दीजिये।"

यह सुन भीमसेन रथसे उतर पड़े। अर्जुन भी रथसे नीचे उतरे। फिर दोनों भाई, एक दूसरेके, गलेसे लिपट गये। अन्तमें भीमसेनने कहा,—

"धनञ्जय! अब तुम निर्भय होकर उस घमण्डी कर्णका बध करो। जाओ, उसे आज मारकर अपने हृदयकी धधकती हुई चिरकालीन क्रोधाग्निको शान्त करो। वह तुम्हारा कुछ भी नहीं कर सकेगा। अथवा तुम कहो तो मैं गदाके एक चपेटेमेंही उसके मस्तकको चूर्ण कर दूँ!"

अर्जुनने कहा,—"नहीं, आप कष्ट न कीजिये, मैं ही उसको मारूँगा।"

इसके बाद दोनों भाई अपने-अपने रथोंपर चढ़कर कौरव-सेनामें घुस गये। अर्जुन कर्णकी तरफ़ बढ़े। उस समय जो कोई अर्जुनके सामने आया, वह जीवित नहीं बचा। दुर्योधनके दस भाई एक साथ अर्जुनकी तरफ़ बढ़े। अर्जुनने बाणोंसे उनकी ख़ूब ख़बर ली। अन्तमें कृष्णने रथको घुमाकर उनके बाईं ओर कर दिया और अर्जुनने एक साथ दस बाण गाण्डीवपर चढ़ाकर, उन दसोंके सिर काट लिये! अपने भाइयों तथा सैनिकोंका इस प्रकार विनाश होता देख दुर्योधन, कई महारथियों और चतुरङ्गिणी सेना सहित, अर्जुनपर टूट पड़ा। उसने आतेही

अर्जुनको चारों ओरसे घेरकर लोहा बरसाना शुरू कर दिया। यद्यपि अर्जुन अकेलेही उन सबको निवारण कर रहे थे, तथापि कोई पृष्ठ-रक्षक न होनेसे कई शत्रु-योद्धा उनके रथपर चढ़ आते और उनका गाण्डीव पकड़ लेते थे। अर्जुन तलवार और कटार आदिसे उनपर प्रहारकर अपना पीछा छुड़ाते थे। उस समय अर्जुनका रथ, उस कौरव-सेना रूपी महासागरमें, क्षुद्र नौकाके समान जान पड़ता था। कभी-कभी कौरव-सैनिक श्रीकृष्णके हाथका चाबुक भी आकर पकड़ लेते थे। परन्तु अर्जुन फिर उन्हें वहाँसे जीवित न जाने देते थे। श्रीकृष्ण और अर्जुन, दोनोंही इस प्रबल आक्रमणके कारण घबरा गये। कौरवोंका उत्साह बढ़ताही जाता था, अतएव वे बराबर सिंहनाद करने लगे।

कौरवोंकी हर्षध्वनिको सुनकर भीमसेनका ध्यान उस ओर आकर्षित हुआ। उन्होंने दूरसेही अर्जुनकी दुर्दशा देख ली और भयङ्कर चीत्कार करते हुए रथसे नीचे कूद, क्षुधार्त्त व्याघ्रकी तरह कौरव-सेनापर टूट-पड़े। अब दो हो जानेसे पाण्डवोंका बल बढ़ गया। कौरवोंकी आधीसे अधिक सेना तो उसी समय मारी गयी और बची-बचायी अपने प्राण लेकर भाग निकली। कौरव-सेनाको भगाकर भीमसेन अपने रथपर बैठ गये और अर्जुनकी पृष्ठ-रक्षा करने लगे।

अपनी सेनाको भीमार्जुन द्वारा विनष्ट होते देख, कर्णको बड़ाही क्रोध चढ़ आया। वह धनुषसे टंकार-ध्वनि करता हुआ अर्जुनकी तरफ दौड़ा। अर्जुनने भी अपना रथ उसके सामने बढ़ाया। रास्तेमें दुश्शासन ललकारने लगा। भीमसेन उससे भिड़ गये और अर्जुन बाण-वृष्टि करते हुए कर्णके पास जा पहुँचे। पहुँचतेही अर्जुनने कर्णके पुत्र वृषसेनको मार डाला। बाकी तीन पुत्रोंको

सहदेव और सात्यकिने समाप्त कर दिया। यह देख कर्णके क्रोधका पारावार नहीं रहा।

कर्णको क्रुद्ध देखकर श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा,—"पार्थ! अब ज़रा सावधानीसे युद्ध करो। कर्ण धनुर्वेदका महान पण्डित है; साथही धर्म्मात्मा और जितेन्द्रिय भी है। संसारमें सिवा तुम्हारे, मैं इसके साथ कोई युद्ध करनेवाला नहीं देखता। तुम्हें इससे ज़रा सावधान रह कर युद्ध करना चाहिये।"

अर्जुन बोले,—"वासुदेव! जिसकी सहायताके लिये स्वयं आप उपस्थित हैं, उसे भय किस बातका है? अब आप रथको शीघ्रही कर्णके आगे कीजिये। आज या तो मैं कर्णको मारूँगा, या कर्ण मुझे मारेगा।"

उधरसे शल्यने और इधरसे श्रीकृष्णने, दोनों वीरोंका रथ आमने-सामने लाकर खड़ा कर दिया। अर्जुन और कर्णको युद्धके लिये तैयार देख, दोनों दलोंको अपनी-अपनी विजय में सन्देह होने लगा; क्योंकि वे दोनोंही विश्व-विख्यात वीर थे। अपने-अपने कार्य्योंमें दोनों एक दूसरेसे बढ़-चढ़ कर थे। दोनोंही दिव्यास्त्र-प्रयोगी और युद्ध-विद्याके पारदर्शी थे। इस बातका कोई भी निश्चय नहीं कर सकता था, कि विजय-माला किसके गले पड़ेगी।

इसी समय अर्जुनने श्रीकृष्णसे पूछा,—"गोविन्द! यदि कर्णने मुझे मार डाला, तो आप क्या करेंगे?"

श्रीकृष्णने हँसकर उत्तर दिया,—"अर्जुन! प्रथम तो ऐसा होनाही असम्भव है और यदि दैव दुर्गतिसे ऐसा हुआ भी, तो उस समय मैं सच्चे मित्रका कर्त्तव्य पालन करूँगा। मैं कर्ण और शल्यको मारकर कौरव-सेनाको मसल डालूँगा और इस पृथ्वीपरसे कौरवोंका नाम-निशान तक मिटा दूँगा।"

इन दोनों महावीरोंका युद्ध देखनेके लिये दोनों सेनाके वीर आ जमे। जुझाऊ बाजे ज़ोर-ज़ोरसे बजने लगे। दोनों वीर बड़े वेगसे बाण छोड़ने लगे। उनके छोड़े हुए बाण आस-पास खड़े दर्शकोंको भी बिद्ध करने लगे, अतएव वे लोग भागकर दूर जा खड़े हुए। दोनोंमें महाघोर युद्ध होने लगा। एक दूसरेको बध करनेके लिये अपना सारा बल-विक्रम और अस्त्र-कौशल लगाने लगे। दोनोंके धनुषोंकी टङ्कार-ध्वनि सुनते-सुनते लोगोंके कान बहरे हो गये। दोनोंमें द्वैरथ-युद्ध होने लगा। उनके बाणोंसे आकाश पूरित हो अपूर्व शोभा पाने लगा। इसी बीच अर्जुनके गाण्डीवकी डोरी अधिक खिँचनेके कारण भयानक शब्द करके तड़ाकसे टूट गयी। अर्जुनका गाण्डीव बेकार हो गया। जबतक अर्जुनने उसपर नयी डोरी चढ़ायी, तब तक तो कर्णने उनको मारे बाणोंके व्याकुल कर दिया! अर्जुनके पृष्ठ-रक्षकोंने उन बाणोंको निवारण करनेकी बहुत चेष्टा की, किन्तु सफलता नहीं हुई। कृष्ण और अर्जुन दोनोंही बहुत घायल हो गये। दोनोंके शरीरसे टपाटप लहू टपकने लगा। यह देख, कौरव-पक्षीय योद्धा तालियाँ बजा-बजा कर हर्ष-ध्वनि करने लगे।

अर्जुनके हृदयमें यह हर्ष-ध्वनि शूलके समान खटकी। उन्होंने शीघ्रही कर्णके सारे बाणोंको दूरकर, उसपर भीषण वेगसे बाण फेंकना आरम्भ कर दिया। दोनों वीर बड़ी शीघ्रतासे, पैतरे बदल-बदलकर, युद्ध करने लगे। दोनोंको पलक मारनेतककी भी फुरसत नहीं थी। दोनों ही, बिना विश्रामके, देरतक युद्ध करते रहे। दोनोंही लोहू-लुहान हो गये। दोनों एक दूसरेके वधके लिये व्यग्र दिखाई देने लगे। अन्तमें दोनों दिव्यास्त्र प्रयोगकर महायुद्धमें प्रवृत्त हुए। उस समय अर्जुनने आग्नेयास्त्रका प्रयोग

किया, जिससे वहाँ आग लग गयी और कपड़े-लत्ते, सभी, जलने लगे! तब कर्णने, उसको बुझानेके लिये, वरुणास्त्र चलाया। उसके चलतेही चारों ओर धुआँ छा गया और फिर वही धुआँ बादलके रूपमें होकर पानी बरसाने लगा! देखते-देखते आग्नेयास्त्रका ज़ोर कम हो चला। साथही अर्जुनने दूसरा अस्त्र छोड़ दिया। इसका नाम मरुतास्त्र था, जिससे बड़े ज़ोरकी आँधी चलने लगी! फ़ौरनही उसके निवारणार्थ कर्णने नागास्त्र छोड़ा, परन्तु अर्जुनने मयूरास्त्र चलाकर नागास्त्रको नष्टकर दिया।

इस प्रकार दोनों महावीर सिंह-समान क्रुद्ध हो, घोर युद्ध करने और अपनी-अपनी घात ढूँढ़ने लगे। इस समय कर्णका उत्साह कुछ विशेष बढ़ गया। उसने अर्जुनके बाणोंको निष्फल कर, उनको अपने बाणोंसे घायल कर दिया।

यह देख, दाँत पीसते हुए भीमसेनने, क्रुद्ध हो, अर्जुनसे कहा,—"अर्जुन! तुम्हारे हाथ-पाँव ढीले क्यों हो गये? देखते नहीं, कर्ण क्रमशः प्रबल होता जा रहा है? तुम शीघ्रही इसका काम तमाम क्यों नहीं करते? क्या तुम द्रौपदीके दुःखोंको भूल गये? क्या जङ्गल-जङ्गल ख़ाक छाननाही तुम्हें अच्छा मालूम होता है? यदि तुम इसे मारनेमें असमर्थ हो, तो हट जाओ, मैं एकही गदा-प्रहारसे इसका सिर फोड़ दूँगा।"

श्रीकृष्णने भी कहा,—"बेशक, आपका कहना ठीक है! अर्जुन! यह बात क्या है? तुम्हें यह शिथिलता क्यों आ गयी है। ज़रा आँखें खोलकर देखो तो, सर्वत्र कर्णकेही बाण नज़र आ रहे हैं। तुम्हें काहिल देखकर शत्रु गण बारम्बार सिंहनाद कर रहे हैं। पार्थ! तुम शीघ्रही कर्णको मार डालो। अब देर मत करो।"

कृष्ण तथा भीमसेनके वाक्योंसे अत्यन्त उत्तेजित हो, अर्जुनने

एक बड़ाही भयानक बाण निकाला और उसे गाण्डीवपर चढ़ा, कृष्णसे कहा,—"लीजिये, इस बाणसे अवश्यही कर्ण मर जायेगा। इससे बचना असम्भव है।"

अर्जुनने इतना कहकर बाण छोड़ दिया। परन्तु कर्णने उसे अनायासही काट गिराया। तब भीमसेनने झुँझलाकर कहा:—

"अर्जुन! यह कहो, कि तुम खिलवाड़ कर रहे हो या युद्ध? क्या युद्ध इसी तरह किया जाता है? जिस तरह तुमने इन्द्रके शत्रुओंका संहार किया था, उसी तरह इस नराधम कर्णका भी संहार क्यों नहीं कर डालते?"

भीमके वाक्योंसे अत्यन्त उत्तेजित हो, अर्जुन दिव्यास्त्र चलाने लगे; परन्तु कर्णने सबोंको निष्फल कर दिया। अन्तमें अर्जुनने एक ऐसा तीखा बाण मारा, कि कर्णका सारा शरीर थर्रा गया। इतनी फुरसत पातेही अर्जुनने कौरव-सेनाकी ख़बर ले डाली।

जब कर्णका चित्त ठिकाने हुआ, तब उसने बहुत दिनोंसे यत्न पूर्वक रखे और विषके बुझे उरुगास्त्रको अपने धनुषपर चढ़ाकर कहा,—"अर्जुन! अब तुम किसी तरह बच नहीं सकते।"

इतना कहकर कर्णने अपने उस चिरसंचित उत्तम बाणको, अर्जुनके मस्तकका लक्ष्य करके, छोड़ दिया। वह काल-दण्ड-समान कठोर बाण अर्जुनको छार-खार करनेके लिये बड़े वेगसे आने लगा। उसे विफल करनेके लिये अर्जुनने कई बाण मारे, परन्तु सफलता नहीं हुई। यह देखकर कृष्णने एक चाल खेली। उन्होंने अपने सधे हुए घोड़ोंकी रास खींचकर एक ऐसा संकेत किया, कि सब घोड़े एक साथही बैठ गये, जिससे रथका अगला हिस्सा नीचा हो गया और कर्णके छोड़े उस कराल बाण-का लक्ष्य भ्रष्ट हो गया। वह बाण अर्जुनके मस्तकपर न लग

कर, उनके किरीटमें जा लगा, जिससे वह इन्द्रका दिया हुआ अमूल्य किरीट चूर-चूर हो गया। अर्जुन इससे ज़रा भी नहीं घबराये। उन्होंने फौरन ही एक सफ़ेद वस्त्रसे अपने बाल बाँध लिये और सर्पकी तरह क्रुद्ध हो, दो तीक्ष्ण बाणोंको गाण्डीवपर चढ़ा कर कहा:—

"कर्ण! सावधान! मेरे किरीटको तोड़नेवाला बहुत देरतक जीवित नहीं रह सकता।"

इतना कहकर अर्जुनने बाण छोड़ दिये। कर्णके बहुत प्रयत्न करनेपर भी वे दोनों बाण उसकी छातीमें जा घुसे। बाणोंके लगतेही बड़े ज़ोरसे ख़ून बह निकला। कर्णके होश उड़ गये। उनकी मुट्ठी ढीली हो गयी, हाथसे धनुष छूट गया और वे मूर्च्छित हो रथमें गिर पड़े। उन्हें मूर्च्छित देखकर अर्जुनने उनपर प्रहार करना धर्म्म-विरुद्ध समझा, इसलिये उनपर चोट नहीं की। यह देख, श्रीकृष्णने व्याकुल होकर अर्जुनसे कहा,—

"अर्जुन! यह क्या बात है? तुम चुप क्यों हो गये? क्या कर्णको मार डाला? न जाने क्यों तुम्हारी बुद्धि इस प्रकार भ्रममें पड़ी हुई है? शत्रुके निर्बल होनेपर बुद्धिमान पुरुष उसे मारनेमें ज़रा भी आगा-पीछा नहीं करते। मैं नहीं समझता, कि तुम इस समय किस विचारमें पड़े हो? तुम आलसी पुरुषोंकी तरह हाथ-पर-हाथ रखकर क्यों बैठ गये? कर्णका बध क्यों नहीं करते? तुम इस समय धर्म्मका विचार छोड़ दो! धर्म्मकी बड़ीही सूक्ष्म गति है। उसे तुम नहीं जानते! अब तुम बिना विलम्ब कर्णको मार डालो। पीछे मैं तुम्हारी सभी शङ्काएँ निवारण कर दूँगा।"

यह सुनतेही अर्जुनने धनुषपर बाण चढ़ा लिया। इसी बीच

कर्णकी मूर्च्छा भङ्ग हो गयी थी, परन्तु वे मारे पीड़ाके व्याकुल हो रहे थे। इसीलिये वे परशुरामके दिये अस्त्र-शस्त्रोंको चलाना भूल गये और हाथ उठाकर आप-ही-आप कहने लगे,—"धर्म्मात्मा-लोगोंको मैंने यह कहते सुना है, कि धर्म्म धार्म्मिक पुरुषोंकी रक्षा करता है। मेरी धर्म्ममें दृढ़ निष्ठा है, फिर आज वह मुझे क्यों छोड़ता है?"

इतना कहकर कर्ण बहुतही उदास और व्याकुल हो गये। युद्धमें उनका जी नहीं लगता था। उनका प्रत्येक काम लापर-वाही और शिथिलतासे होने लगा। कर्णकी यह दशा देख कृष्णने कहा,—"अर्जुन! कर्णको मोह हो गया है। अब उसके होश ठिकाने नहीं हैं। वह घबरा गया है। उसका साहस और उत्साह बिल्कुल भङ्ग हो गया है। अतः उसे बध करनाही चाहिये!"

परन्तु अर्जुनकी बाण-वृष्टिसे कर्णका उत्साह फिर बढ़ गया—वे पूर्वापेक्षा अतिशय क्रुद्ध हो अर्जुनपर दिव्यास्त्र फेंकने लगे। दोनोंमें दिव्यास्त्रों द्वारा घोर युद्ध होने लगा। इसी समय अचानक कर्णके रथका दाहिना पहिया कीचड़में फँस गया और घोड़ोंके लाख ज़ोर लगानेपर भी टस-से-मस न हुआ। रथ वहीं खड़ा रह गया। अपनी यह दुर्दशा देख, कर्णके नेत्रोंमें जल उतर आया। अन्तमें उसने अर्जुनसे गिड़गिड़ाकर कहा:—

"कौन्तेय! दैवात् आज मेरे रथका पहिया कीचड़में फँस गया है; इसलिये जबतक मैं उसे बाहर न निकाल लूँ, तबतक तुम युद्ध बन्द रखो। अर्जुन! तुम्हारा जन्म सुप्रसिद्ध कुरु-कुलमें हुआ है। साथही तुम्हें क्षात्र-धर्म्मका भी पूरा ज्ञान है। इसलिये मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ, कि इस समय तुम मुझपर प्रहारकर अपनी कायरता न दिखाना।"

इसका उत्तर कृष्णने बड़ेही कटुवाक्यमें दिया, जिसे सुन कर्णने सिर नीचा कर लिया और वे अपने फँसे हुए रथपरसेही घोर बाण-वृष्टि करने लगे। सहसा एक बड़ाही भयङ्कर बाण अर्जुनकी छातीमें जा घुसा, जिसके लगतेही वे व्याकुल हो गये। उनका शरीर झन्ना गया और गाण्डीव हाथसे छूट गया। कुछ देरतक मूर्च्छित होकर वे अपने रथपर चुपचाप बैठ रहे।

अर्जुनको मूर्च्छित देख, कर्ण अपने रथसे नीचे उतर पड़े और रथका पहिया निकालनेकी चेष्टा करने लगे। परन्तु पहिया इतना फँसा हुआ था, कि हज़ार कोशिश करनेपर भी वह एक तिल भर नहीं सरका। इसी समय अर्जुनकी मूर्च्छा जाती रही। यह देख कृष्णने अर्जुनसे कहा,—"अर्जुन! तुम कर्णके रथपर चढ़नेके पहलेही उसका सिर काट लो।"

इतना सुनतेही अर्जुनने एक वज्र-समान भीषण बाण गाण्डीवपर चढ़ाया और उसे कानतक खींचकर कर्णपर छोड़ दिया। वह बाण बिजलीके समान कड़कड़ाता और प्रकाश फैलाता हुआ कर्णके कण्ठमें जा लगा। साथही कर्णका सिर कटकर पृथ्वीपर गिर पड़ा और उसमेंसे खूनका फौव्वारा छूटने लगा!

कर्णके मरतेही पाण्डव-सेनामें आनन्द और कौरव-सेनामें हाहाकार मच गया। सूर्य्यास्त हो चुका था, अतः युद्ध भी बन्द हो गया और दोनों ओरकी सेनाएँ अपने-अपने पड़ावोंमें चली गयीं।





कर्ण-वध।

श्रीकृष्णने गम्भीर स्वरमें कहा,—"अर्जुन! तुम कर्णके रथपर चढ़नेके पहलेही उसका सिर काट लो।" [पृष्ठ—२००]

दसवाँ अध्याय

महाभारतका अन्त

अठारहवें दिनका युद्ध

आज युद्धका अठारहवाँ दिन है। कर्णकी मृत्युसे दुखी दुर्योधनने आज शल्यको सेनापति बनाकर बड़े उत्साहसे युद्ध आरम्भ किया। मारू बाजे बजने लगे। दोनों ओरके योद्धा जान लड़ाकर घमासान युद्ध करने लगे। कुछ देर युद्ध होनेपर युधिष्ठिरने सेनापति शल्यको मार डाला। यह देख, कौरव-सेना भागने लगी। कुछ गिने-गिनाये योद्धा युद्ध-स्थलमें खड़े रहे; पर वे भी बुरी तरह घबराये हुए थे। यह देख, कृष्णने अर्जुनसे कहा,—

"अर्जुन! हमारे सब शत्रु मारे जा चुके। कुछ बची-खुची सेनाका व्यूह बनाकर, उसके बीच खड़ा हुआ दुर्योधन, इधर-उधर ताक रहा है; परन्तु अब उसे कोई भी अपना सहायक दिखाई नहीं देता। उसका मुख मलिन हो रहा है। कृपाचार्य्य, शकुनी, अश्वत्थामा, कृतवर्मा आदि कोई भी वीर इस समय उसके पास

नहीं है। अतः युद्ध समाप्त करनेका यह बड़ाही अच्छा मौक़ा है। इस मौक़ेको हाथसे गँवाना उचित नहीं। आज तुम दुष्ट दुर्योधनको मारकर इस झगड़ेका यहीं अन्त कर दो।"

अर्जुनने कहा,—"गोविन्द! समस्त धृतराष्ट्र-पुत्रोंका संहार भाई भीमसेननेही किया है—ख़ासकर दुर्योधनको वध करनेकी प्रतिज्ञा भी उन्हींकी है। अतएव यह पापी उन्हींके हाथों मारा जाना चाहिये। इस समय कौरवोंके लगभग ५०० घोड़े, २०० रथ, एक सौ हाथी और तीन हज़ार पैदल सैनिक बच रहे हैं। इसके सिवा अश्वत्थामा, कृपाचार्य्य, त्रिगर्त्तराज, उलूक, शकुनी और कृतवर्मा आदि वीर भी जीवित हैं। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, कि आजही इन सब शत्रुओंका काम तमाम करके महाराजा युधिष्ठिरको शत्रु-रहित कर दूँगा। अब आप रथ चलाइये, यदि दुर्योधन भाग न गया, तो वह अवश्यही मेरे हाथों मारा जायेगा।"

इतना सुनतेही श्रीकृष्णने बड़े वेगसे दुर्योधनकी ओर रथ दौड़ाया। वहाँ पहुँचकर कुछही देरमें अर्जुनने सारी कौरव-सेनाको काट गिराया। उस समय सिवा दुर्योधनके कोई भी योद्धा युद्ध-भूमिमें नहीं बचा। अपनी यह दुर्दशा देख दुर्योधन रथसे कूद पड़ा और गदा हाथमें लिये पूर्व दिशामें भाग कर, एक तालाबके अन्दर, अपने बनाये हुए जल-स्तंभमें, जा छिपा। लड़ाईका मैदान ख़ाली होगया।

दुर्योधनका वध

मैदान तो ख़ाली हो गया; पर वह जड़ अभीतक नहीं उखड़ी, जिसने भारतके क्षत्रियोंका इस तरह संहार कराया। अब चारों ओर इसकी खोज होने लगी, कि इस सत्यानाशी युद्धका बीज

दुर्योधन कहाँ है ? धीवरोंने आकर उन्हें ख़बर दी, कि रण-भूमि-से बहुत दूर एक सरोवरमें दुर्योधन साँस रोके छिपा बैठा है और अश्वत्थामा, कृप तथा कृतवर्म्माके साथ उसकी यह बातचीत हुई है, कि कल हम सब मिलकर फिर पाण्डवोंसे लड़ेंगे। पाण्डव तुरन्त उस सरोवरके पास जा पहुँचे और दुर्योधनको ललकारकर उसे बड़ी कठोर बातें सुनाने लगे। अब तो दुर्योधनसे न रहा गया और वह सरोवरके बाहर निकल आया। उस समय उसकी आँखें क्रोधसे लाल हो रही थीं। हाथकी गदा फड़क रही थी।

उसने कहा,—"मैं युद्ध करनेको तैयार हूँ ; पर मैं अकेला हूं और तुम अनेक हो। मैं पदचारी हूँ और तुम लोग रथारूढ़ हो। यदि तुम मुझसे धर्म्म-युद्ध करो, तो मैं सबसे अलग-अलग गदा-युद्ध करनेको तैयार हूँ।"

युधिष्ठिरने उत्तर दिया,—"कोई हर्ज नहीं। तुम हममेंसे चाहे जिसके साथ युद्ध करो। यही नहीं, यदि तुम हममेंसे किसीके साथ भी युद्ध करके जीत जाओगे, तो मैं वचन देता हूँ, कि तुम्हीं राज्यके मालिक बनोगे।"

युधिष्ठिरका यह विजयोन्माद था या क्या था ? मालूम नहीं ; पर यह बात सुनकर श्रीकृष्ण बड़ेही हैरान हुए और उन्होंने क्रुद्ध होकर युधिष्ठिरको बहुत धिक्कारा। यह देख दुर्योधनने बड़े गर्वसे कहा,—"तुम घबराते क्यों हो ? मैं और किसीसे नहीं, भीमसेही युद्ध करूँगा।"

"क्या परवाह है। मेरी गदा आज दुर्योधनके प्राण-हरण किये बिना नहीं रहती।" यह कह, भीमने दुर्योधनकी ओर पैर बढ़ाया।

इसी अवसरपर वहाँ श्रीकृष्णके बड़े भाई बलराम आ उपस्थित हुए, जो सरस्वतीकी यात्रा करके लौट रहे थे। भीम और दुर्यो-

धन—दोनोंने गदा-संचालनकी विद्या बलरामसेही सीखी थी। दोनोंने अपने गुरुके चरणोंपर मस्तक रखा और आज्ञा पाकर पैतरेके साथ खड़े होगये। इसके बाद पैतरा बदलते और मण्डलाकार घूमते हुए दोनों एक दूसरेपर गदा-प्रहार करने लगे। दोनोंही हट्टे-कट्टे और बड़ेही बलिष्ठ थे। दोनोंकी आँखोंसे आगकी चिनगारियाँ निकल रही थीं और दोनोंही गदा-युद्धके दाँव-पेंचोंसे पूरी तरह जानकार थे। दुर्योधनमें यह विशेषता थी, कि उसका शरीर उतना भारी नहीं था और चपलता उसमें अत्यन्त अधिक थी। भीमका शरीर पहाड़ जैसा भारी था ; इसीलिये उसमें चपलता कम थी। तथापि यह कोई नहीं कह सकता था, कि इस युद्धमें कौन हारेगा और कौन जीतेगा ? अर्जुनको भी बड़ा सन्देह हुआ और उन्होंने इस विषयमें श्रीकृष्णसे कई प्रश्न किये।

श्रीकृष्णने कहा,—"भीम बलवान् है, इसमें तो कोई सन्देह नहीं ; पर दुर्योधनने व्यायाम अधिक किया है। लोहेका भीम बनवाकर वह वर्षों तक लगातार उसपर गदा-युद्धकी आज़माइश करता रहा है। इसलिये धर्म्म-युद्धमें दुर्योधनकी जीत हो सकती है ; पर इसका बड़ाही बुरा परिणाम होगा। अतएव यहाँ छलसे काम लेना होगा। यदि भीम, दुर्योधनकी जँघापर प्रहार करें, तो दुर्योधन फिर न उठ सकेगा। साथही भीमकी प्रतिज्ञा भी तो दुर्योधनकी जंघापरही प्रहार करनेकी है ?"

दुर्योधन और भीम पैतरे बदलते हुए लड़ही रहे थे कि, मौक़ा पाकर अर्जुनने भीमसे जङ्घाका इशारा किया। इसी बीच दुर्योधनने भीमके मस्तकपर गदा-प्रहार किया, जिससे भीमके प्राण व्याकुल हो गये। यह आघात सहकर, भीमने बड़े ज़ोरसे झपट-

कर दुर्योधनकी छातीपर वार करना चाहा, पर वह वार दुर्योधन-ने बचा लिया। उसी क्षण भीमने पूरे वेगके साथ दुर्योधनकी जङ्घा पर गदा मारी, जिससे उसकी जाँघकी हड्डियाँ चूर-चूर हो गयीं और वह मूर्च्छित होकर धड़ामसे ज़मीनपर गिर पड़ा। उसी हालतमें भीमने उसके मस्तकपर लात मारकर, उसके मुकुटको पैरोंतले कुचल डाला।

यह देखकर बलरामके क्रोधका पारावार न रहा। वे अपना हल सम्हालकर उठे और भीमको मारने दौड़े।

उन्होंने कहा,—"अरे दुष्ट! तू अधर्म्मसे युद्ध करके फिर राजा-का ऐसा अपमान करता है? ठहर, मैं अभी तेरी ख़बर लेता हूँ।"

परन्तु श्रीकृष्णने बीचमें पड़, बलरामके हाथोंसे भीमको बचा लिया। उन्होंने कहा,—"भाई साहब! पाण्डवोंको आप क्षमा करें। दुर्योधनने शुरूसेही इनके साथ बड़ी नीचता की है। इसने कपट-द्यूतसे इनका राज्य छीना था। इसने द्रौपदीको सभामें लाकर जब उसे अपनी जङ्घा दिखाई थी, तभी भीमने यह प्रतीज्ञा की थी कि, तेरी जङ्घापर द्रौपदी नहीं, मेरी गदा बैठेगी। वही प्रतिज्ञा आज उसने पूरी की है। प्रतिज्ञा पूरी करना भी तो क्षत्रियका धर्म्म है? इसलिये सब बातोंका विचार करनेसे आप यह नहीं कह सकते कि, दुर्योधनकी जङ्घापर गदा-प्रहार करनेमें भीमने कोई अन्याय किया है।"

यह सुन, बलरामका क्रोध शान्त हो गया। फिर दुर्योधनकी लाश वहीं छोड़कर बलराम अपने रथपर सवार हो, द्वारकाकी ओर चले गये और पाण्डव तथा श्रीकृष्ण कौरवोंकी छावनीकी ओर चले आये। दुर्योधनके पतनका हाल सुन, कौरवोंकी बाकी सेना पहलेही भाग गयी थी। जो कुछ बचे-बचाये पहरेदार सैनिक

रह गये थे, इन्हें देख वे भी भाग गये। वहाँ अपार धन-सम्पत्ति और युद्धका साज-सरंजाम पाण्डवोंके हाथ लगा। वह रात वहीं बितानेके विचारसे सब लोग उसी छावनीमें रह गये; पर पाँचों पाण्डव, श्रीकृष्ण और सात्यकी, वहाँसे कुछ फ़ासलेपर सरस्वती-नदीके किनारे आ रहे।

सायंकाल, सूर्यास्तके समय, जङ्घाघातसे मूर्च्छित दुर्योधनकी मूर्च्छा दूर हुई और उस आघातकी भयङ्कर वेदनासे वह व्याकुल हो कर छटपटाने लगा। प्राणान्तका समय था। इसी समय उसे देखनेके लिये संजय, अश्वत्थामा, कृप और कृतवर्मा वहाँ आये। अश्वत्थामाको राजाकी वह हालत देखकर अपार दुःख और पाण्डवोंपर असीम क्रोध हुआ। उसने मन-ही-मन कहा,—"यद्यपि इन लोगोंने अधर्म्मसेही मेरे पिताको मारा, तोभी मुझे इतना क्रोध नहीं हुआ था, जितना आज हो रहा है।" इसके बाद उसने दुर्योधनसे कहा,—"राजन्! यदि आपकी आज्ञा हो, तो अब भी मैं पाण्डवोंका नाश कर सकता हूँ।"

यह सुनकर दुर्योधनको बड़ा आनन्द हुआ और कृपाचार्य्यसे जल मँगवाकर उसने पड़े-ही-पड़े अश्वत्थामाके सिरपर सेनापतित्वका अभिषेक करते हुए कहा,—"आप मेरे लिये अवश्य युद्ध करें।" यह कहकर, उसने आँखें बन्द कर लीं। साथही उसके प्राण-पखेरू उड़ गये!

अश्वत्थामाकी पैशाचिक लीला

अश्वत्थामा, कृपाचार्य्य और कृतवर्मा, ये तीनों कौरव-वीर फिर वहाँसे चलकर एक जङ्गलमें घुसे। एक वट-वृक्षके नीचे अच्छा स्थान और समीपही जलाशय देखकर वे वहाँ ठहर गये। रात होही

चुकी थी। तीनों वीर ज़ख्मोंसे व्याकुल और परिश्रमसे थके हुए थे। कृप और कृतवर्म्माको लेटतेही नींद आगयी, पर अश्वत्थामाका मन बेचैन था। १८ दिनके संग्रामके सारे दृश्य एक-एककर उसके सामने नाचने लगे, पिताका प्रेत दिखाई देने लगा। दुर्योधनका मरण और अपनी प्रतिज्ञा—ये दोनों बातें उसके अन्तःकरणको बेचैन किये हुई थीं। अँधेरी रात थी, चारों ओर घोर अन्धकार था। अश्वत्थामा उस वट-वृक्षके नीचे पड़ा पड़ा आँखें खोले आकाशकी ओर देख रहा था और पाण्डवोंसे बदला लेनेकी बात सोच रहा था। उस वट-वृक्षकी डालोंपर हजारों कौए सो रहे थे। थोड़ी देरमें वहाँ एक बड़ा भारी उल्लू आया, जिसकी आँखें गोल-गोल और रंग हलका पीला था। वह चुपकेसे वृक्षपर आ बैठा और धीरे-धीरे उसने वहाँके सब कौओंको एक-एक करके मार डाला। उनका खून पीकर उसने उनके पङ्ख और पैर नीचे गिरा दिये। यह दृश्य देखकर अश्वत्थामाने सोचा,—"नीच पाण्डव भी इस समय सोरहे होंगे, फिर मैंभी क्यों न इसी उल्लूकी तरह उन पाण्डव-रूपी कौओंको मार डालूँ?" यही विचारकर, उसने कृप और कृतवर्म्माको जगाया और कहा,—"चलो, अभी चल कर हम सोए हुए पाण्डवोंका बध कर डालें।" कृपाचार्य्यने पहले तो उससे ऐसा पापी, पैशाचिक और निर्दय संकल्प त्याग देनेको कहा; पर पीछे मान गये। फिर वे तीनों क्रूर-कर्म्मा पिशाच, उस अन्धेरी रातमें, पाण्डवोंका संहार करनेके लिये चल पड़े।

पाण्डवोंकी छावनीके सदर दरवाज़ेपर कृप और कृतवर्माको खड़ाकर, अश्वत्थामा दूसरीही राहसे छावनीके भीतर घुसा। एक बड़े ख़ीमेमें घुसकर उसने देखा कि, धृष्टद्युम्न पलङ्गपर सो रहा है। उसीने अश्वत्थामाके पिताको, समाधिस्थ अवस्थामें, मारा

था। अश्वत्थामा उसकी छातीपर चढ़ बैठा और उसने उसका गला घोंटकर, उसकी जान निकाल ली! इतनेमें उसके नौकर-चाकर और स्त्रियाँ जाग उठीं; पर सब अश्वत्थामाकी तलवारके शिकार हुए। दूसरे ख़ीमेमें घुसकर उसने, वहाँ जितने लोग सो रहे थे, उन सबकी गर्दने मरोड़कर उन्हें मार डाला। उसी मार-काटमें पाण्डवोंके पाँचो पुत्र भी मारे गये। जो जागे और रोक-थाम करने लगे, उनके सिर उसने तलवारसे काट डाले। थोड़ीही देरमें सारी छावनीमें कोलाहल मच गया और इस तरह चिल्लाते हुए जो लोग छावनीके बाहर निकले, उनका काम कृप तथा कृतवर्म्माने तमाम कर दिया। जो भीतर रहे और अश्वत्थामाका सामना करने लगे, वे अश्वत्थामाके अस्त्र और शस्त्रके शिकार हुए। इस प्रकार निर्दयताके साथ सोए हुए मनुष्योंका संहार कर, वे तीनों पिशाच, पौ फटनेके पूर्वही, वहाँसे बचकर निकल भागे।

पाँचों पाण्डव, श्रीकृष्ण और सात्यकि उस छावनीमें नहीं थे; यह पहले ही बतलाया जा चुका है। प्रातःकाल धृष्टद्युम्नके एक सारथिने, जो इस क़त्लेआमसे बचकर निकल भागा था, धर्म्मराज-से यह सब हाल कह सुनाया। सुनकर पाण्डवोंके हृदयकी क्या अवस्था हुई होगी, इसका अनुमान पाठकही कर लें। पाण्डव एकबारही मूर्च्छित होगये। सात्यकिने कुछ देर बाद उन्हें जगाया। तब वे फूट-फूटकर रोने लगे। द्रौपदी आदि स्त्रियाँ उपलव्य-नगर-में थीं। धर्म्मराजने उन्हें नकुलको भेजकर वहाँसे बुलवा लिया। वध-स्थानमें आकर सबने अपने पुत्र, परिवार और आत्मीय-जनोंकी लाशें देखीं। द्रौपदी तत्कालही मूर्च्छा खाकर धरतीपर गिर पड़ी। थोड़ी देर बाद, मूर्च्छा टूटनेपर द्रौपदी बिलख-बिलखकर रोने लगी। अन्तमें उसने कहा,—"जिस अश्वत्थामाने मेरे पुत्रों और भाइयोंको

मारा, वह अभीतक जीता क्यों बचा है?" इसके बाद उसने भीमसे कहा,—"जाओ, तुम्हीं उसको मारकर, उसके मस्तकका दिव्यमणि ले आओ। जबतक तुम वह मणि न लाओगे, तबतक मैं अन्न-जल ग्रहण न करूँगी।"

भीमने तुरन्त धनुष,बाण और गदा उठा, रथपर सवार हो, वहाँसे प्रस्थान किया। अर्जुन और युधिष्ठिरको साथ ले, श्रीकृष्ण भी उसके पीछे चले। अश्वत्थामाको ढूँढ़ते हुए भीमसेन यमुना-नदी पार करके, भागीरथीके तटपर, भगवान् वेदव्यासके आश्रमके समीप आ पहुँचे। दूरसेही उन्होंने देखा, कि गंगा-तटपर अनेक ऋषियोंके साथ व्यास-भगवान् विराजमान हैं और उनके समीपही अश्वत्थामा धूलसे भरे हुए दर्भके वस्त्र पहने बैठा है। दूरसेही भीमने ललकारकर कहा,—"ठहर रे नीच! अब कहाँ जाता है?"

भीमके पीछे अर्जुन, युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण थे ही। अश्वत्थामाने वहींसे "आपाण्डवाय (सब पाण्डव मारे जायें)" कहकर ब्रह्म-शिरस्-अस्त्र फेंका। अर्जुनने सबका अभीष्ट-चिन्तन करके उस अस्त्रका प्रतिकार वैसेही अस्त्रसे किया। तब दोनों अस्त्र परस्पर भिड़ गये, जिससे प्रचण्ड अग्नि-ज्वालाएँ निकलने लगीं। तब व्यासजीने अर्जुन और अश्वत्थामासे कहा,—"तुम लोग अभी अपना-अपना अस्त्र लौटा लो, नहीं तो इस अस्त्र-संघर्षणसे महा अनर्थ होगा। अश्वत्थामा! तुम धर्म्मराज युधिष्ठिरकी शरण लो और द्रौपदीके चित्त-समाधानके लिये अपने मस्तकका मणि निकालकर उनके हवाले करो।" यह सुन, दुष्ट अश्वत्थामाने भावी पाण्डव-वंशपर अपने अस्त्रका प्रयोग किया और बहुत कुछ समझाने-बुझानेपर अपने मस्तकका मणि निकालकर भीमके हवाले कर दिया।

श्रीकृष्णका शाप

उस समय श्रीकृष्णने अश्वत्थामासे कहा,—"अश्वत्थामा! जिस समय युद्ध होरहा हो, उस समय धर्म्माधर्म्मका विचार न रहे, तो कोई वैसी भारी बात नहीं है। पर युद्ध समाप्त हो चुकनेपर, जब सब लोग निश्चिन्त हो सो रहे थे, उस समय तुमने निरपराध आबाल-वृद्ध-वनिताओंका निर्दयतासे वधकर, बड़ाही नीच कर्म्म किया है। मैं तुम्हें शाप देता हूँ कि, तुम इस भयानक पापका फल भोगते हुए हज़ार वर्षतक पृथ्वीपर भटकते रहोगे। कोई तुमसे न पूछेगा, कि तुम्हारा क्या हाल है? तुम्हारा मस्तक और शरीर सड़ जायेगा, उसमें कीड़े पड़ेंगे और सदैव उसमेंसे लहू तथा पीव बहता रहेगा।"

श्रीकृष्णकी यह क्रोध-भरी वाणी सुनकर अश्वत्थामा वहाँसे चला गया। युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन और श्रीकृष्ण वह मणि लेकर द्रौपदीके पास चले आये। युधिष्ठिरकी आज्ञासे भीमने वह मणि देकर द्रौपदीसे कहा,—'द्रौपदी! अश्वत्थामाको जीतकर हम यह मणि ले आये हैं। अब उठो, तुम्हारे पुत्रोंका वध करनेवाले उस पापीको पूरा दण्ड दिया जा चुका। हमने गुरु-पुत्र और ब्राह्मण जानकर उसकी जान नहीं ली। वह अभी जीता है, पर जीता हुआ भी मर चुका है। इसलिये अब तुम शोक मत करो।"

यह सुन, द्रौपदीने कहा,—"तुमने गुरु-पुत्रको नहीं मारा, यह अच्छाही किया।"

इसके बाद युधिष्ठिरने द्रौपदीके कहनेसे, गुरुका प्रसाद जानकर, उस मणिको अपने मुकुटपर धारण किया।

इस प्रकार भारतीय युद्ध समाप्त हुआ। दोनों ओरकी अठारह

अक्षौहिणी सेनामेंसे केवल दस योद्धा बचे—पाण्डव-पक्षमें सात और कौरवोंमें तीन। शेष सबका संहार हुआ। अन्धे धृतराष्ट्रको जब यह हाल मालूम हुआ, तब वे एक बार मूर्च्छित हो गये। फिर चैतन्य होनेपर वे सती गान्धारी * और पाण्डव-माता कुन्ती तथा कौरव-स्त्रियों समेत कुरुक्षेत्रकी उस रण-भूमिमें आये, जहाँ लाखों सैनिकोंकी लाशें पड़ी थीं। कौरव-स्त्रियाँ बाल खोले, रोती और छाती पीटती हुई अपने मृत पतियोंकी लाशोंके पास बैठकर महा विलाप करने लगीं। वहाँ श्रीकृष्ण और पाण्डवसे सबकी भेंट हुई। धृतराष्ट्रने सुनाही था, कि भीमसेनने उसके सौ पुत्रोंको मार डाला है। इसलिये भीमसेनपर उनका सबसे अधिक क्रोध था। उनका क्रोध-कपट-युक्त चेहरा देखकरही श्रीकृष्ण ताड़ गये, कि यदि भीमको इसने गले लगाया, तो भीमकी ख़ैरियत नहीं है। इस लिये युधिष्ठिरके बाद जब भीम धृतराष्ट्रसे मिलने जाने लगे, तब श्रीकृष्णने उन्हें रोका। धृतराष्ट्रने कहा,—"आओ पुत्र! जो कुछ हुआ, सो हुआ! अब मैं तुम्हें छातीसे लगाकर संतोष कर लूँ। श्रीकृष्णने अन्धे धृतराष्ट्रके सामने भीमकी वही लोहेकी मूर्त्ति रख दी, जिसपर दुर्योधन गदा-युद्धकी कसरत किया करता था। धृतराष्ट्रने उसे भीम जान कर छातीसे लगाया और इस ज़ोरसे धर दबाया, कि वह मूर्त्ति कड़-कड़ करती हुई चूर हो गयी! इससे धृतराष्ट्रकी छातीमें भयङ्कर चोट आयी, उनके मुखसे खून गिरने लगा और वे मूर्च्छित होकर गिर पड़े।

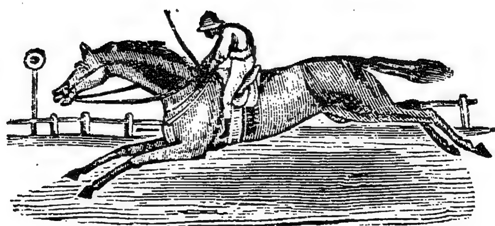
थोड़ी देर बाद चैतन्य होनेपर श्रीकृष्णने उनसे कहा,—"तुम्हारी-

---

* सती "गान्धारी" का बड़ाही सुन्दर सचित्र जीवन चरित्र हमारे यहाँ छप रहा है, शीघ्र ही तैयार हो जायगा। अवश्य पढ़िये।

ही बदौलत तुम्हारे सब पुत्रों तथा इतने क्षत्रियोंका संहार हुआ। भीष्म, द्रोण, विदुर और मैंने कितना समझाया, कि इस युद्धका परिणाम यही होगा, पर तुमने नहीं माना! अब भीमसेन पर वृथा क्रोध करके क्या होगा? अपने अपराधको सोचो और जो कुछ हुआ, उसपर सन्तोष करो।"

धृतराष्ट्रने भी समझ लिया। तब भीम और अन्य पाण्डवोंको बुलाकर उन्होंने छातीसे लगाया। गान्धारी भी, जो शोक और क्रोधसे संतप्त हो गयी थी, युधिष्ठिरका सात्विक विनय देखकर शान्त हुई और स्वयं शोक करना छोड़, बिलखती हुई पुत्र-वधुओं, द्रौपदी तथा कुन्तीको समझाने लगी। फिर सबने भागीरथीके तटपर जा मृतकोंकी अन्त्येष्टि क्रिया की और इस प्रकार भारतीय महायुद्धका उपसंहार हुआ।



ग्यारहवाँ अध्याय

पाण्डवोंका राज्यारोहण

महात्मा भीष्मके उपदेश

इस क्षत्रिय संहारी युद्धके बाद घर-घरमें शोक-ज्वाला भभक उठी। घर-घरसे रोनेकी ध्वनि सुनाई पड़ने लगी। युधिष्ठिर भी, इस कुटुम्बियोंकी हत्यासे, अत्यन्त शोक-सन्तप्त हो, कुछ दिनोंतक गङ्गा-किनारेही रहे। एक दिन उन्होंने अर्जुनसे कहा,—

"अर्जुन! तुमने और भीमसेनने ही, अत्यन्त पराक्रम प्रकटकर, विजय पायी है। इसलिये तुमलोग अपने साथ नकुल और सहदेवको लेकर इस ससागरा पृथ्वीका अखण्ड राज्य करो। मुझसे तो अब इस स्वजन-शून्य परिवारकी तरफ देखा भी नहीं जाता! मैं वनमेंही रहकर अपने जीवनका शेष भाग व्यतीत करूँगा।"

अर्जुनने कहा,—"राजन्! हमलोगोंने युद्धमें अपने कुटुम्बियोंको केवल इसीलिये मारा, कि आपको राज-सिंहासनपर बैठा देख, हम अपना श्रम सफल समझेंगे। वनमें तो आपही हमलो-

गोंको, कौरवोंके मारनेको उत्तेजित करते रहते थे। उस दिन कर्णके बाणोंसे व्याकुल हो आपनेही, मेरी खूब निन्दाकर, जो चाहा सो कहा था। यदि हमको यह मालूम होता, कि अन्तमें आप हमारे साथ विश्वासघात करेंगे, तो हम इन असंख्य प्राणियोंकी हत्याका घोरतर पापही अपने माथे क्यों लेते? जैसे बनता, वैसे, अपने जीवनको बनमें रहकर व्यतीत कर देते। हमलोग तो आपको इस, अत्यन्त परिश्रम द्वारा प्राप्त, राज्यका अधिकारी बनाना चाहते हैं और आपको इसी समय वैराग्य उत्पन्न हुआ है। यही वैराग्य यदि पहलेसेही हो जाता, तो यह अभूतपूर्व भीषण हत्या-काण्डही क्यों होता?"

युधिष्ठिर कुछ भी नहीं बोले। अन्तमें श्रीकृष्णके बहुत कुछ समझाने-बुझानेपर युधिष्ठिरने राज्य करना स्वीकार कर लिया। उसके बाद पाण्डव हस्तिनापुरमें आये और विधिवत् महाराज युधिष्ठिरका राज्याभिषेक किया गया। युधिष्ठिरने अर्जुनको अपने राज्य-रक्षकका महान-पद-प्रदान किया और उन्हें रहनेके लिये दुश्शासनका उत्तम महल दिया।

कुछ दिनों बाद पाण्डव, श्रीकृष्ण सहित रथोंपर सवार हो, कुरुक्षेत्रके मैदानमें, शर-शय्याशायी महात्मा भीष्मके दर्शनार्थ गये। वहाँ भीष्मने उन्हें मोक्ष-धर्म्म, आपद्धर्म्म, राज-धर्म्म और शासन-सम्बन्धी अनेक उपदेश देकर, आनन्द पूर्वक राज-सुख भोगनेका आशीर्वाद दिया। पाण्डव हस्तिनापुरमें लौटकर आनन्दपूर्वक दिन व्यतीत करने लगे।

कुछ दिनों बाद, जब सूर्यके उत्तरायण आनेका समय हुआ, तब पाण्डव, श्रीकृष्ण आदि अपने प्रियजनों सहित, महात्मा भीष्मकी अन्त्येष्टि क्रिया करनेके लिये पुष्प चन्दन, रेशमी वस्त्र और सुग-

न्धित द्रव्य आदि लेकर पुनः कुरुक्षेत्रके मैदानमें जा पहुँचे। भीष्मकी मृत्युके बाद श्राद्ध और हवन करके उनका शव चन्दन, अगर, कर्पूर, घृत, नारियल आदि सुगन्धित द्रव्योंसे सिक्त चितापर रख, आग लगा दी गयी। तब ब्राह्मणलोग सामवेदके मन्त्रोंका गान करने लगे। जब सारी चिता जलकर भस्म हो गयी, तब सबलोगोंने गङ्गा-स्नान किया। गङ्गाके बाहर निकलतेही युधिष्ठिर शोकाकुल हो ज़मीनपर गिर पड़े! अर्जुन आदि सभी वीर उन्हें घेरकर बैठ गये। अन्तमें कृष्ण, व्यास और धृतराष्ट्रके बहुत कुछ समझानेपर युधिष्ठिरका शोक कम हुआ। फिर युधिष्ठिरने अश्वमेध-यज्ञ करके अपने चित्तको शान्ति मिलनेका विचार प्रकट किया। परन्तु युद्धमें असंख्य द्रव्य लग जानेके कारण अश्वमेधके लिये ख़ज़ानेमें धन बहुतही कम बच रहा था। इसी तरह अन्य राजालोग भी इस महायुद्धमें बहुतसा द्रव्य ख़र्च करके खाली हाथ हो गये थे और विपुल धन-दान करनाही अश्वमेधका प्रथम काम है। इस विषयपर कुछ देर सोच-विचार करनेके बाद महर्षि व्यासदेवने कहा,—

"धर्म्मराज! धनकी चिन्ता न करो। किसी समय महाराजा मरुतने हिमालयपर एक बड़ा भारी यज्ञ किया था। उसमें उन्होंने ब्राह्मणोंको बहुत अधिक स्वर्ण दान दिया था। यहाँतक, कि ब्राह्मणलोग वह सब स्वर्ण न लेजा सके और वहीं छोड़कर चले गये। वह सोनेका ढेर अभीतक वहीं पड़ा है। इस समय यदि तुम उसे प्राप्त कर सको, तो तुम्हारा यज्ञ सहजमें हो सकता है।"

यह सुन युधिष्ठिरकी चिन्ता जाती रही और वे हस्तिनापुर लौटकर अकण्टक राज्य करने लगे। बन्धु-बान्धवों तथा पुत्रोंके मरनेसे अर्जुनको जो दुःख सताया करता था, उसे निवारण करने-

के लिये श्रीकृष्ण उन्हें तरह-तरहकी अद्भुत कथाएँ सुनाया करते थे। एक दिन श्रीकृष्णने अर्जुनसे कहा,—

"धनञ्जय! धर्म्मकी जीत हुई और धर्म्मराजने अपना खोया हुआ राज्य पा लिया। धृतराष्ट्र-पुत्रोंको उनके पापका फल भी मिल गया। आशा है, अब धर्म्मराज तुमलोगोंकी सहायतासे निष्कण्टक राज्य करेंगे। तुम्हारे साथ राज्य-सुख भोगनेके लिये तो क्या, वन-वास करनेके लिये भी मैं तैयार हूँ। यद्यपि मेरी इच्छा आप लोगोंसे पृथक् होनेकी नहीं होती, तथापि अब मेरा द्वारका जाना अनिवार्य हो गया है; क्योंकि बहुत दिनोंसे पूज्य पिता और भैया बलरामके दर्शन नहीं मिले। राज-कार्य्य भी देखना है, अतः मैं तुमसे द्वारका जानेकी अनुमति चाहता हूँ। तुम मेरी इस प्रार्थनाको मान लो और धर्म्मराजसे भी चलकर कह दो, कि 'कृष्ण अब द्वारका जाना चाहता है।'

अपने प्राणाधिक प्रिय मित्र श्रीकृष्णके मुहसे यह बात सुनकर अर्जुन व्याकुल होगये। अन्तमें श्रीकृष्णके बहुत कुछ अनुरोध करने पर अर्जुनने उनकी बात मान ली और दोनों वहाँसे उठकर सीधे युधिष्ठिरके महलोंमें चले गये। युधिष्ठिरने श्रीकृष्ण और अर्जुनको आया देख, बड़ी प्रसन्नतासे, उन्हें उचित आसनोंपर बैठाकर पूछा,—"जान पड़ता है, कि आप लोगोंने किसी कार्य्य-विशेषसे यहाँ पधारनेकी कृपा की है। कहिये, क्या आज्ञा है? मैं अवश्य उसका पालन करूँगा।"

अर्जुनने नम्रता पूर्वक कहा,—"महाराज! इन महात्मा श्रीकृष्णचन्द्रको द्वारकासे आये बहुत दिन बीत गये हैं, अब ये अपने पिता तथा भ्रातासे मिलनेके लिये अत्यन्त उत्सुक हो रहे हैं। अतएव यदि आप आज्ञा दें, तो ये अपने नगरको प्रस्थान करें।"

बहुत कुछ हीला-हवालीके बाद युधिष्ठिरने इस बातको मान लिया और श्रीकृष्णको सादर विदाकर दिया।

श्रीकृष्णके चले जानेके कुछ समय बाद, एक दिन, धर्म्मराज अपने चारों भाइयोंको बुलाकर अश्वमेध यज्ञके लिये सलाह करने लगे। सबने इस कामको अत्युत्तम बताते हुए इसका समर्थन किया। इसके बाद शुभ मुहूर्त देखकर व्यासजीके बताये हुए, हिमालय-स्थित स्वर्ण-भाण्डारको लानेके लिये पाण्डवोंने ससैन्य यात्रा की। वहाँ पहुँचनेपर उन्हें वह अगाध स्वर्ण-राशि मिल गयी, जिसे हाथी, घोड़े, ऊँट, ख़च्चर, गधे और बैल-गाड़ियोंमें लादकर वे हस्तिनापुरकी ओर चल पड़े।

परीक्षितकी प्राण-प्रतिष्ठा

उधर जब पाण्डव हिमालयपर गये थे, तब कृष्ण भी हस्तिनापुर आ गये थे। पीछेसे एक बड़ी भारी घटना घटी। अर्जुनके पुत्र, अभिमन्युकी पत्नी उत्तराने एक पुत्र प्रसव किया ; किन्तु वह मरा हुआ पैदा हुआ ! यह देख, पाण्डव-गृहमें हाहाकार मच गया ; क्योंकि यही एक बालक पाण्डवोंका भावी वंश-रक्षक था। यह समाचार सुन श्रीकृष्ण प्रसूति-गृहमें गये और उन्होंने अपने सत्य-बलसे उस बालकको जिला दिया ! सबको बड़ाही आनन्द हुआ और वंश-नाशका भय जाता रहा। यही बालक आगे चलकर "परीक्षित" * के नामसे प्रसिद्ध हुआ।

परीक्षितका जन्म होनेके एक महीने बाद पाण्डव धन-राशि लेकर हिमालयसे लौट आये। अश्वमेध-यज्ञकी तैयारियाँ बड़ी

---

* हमारे यहाँ महाराजा परीक्षितका सम्पूर्ण जीवन-वृत्तान्त विपुल चित्रों सहित "सम्राट् परीक्षितके" नामसे छप रहा है। अवश्य देखिये।

धूम-धामसे होने लगीं। चैत्रकी पूर्णिमाको यज्ञ आरम्भ किया गया, तब युधिष्ठिरने महर्षि व्यासजीसे पूछा,—

"भगवन्! अब आप यह बताइये, कि हमारे इस यज्ञ-अश्वकी रक्षाका भार किसके सुपुर्द किया जाये?"

महर्षिने उत्तर दिया,—"राजन्! धनुर्विद्या-विशारद महावीर अर्जुनही इस घोड़ेकी अच्छी तरह रक्षा कर सकते हैं। इनके पास दिव्य अस्त्र, दिव्य धनुष और दिव्य बाण हैं। अतएव येही घोड़ेके साथ जाने योग्य हैं। गदाधारी भीमसेन और नकुल राज्यकी रक्षा करें और सहदेव स्वागत-विभागकी देख-भाल करें।

महर्षि व्यासकी यह बात सुन, युधिष्ठिर अर्जुनसे बोले,—"अर्जुन! तुम इस घोड़ेके साथ बड़ी सावधानीसे यात्रा करो। इसके मस्तकपर बँधे पत्रको पढ़कर जो वीर इसे पकड़े और तुमसे युद्ध करना चाहे, उसे परास्तकर अपना घोड़ा छिनालो। जहाँतक बने, लड़ाई टाल देना। ग़रीब, मूर्ख, निर्बल और उन्मत्त द्वारा, अज्ञानसे, इस घोड़ेके पकड़े जानेपर, उनको समझा देना। ऐसे मनुष्योंका बध भूलकर भी न करना। जो अभिमानी राजा हों, उन्हें पराजितकर अपना करद राज्य बनाना और उन्हें यज्ञमें सम्मिलित होनेके लिये निमन्त्रण देना।"

अर्जुनकी दिग्विजय-यात्रा

ठीक समयपर महाराजा युधिष्ठिरने एक हृष्ट-पुष्ट काले घोड़ेका यथाविधि पूजनकर उसके मस्तकपर अपना घोषणापत्र बाँध दिया। अर्जुन भी सैनिक-वेशसे सुसज्जित हो, यज्ञ-शालामें आये और उस घोड़ेको लक्ष्यकर बोले,—

"हे अश्व ! तुम्हारा कल्याण हो। तुम निर्विघ्न प्रस्थान करो और शीघ्रही अपने शत्रुओंको दमनकर यहाँ लौट आओ।"

इतना कह अर्जुनने, अँगुलित्राण पहनकर, गाण्डीवका टङ्कार शब्द किया। फिर बड़ी प्रसन्नतासे स्वयं एक सफेद घोड़ेपर चढ़कर, चतुरङ्गिणी सेना सहित, उसके पीछे-पीछे चलने लगे। इस प्रकार अर्जुनको अश्व-रक्षाके लिये जाते देख, हस्तिनापुरके बालक, युवा, वृद्ध, स्त्री-पुरुष—सभी उस यज्ञके घोड़ेका तमाशा देखने वहाँ आ पहुँचे और चिल्ला-चिल्लाकर एक दूसरेसे कहने लगे,—

"यह देखो, यज्ञका घोड़ा जाता है और गाण्डीव लेकर महावीर अर्जुन भी इसके रक्षार्थ पीछे-पीछे जा रहे हैं। परमात्मा करे, इनके लौटनेमें किसी प्रकारका विघ्न न हो।"

सबसे पहले घोड़ा उत्तर दिशाकी ओर गया। उसको पकड़कर कितनेही राजाओंने अर्जुनसे युद्ध किया; परन्तु सभीको हार खानी पड़ी। इसके बाद घोड़ा पूर्व दिशाकी ओर घूमकर त्रिगर्त्त देशमें पहुँचा। वहाँके राजकुमारोंने, अस्त्र-शस्त्रोंसे सुसज्जित हो, घोड़ेको पकड़ लिया। तब अर्जुनने उन्हें नम्रतापूर्वक घोड़ा छोड़ देनेको कहा। परन्तु उन्होंने न माना; क्योंकि पाण्डवोंने युद्धमें त्रिगर्त्तोंका खूबही नाश किया था और त्रिगर्त्त-राजकुमारगण अर्जुनसे उसका बदला चुकाना चाहते थे। उन लोगोंने अर्जुनपर प्रबल आक्रमण किया। दोनों ओरसे बाणोंकी वर्षा होने लगी। अर्जुनकी घोर बाण-वृष्टिसे त्रिगर्त्त-राज-कुमार सूर्य्यवर्म्मा व्याकुल हो गया और उसने हार मान ली। तब द्वितीय राज-पुत्र केतुवर्म्मा अर्जुनके सामने आया और युद्ध करने लगा। केतुवर्म्मा तीर चलानेमें बहुतही प्रवीण था। उसने बाणोंसे अर्जनको ढँक दिया। यह

देखकर अर्जुन बड़ेही प्रसन्न हुए और बालक समझकर उससे मृदु युद्ध करने लगे।

इसी बीच केतुवर्म्माने अर्जुनके हाथमें एक बाण मारा। बाणके लगतेही हाथ घायल हो गया, अर्जुनको मूर्च्छा आ गयी और उनके हाथसे गाण्डीव गिर पड़ा! यह देख, केतुवर्म्माकी प्रसन्नताका ठिकाना न रहा। वह खिलखिलाकर हँस पड़ा। इसपर अर्जुनको बड़ा क्रोध चढ़ आया। उन्होंने अपने हाथसे बहते हुए खूनको पोंछकर गाण्डीव उठा लिया और उनके अठारह योद्धाओंको एकही वारमें पृथ्वीपर सुला दिया। यह देख, त्रिगर्तोंका साहस टूट गया और वे बहुतसी भेट ले, अर्जुनके पास आ, हाथ जोड़कर कहने लगे,—

"महावीर कौन्तेय! हम आपका आधिपत्य स्वीकार करते हैं। कृपया यह भेट स्वीकार कीजिये और हमलोगोंको अपना दास जान क्षमा प्रदान कीजिये।"

अर्जुनने कहा,—"अच्छी बात है, मैंने तुम्हें क्षमा किया। अब तुमलोग अश्वमेध-यज्ञमें अवश्य पधारनेकी कृपा करना।"

इसके बाद घोड़ा प्राग्ज्योतिष देशमें पहुँचा। वहाँ भगदत्तके पुत्र; वज्रदत्तने उस घोड़ेको पकड़कर अर्जुनसे कहा,—

"मध्यम पाण्डव! तुम हमारे भाग्यसेही यहाँ आये हो। आज मैं तुम्हें मारकर अपने पिताके ऋणसे मुक्त हो जाऊँगा। यदि तुम्हें अपने प्राण प्यारे हैं, तो घोड़ेको छोड़कर भाग जाओ।"

यह सुन अर्जुनने बाणोंसे उसकी खूब ख़बर ली। वज्रदत्तने घोड़ा छोड़ दिया और एक बड़े डील-डौलवाले मस्त हाथीपर चढ़कर अर्जुनसे लड़ने लगा। चार दिनतक दोनोंमें घोर संग्राम होता रहा। अन्तमें अर्जुनने व्यर्थ समय जाता देख, आगकी तरह

जलता हुआ एक ऐसा बाण मारा, कि उसके हाथीका हृदय फट गया और वज्रसे टूटे पर्वत-खण्डकी तरह वह पृथ्वीपर गिरकर मर गया। वज्रदत्त उछलकर दूर जा खड़ा हुआ और अर्जुनसे प्राण-भिक्षा माँगने लगा। तब अर्जुनने कहा,—"वज्रदत्त! महाराजा युधिष्ठिरने मुझे, जहाँतक बने, शत्रुको न मारनेकीही सलाह दी है। इसीलिये मैं तुम्हें छोड़े देता हूँ। तुम्हे यज्ञके दिन हस्तिनापुरमें आकर उत्सवमें सम्मिलित होना पड़ेगा।"

वज्रदत्त अर्जुनकी आज्ञाको शिरोधार्यकर अपने घर चला गया। इसके बाद घोड़ा वन, उपवन, नदी, नद, पर्वत तथा कन्दराओंमेंसे होता हुआ सिन्धु-देशमें जा पहुँचा। यहाँका राजा जयद्रथ था, जो महायुद्धमें मारा जा चुका था। उसका बदला चुकानेके विचारसे सिन्धु-देशीय वीरोंने अर्जुनपर बड़ेही वेगसे आक्रमण किया। उन्होंने चारों ओरसे आकर महावीर अर्जुनको घेर लिया और खूबही लोहा बरसाया। परन्तु इससे अर्जुनका कुछ भी नहीं बिगड़ा। अर्जुनके बाण उन लोगोंको असह्य हो गये। वे अपने प्राण लेकर नगरकी ओर भागने लगे। परन्तु अर्जुनने उन भागते हुओंकोही मारना शुरू कर दिया और देखते-देखते हजारों वीरोंको इस संसारसे सदाके लिये विदा कर दिया।

थोड़ी देर बाद, फिर बचे-बचाये वीरोंने सलाह करके अर्जुनपर धावा किया। वे क्रोधसे उन्मत्त होकर लड़ने लगे। घोर संग्राम छिड़ गया। अर्जुनके छोड़े भयङ्कर बाणोंकी कुछ भी परवाह न कर, वे वहीं अड़े रहे। यह देखकर अर्जुनकी क्रोधाग्नि भड़क उठी। उन्होंने उन लोगोंके अस्त्रोंको काटकर उनका संहार करना आरम्भ कर दिया। फिर क्या था? उनके पैर उखड़ गये और वे सब भाग गये। इस भाँति अर्जुनने उन लोगोंकी बड़ीही मिट्टी पलीद की।

अपने देश-वासियोंकी ऐसी दुर्गति देख धृतराष्ट्रकी पुत्री दुश्शला, जो जयद्रथसे व्याही थी, अपने पौत्रको गोदीमें लिये,रोती हुई, वहाँ आपहुँची। अपनी बहिनको आती देखकर अर्जुनने गाण्डीव रख दिया और कहा,—"बहिन! कहो, क्या चाहती हो?"

शोकसे व्याकुल होकर दुश्शलाने कहा,—"भैया! युद्धमें मेरे पतिके मर जानेके कारण मेरा पुत्र सुरथ, आजतक, अपने पिताके शोकमें अत्यन्त व्याकुल था। वह आज तुम्हारे आनेकी ख़बर सुन अचानक पृथ्वीपर गिरकर मर गया। अब मैं उसके इस पुत्रको लेकर तुम्हारी शरण आयी हूँ।"

बहिनको दुःखी देख, अर्जुनने अपना सिर लज्जासे नीचा कर लिया और वे कहने लगे,—"बहिन! क्षत्रियोंके धर्म्मको धिक्कार है, जिसके कारण हमें अपने भाई-बन्धुओंकोही मारना पड़ा। अब तुम शोक मत करो, ईश्वरकी इच्छाही ऐसी थी।"

इसके बाद उन्होंने दुश्शलाको अनेक प्रकारसे समझा-बुझा और अपने हृदयसे लगा, घर जानेको कहा। दुश्शलाने सिन्धु-वीरोंको, युद्ध बन्दकरके अर्जुनसे, क्षमा माँगनेकी आज्ञा दी। तब उन योद्धाओंने अर्जुनसे क्षमा माँगी। इस भाँति दुश्शला अर्जुनका यथोचित् भ्रातृ-सत्कारकर वीरों सहित अपने महलोंको लौट गयी।

पुत्र द्वारा पराजय

अपने इच्छानुसार फिरनेवाला वह यज्ञीय अश्व अनेक स्थानोंमें होता हुआ मणिपुर* पहुँचा। महाराजा बभ्रुवाहनको जब

* यदि आप मणिपुरका पूरा इतिहास जानना चाहते हों, तो हमारे यहाँसे "सेनापति टिकेन्द्रजितसिंह" या "मणिपुरका इतिहास" नामक सचित्रग्रन्थ अवश्य मंगा देखें। उसमें मणिपुरके असंख्य वीरोंका हाल है।

अपने पिताके आगमनका हाल मालूम हुआ, तब वे ब्राह्मणों सहित, बहुतसा धन लेकर, अर्जुनसे मिलने आये। अपने पुत्र बभ्रुवाहन-को इस प्रकार आता देख, अर्जुनको बहुतही बुरा लगा और उन्होंने झुँझलाकर कहा,—

"तुम क्षत्रिय नहीं हो, वैश्य हो। अर्जुनका पुत्र युद्धसे कदापि विमुख नहीं हो सकता। हम शस्त्र लेकर राजा युधिष्ठिरके अश्वकी रक्षा करते हुए तुम्हारे राज्यमें आये हैं और तुम कायरोंकी भाँति हमारी खुशामद करने आये हो! तुम्हें शर्म नहीं आयी? क्या युद्ध करना नहीं आता? तुम्हारी इस वैश्य-वृत्तिको धिक्कार है!"

इस प्रकार अर्जुनसे तिरस्कृत हो, बभ्रुवाहन कुछ देरतक नीचा मुख किये चुपचाप खड़े रहे। वे सोचते रहे, कि अब क्या करना चाहिये? इसी समय उलूपीने आकर कहा,—

"बेटा! मैं तुम्हारी सौतेली मा उलूपी हूँ। जब, कि तुम्हारे पिता तुम्हारे राज्यमें युद्धार्थी होकर आये हैं, तब उनसे तुम्हें निःसङ्कोच हो युद्ध करना चाहिये।"

उलूपीके कहनेसे उत्तेजित होकर बभ्रुवाहन लड़नेको तैयार हो गये। उन्होंने शीघ्रही समरोपयोगी सामान मँगाकर धारण किया और अच्छी तरह अङ्गत्राण, शिरस्त्राण तथा अंगुलित्राण पहन, धनुष-बाण लेकर अर्जुनसे ललकारकर कहा,—"आओ! आज तुम एक वैश्यके साथ युद्ध करनेका मज़ा चखो।"

इसी समय बभ्रुवाहनके लिये एक उत्तम अश्वोंका जुता हुआ सुदृढ़ और सिंह-चिह्नाङ्कित ध्वजा-युक्त रथ आगया। तब महावीर बभ्रुवाहन उसपर चढ़कर अर्जुनपर अजस्र बाण-वृष्टि करने लगे। अर्जुन भी प्रसन्न होकर पुत्रपर बाण छोड़ने लगे। धीरे-धीरे पिता-पुत्रका वह युद्ध ज़ोर पकड़ने लगा और देखते-देखते देवासुर संग्राम-

की तरह भयङ्कर हो उठा। एक बार अवसर पातेही बभ्रुवाहनने अर्जुनको एक ऐसा बाण मारा, कि अर्जुनको मूर्च्छा सी हो गयी। वे गाण्डीवके सहारे कुछ देरतक बैठ रहे। होश आतेही अर्जुनने कहा,—"बेटा! तुम्हारा युद्ध-कौशल देखकर मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ। अब मैं बाण-वृष्टि करता हूँ, तुम सावधानीसे अपनी रक्षाका प्रयत्न करो।"

इतना कहकर अर्जुनने तत्कालही बभ्रुवाहनके रथकी ध्वजा काट डाली और साथही चारों घोड़ोंको भी मार डाला। यह देख, बभ्रु वाहनको क्रोध चढ़ आया। वे रथसे नीचे उतरकर अपने पितासे पैदलही युद्ध करने लगे। बभ्रु वाहनने एक पैना तीर अपने पिताकी छातीमें खींच मारा। वह बाण लगतेही अर्जुन पृथ्वीपर गिर पड़े। बभ्रुवाहन भी अर्जुनके बाणोंसे बेतरह घायल हो चुके थे। वे भी अपने पिताको मरा देख, व्याकुल हो, पृथ्वीपर गिरकर अचेत हो गये।

बभ्रुवाहनकी माता चित्राङ्गदाने जब अपने पुत्र और पतिके मरनेका संवाद सुना, तब वह घबरायी हुई रण-भूमिमें आयी और दोनोंको पड़ा देख वह भी अर्जुनके पासही पछाड़ खाकर गिरपड़ी! थोड़ी देर बाद जब उसे होश आया, तब वह उलूपीका नाम ले-लेकर इस प्रकार रोने लगी,—

"हाय, उलूपी! तुम्हीं इन दोनों वीरोंकी मृत्युका कारण हुई हो। हाय! तुमनेही पिता-पुत्रको लड़ाकर इस प्रकार मेरा सर्वनाश किया है! क्या यही तुम्हारा पातिव्रत धर्म्म है? क्या यही तुम्हारा सच्चा धर्म्म-ज्ञान है? ख़ैर, तुम्हारी मनोकामना पूरी होगयी! मैं सत्य कहती हू, कि यदि तुमने मेरे पतिको नहीं जिलाया, तो मैं भी यहीं भूखी-प्यासी पड़ी रहकर आत्महत्या कर लूँगी।"



पुत्रद्वारा पराजय।

"बभ्रुवाहनको क्रोध चढ़ आया और वे रथसे नीचे उतरकर अपने पितासे

चित्राङ्गदा इस प्रकार रोती हुई अपने स्वामीके पैरोंको पकड़ कर, बैठ गयी। इसी समय दैवात् बभ्रुवाहनको होश आगया। वे अपनी माताको वहाँ देख, अत्यन्त दुःखी और अधीर होकर शोक भरे शब्दोंमें कहने लगे,—

"हाय! मैंने अपने पिताका वध अपनेही हाथसे किया! मुझे धिक्कार है! अब धर्म्मज्ञ ब्राह्मण बतायें, कि इस पितृघाती हत्यारेको कौनसा प्रायश्चित्तकर इस घोर पापसे मुक्त होना पड़ेगा? हाय! इस पापका तो संसारमें कोई प्रायश्चित्तही नहीं। हे उलूपी माता! आज मैंने अपने पिताको मारकर तेरे मनका काम किया, अब पिताके साथही मुझे भी मरा देख तुझे विशेष प्रसन्नता होगी।"

इतना कहनेके बाद बभ्रुवाहन आचमनकर, भूखे-प्यासे, अपने माता-पिताके पास, मरनेके लिये, बैठ गये। इस प्रकार सबको अत्यन्त दुःखी देखकर नाग-कन्या उलूपीने संजीवनी विद्या-द्वारा अर्जुनको पुनः जीवित कर दिया *!

अर्जुन चिरकालसे सोये हुए मनुष्यकी भाँति हाथोंसे अपनी आँखें मलते हुए उठ खड़े हुए। सबको अपने चारों तरफ़ देख अर्जुनने बड़ाही आश्चर्य किया। अन्तमें उन्होंने बभ्रुवाहनको छातीसे लगा कर पूछा,—"बेटा! यहाँ कोई तो हर्षमें, कोई शोकमें और कोई विस्मयमें मग्न है। इस भाव-वैचित्र्यका कारण क्या है? यदि तुम्हें मालूम हो, तो मुझे बताओ। हाँ, तुम्हारी माता चित्राङ्गदा इस रण-भूमिमें क्यों आयी है?"

---

* हमारे "वीर-पञ्चरत्न" नामक काव्य-ग्रन्थमें बभ्रुवाहन, उलूपी और चित्राङ्गदाका बड़ाही अनूठा वर्णन, खूब विस्तारके साथ, खड़ी बोलीकी जोशीली कविताओंमें किया गया है। सुन्दर-सुन्दर रङ्ग-विरंगे २० चित्र भी हैं। दाम ३) रुपया।

यह सुन, उलूपीने सारा हाल विस्तार पूर्वक कहकर अर्जुनको समझा दिया। तब अर्जुनने प्रसन्न हो बभ्रुवाहनसे कहा,—

"बेटा! अश्वमेधके अवसरपर तुम अपनी माता, विमाता और मन्त्रियों सहित, हस्तिनापुरमें अवश्य आना।"

बभ्रुवाहनने कहा,—"पिताजी! हमलोग आपके आज्ञानुसार यज्ञमें आकर ब्राह्मणोंकी सेवा करेंगे। अब आप मणिपुरमें चलकर, आजकी रात्रि यहीं व्यतीत कीजिये।"

अर्जुनने इन्कार कर, हँसते हुए कहा,—"वत्स! यह तो तुम्हें अच्छी तरह मालूमही है, कि इस समय मैं हय-रक्षक हूँ। जहाँ कहीं घोड़ा जायेगा, उसके पीछे-पीछे मुझे भी जाना पड़ेगा। रात्रि हो या दिन, मेरा काम तो इस घोड़ेकी रक्षा करना है। अतएव मैं नगरमें चलनेमें असमर्थ हूँ। परमात्मा तुम्हारा मङ्गल करे। अब मैं जाता हूँ।"

पुत्र-द्वारा पूजित हो और अपनी दोनों पत्नियोंसे प्रेमपूर्वक बातें कर, अर्जुन वहाँसे आगे बढ़े। वह स्वेच्छा-विहारी अश्व, वहाँसे चलकर मगध, बङ्ग, पुण्ड्र, कोशल, चेदि, काशी, अङ्ग, किरात, तङ्गन और दशार्ण आदि देशोंमें घूमता-फिरता निषाद-राज "एकलव्य"के राज्यमें आया। मगध और चेदि देशके राजाओंने भी घोड़ेको पकड़कर अर्जुनसे युद्ध किया था; परन्तु अर्जुनने उन्हें जीतकर यज्ञका निमन्त्रण स्वीकार करा लिया।

एकलव्यके पुत्रको परास्तकर, अर्जुन फिर घोड़ेके पीछे-पीछे चलने लगे। अब घोड़ा द्रविड़, आन्ध्र, माहिषिक, कालगिरेय आदि देशोंमें घूमता हुआ, द्वारकामें पहुँचा। श्रीकृष्णके पिता वसुदेवने अर्जुनका उचित स्वागत-सत्कार किया। यहाँसे चलकर घोड़ा गान्धार देश पहुँचा। शकुनीका बदला लेनेके लिये गान्धारि-

योंने यज्ञका घोड़ा पकड़कर अर्जुनसे युद्ध करनेका निश्चय किया। शकुनीके पुत्रने दल-बल सहित अर्जुनको आ घेरा। संग्राम होने लगा। थोड़ीही देरमें शकुनीका पुत्र अर्जुनके बाणोंसे घायल हो, अपने प्राण लेकर, मैदानसे भाग गया। तब अर्जुनने उन भागते हुए योद्धाओंका मस्तक, भल्लास्त्रसे, काटना आरम्भ कर दिया।

इस तरह अपनी सेनाका विनाश होते देख, शकुनीका पुत्र, अर्जुनकी शरण आकर, क्षमा माँगने लगा। तब अर्जुनने उसे अभय देकर, अश्वमेधमें आनेका निमन्त्रण दिया। उसने भी निमन्त्रण स्वीकार कर अपना पिण्ड छुड़ाया।

अश्वमेध यज्ञ

अब घोड़ा हस्तिनापुरकी ओर लौटा और भारतवर्षके समस्त नरेशोंको अपने अधीनकर, अर्जुन पूरे एक वर्षमें हस्तिनापुर वापस आये। अर्जुनके आनेका समाचार सुन, नगर सजाया गया और युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव, श्रीकृष्ण तथा तबतकके आये हुए कितनेही राजालोग, धृतराष्ट्रको आगेकर, पुरवासियों सहित, नगरसे बाहर जा, बड़े ठाटबाटसे अर्जुनको नगरमें लिवा लाये। उनके स्वागतार्थ राजधानीमें कई दिनोंतक नाच-तमाशे होते रहे।

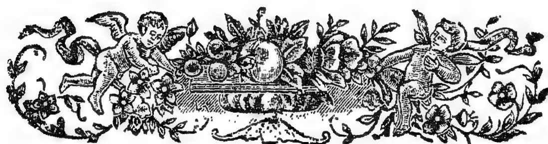
शुभ मुहूर्त्तमें महाराजा युधिष्ठिरने यज्ञ आरम्भ किया। देश-देशान्तरोंके प्राय: सभी राजा लोग वहाँ आकर इकट्ठे हो गये। युधिष्ठिरने उनके स्वागतमें कोई बात उठा नहीं रखी। युधिष्ठिरके यहाँ लाखों ब्राह्मण नित्य भोजन करते थे। एक लाख ब्राह्मणोंके भोजन कर चुकनेपर एक बार दुन्दुभि बजती थी। इस प्रकार नित्य सैकड़ों बार दुन्दुभि बजा करती थी।

कुछ दिनोंतक यज्ञ होता रहा। अन्तमें व्यास आदि महर्षि-

योंने उसे विधिपूर्वक समाप्त कराया। महाराजा युधिष्ठिरने ब्राह्मणोंको कई करोड़ स्वर्ण-मुद्राएँ बाँटीं और वेदव्यासजीको तो दक्षिणामें सारा राज्यही दे डाला। परन्तु महात्मा व्यासने उसे वापस लौटाकर, उसके बदलेमें, ब्राह्मणोंको धन दान करनेकी आज्ञा दी। तब महाराजा युधिष्ठिरने ऋत्विजों तथा वेदज्ञ ब्राह्मणोंको असंख्य धन-दान दिया, जिससे जन्मके दरिद्री धनी बन गये और याचक दाता होगये!

अन्तमें राजालोगोंको आदर-सत्कार पूर्वक विदा कर, यज्ञ-महोत्सव पूण किया गया।

यज्ञके कुछ वर्ष बाद, धृतराष्ट्र, गान्धारी, कुन्ती, विदुर और सञ्जय, वन-वासके लिये निकल पड़े और तीन वर्षतक वनमें आनन्दपूर्वक भग्वद्भजन करते रहे। अन्तमें, वनमें आग लगनेके कारण, सबका शरीरान्त हो गया!



बारहवाँ अध्याय

महा-प्रस्थान

मित्र-वियोग

महाभारतके युद्धमें तो क्षत्रियोंका भयङ्कर विनाश हुआही था ; परन्तु न जाने ईश्वरकी क्या इच्छा थी, कि यादवोंमें कलहकी आग भड़क उठी। इस घरू कलहने इतना ज़ोर पकड़ा, कि सब यादव आपसमेंही मर मिटे। केवल श्रीकृष्ण बच रहे।

कृष्णका मन भी उदास हो गया। उन्होंने अपने सारथि दारुकको, हस्तिनापुरमें, अर्जुनके पास दौड़ाकर, यादवोंके विनाशका समाचार भेज दिया और यह भी कहला दिया, कि "यदि चाहते हो, तो सात दिनके भीतर-भीतर हमारी स्त्रियोंकी रक्षा कर लो ; नहीं तो बादमें द्वारकापर समुद्रका पानी फिर जायेगा !"

इसके बाद श्रीकृष्ण, अपने भाई बलरामकी मृत्युसे दुखी हो, जङ्गलमें जा, एक वृक्षके नीचे समाधि लगाकर लेट गये। दैवात् वहाँ एक व्याध-जातिका हिंसक मनुष्य आ निकला। उसने

दूरसे श्रीकृष्णको मृग समझकर, एक विषैला बाण छोड़ दिया। वह बाण कृष्णके तलुवेमें घुस गया, जिसके कुछ क्षण बादही उनका शरीरान्त हो गया!

उधर श्रीकृष्णके सारथि दारुकने, हस्तिनापुर पहुँच, पाण्डवोंसे प्रभास तीर्थकी सारी घटना विस्तार पूर्वक कह सुनायी। यादवोंका इस प्रकार विनाश सुनकर पाण्डवोंको बड़ा भारी दुःख हुआ और अर्जुन शीघ्रही रथपर चढ़, दारुकके साथ, हस्तिनापुरके लिये चल पड़े।

द्वारकामें पहुँचकर अर्जुनने सर्वत्र सन्नाटा देखा। वहाँ घर-घरमें शोक छाया हुआ था। जब वे श्रीकृष्णके अन्तःपुरमें पहुँचे, तब उन्हें देखतेही सारी स्त्रियाँ फूट-फूट और छाती तथा सिर कूट-कूटकर रोने लगीं! उन पति-पुत्र-हीना स्त्रियोंका करुणा-क्रन्दन सुन, अर्जुनका रहा-सहा धैर्य्य भी जाता रहा। उनके नेत्रोंसे अश्रु-धारा प्रवाहित हो चली। अर्जुन इतने घबरा गये, कि उन्हें चारों ओर अन्धेरा दिखाई देने लगा। कृष्णकी स्त्रियोंको पति-वियोगसे व्याकुल देख, अर्जुनको मूर्च्छा आगयी और वे धड़ामसे पृथ्वीपर गिर पड़े! तब स्त्रियोंने अर्जुनको उठाकर स्वर्णकी चौकीपर लिटा दिया और उन्हें चारों ओरसे घेरकर पंखा झलने लगीं। कुछ देर बाद जब उन्हें होश हुआ, तब वे उठ बैठे और "हा कृष्ण! हा मित्र!" कहकर विलाप करने लगे। सब स्त्रियाँ उन्हें धीरज बँधाने लगीं।

अन्तमें वहाँसे उठकर वे सीधे अपने मामा वसुदेवके महलमें पहुँचे। वहाँ पहुँचकर उन्होंने देखा, कि वृद्ध वसुदेव, पुत्र-वियोगसे व्याकुल, पड़े हुए हैं। उठनेकी शक्ति जाती रही है! यह देखकर अर्जुनको अतिशय दुःख हुआ। रोते-रोते अर्जुनने

वसुदेवके चरणोंका स्पर्शकर उन्हें अपने आँसुओंसे तरकर दिया। वसुदेव दुर्बलताके कारण उठनेमें असमर्थ थे, इसलिये हाथ फैला-कर उन्होंने अर्जुनका, प्रेम-पूर्वक, आलिङ्गन करके कहा,—

"पुत्र! जिन्होंने हज़ारों दुष्ट दानवों तथा नीच नरेशोंका दमन किया था, कितने दुःखकी बात है, कि आज हम उन्हें खोकर भी जीवित हैं! तुम जिन प्रद्युम्न और सात्यकिको अपना प्यारा मित्र समझते थे और जिनकी प्रशंसाकर फूले अङ्ग न समाते थे, उन्हींके दुराचरणके कारण आज यदुकुलका संहार हुआ। जिन कृष्णने, महान् बली और परम पराक्रमी योद्धाओंके प्रबल आक्रमणसे अनेक बार अपने राज्यकी रक्षा की थी, उन्होंने भी इस समय यदुकुल-विनाशक इस उपद्रवको शान्त करने तथा उपद्रवकारियोंको दमन करनेकी कोई युक्ति नहीं विचारी! जिन्होंने तुम्हारे पौत्र परीक्षित को जीवित किया, उन्हीं कृष्णने इस समय अपने कुटुम्बकी रक्षा नहीं की! पुत्र, पौत्र और भाइयोंके मरनेपर उन्होंने मेरे पास आकर कहा,—'पिता जी! आज यदुकुलका नाश हो गया। मैंने अर्जुनके पास दूत भेजा है। उनके आनेपर जैसा वे कहें, करना।' इतना कहकर वे यहाँसे चले गये। उसी दिनसे बलराम और कृष्णका स्मरणकर मैं भूखा-प्यासा दिन काट रहा हूँ। मैं अब एक घड़ी भी जीना नहीं चाहता, इसलिये तुम अपने मित्रके कथनानु-सार कार्य्य करो।"

अर्जुनने रोकर कहा,—"मामा! अब मैं इस कृष्ण-शून्य द्वारका-को देख नहीं सकता। यदुवंशका नाश सुनकर द्रौपदी और हमारे भाई कितने दुःखित होंगे, इसका ठिकाना नहीं है। अब स्पष्ट मालूम पड़ता है, कि हमलोगोंका अन्तकाल भी समीप आ पहुँचा है। हमें भी अब मृत्युलोक छोड़ना पड़ेगा। अतः द्वारकामें

विशेष रहनेसे क्या लाभ ? हमें यदुवंशी बालकों तथा स्त्रियों सहित शीघ्रही इन्द्रप्रस्थ जाना चाहिये ।"

इसके बाद अर्जुनने मन्त्रीसे कहा,—"हम रानियों और बच्चोंको लेकर इन्द्रप्रस्थ जाते हैं, तुम नगर-निवासियोंको लेकर वहाँ चले आओ। मैंने कृष्णसे सुन रखा था, कि द्वारका समुद्रमें डूब जायेगी और अब वह समय समीप आगया है, इसलिये तुम शीघ्रही द्वारका ख़ाली कर दो ।"

अर्जुनके आज्ञानुसार नगर भरमें ढिढोरा फिरवा दिया गया। सब लोग जल्दी-जल्दी द्वारका छोड़नेकी तैयारी करने लगे। जैसे-तैसे करके अर्जुनने आजकी रात काटी। दूसरे दिन कृष्णके पिता वसुदेवने शरीर छोड़ दिया! तब अर्जुनने उनकी मृत देहको बहुमूल्य वस्त्रोंसे ढाँककर, बड़े भीड़-भड़क्केके साथ, उनकी अरथी निकाली। द्वारकावासी दुःख मनाते हुए वसुदेवके शवके साथ-साथ चलने लगे। अन्तःपुरकी स्त्रियाँ बाल बिखेर और छाती पीट-पीटकर रोने लगीं! सुगन्धित द्रव्योंसे सिक्त चितापर वसुदेवका प्रेत रख दिया गया और कपूरसे अग्नि प्रज्ज्वलितकर मन्त्रों द्वारा आहुतियाँ दी जाने लगीं। उनको चितामें जलते देख, उनकी स्त्रियोंने भी चितामें कूदकर प्राण छोड़ दिये !

वसुदेवके प्रेत-कार्यसे निवृत्त हो, अर्जुन उस स्थानपर गये, जहाँ असंख्य यादवोंने आपसमें लड़-कटकर जानें गँवायी थीं। उस व्यर्थके भीषण हत्याकाण्डको देख, अर्जुनको मूर्च्छा आ गयी। उन्होंने वहाँ पड़े हुए सभी योद्धाओंके अग्नि-संस्कारका प्रबन्धकर, बलदेव और श्रीकृष्णके मृत देहका भी पता लगाया और रोते-पीटते अपनेही हाथों, विधिपूर्वक, उनका भी प्रेत-कार्य्य किया !

सब कार्योंसे निवृत्त हो, अर्जुने यादवोंकी शोकाकुल नारियोंको

घोड़े, बैल और ऊँटोंसे जुते हुए रथोंपर सवार कराके हस्तिनापुरकी तरफ़ कूच किया। अर्जुनके आज्ञानुसार द्वारका-वासी, श्रीकृष्णके पौत्र वज्रकी अधीनतामें, स्त्रियोंकी रक्षा करते हुए, द्वारकासे चल दिये। ज्योंही लोगोंने द्वारका ख़ाली की, त्योंही समुद्रने धीरे-धीरे उसपर अपना आधिपत्य जमाना आरम्भ कर दिया और देखते-देखते समस्त द्वारका समुद्र-गर्भमें विलीन हो गयी!

कितनीही नदियों तथा पहाड़ोंको पार करते और जहाँ-तहाँ डेरे डालते हुए अर्जुन, दलबल सहित, पञ्चनद (पञ्जाब) की सीमापर पहुँचे। यहाँ, आभीर जातिके डाकुओंने अर्जुनको आ घेरा। पाण्डवोंकी राजसूय-सम्बन्धी दिग्विजयके समय नकुलने इन आभीरोंको बुरी तरह परास्त किया था। उसीका बदला चुकानेका यह अच्छा अवसर जानकर, वे लूट-मार करने लगे।

आभीर अधिक संख्यामें थे, अतएव उन्हें देखतेही द्वारकावासियोंके हाथ-पैर ठण्डे पड़ गये। अर्जुनने उन्हें अनेक तरहसे भय भी दिखाया, परन्तु वे नहीं डरे और बराबर लूट-खसोट करते रहे। आभीरोंके हाथमें केवल लोहालगी हुई लाठियाँ थीं; परन्तु किसीका भी साहस उनका सामना करनेका नहीं होता था! यह देख, अर्जुनने क्रोध पूर्वक गाण्डीव उठाया और उसपर प्रत्यञ्चा चढ़ाने लगे। परन्तु बड़ी कठिनतासे वे प्रत्यञ्चा चढ़ा पाये। उन्हें मालूम हो गया, कि शोक-जर्ज्जरित देहमें अब बल नहीं रहा। बड़ी मेहनतके बाद गाण्डीव तो चढ़ गया; परन्तु अब उनकी समझमें यह नहीं आता था, कि दिव्यास्त्रका प्रयोग कैसे किया जाये? लाचार वे साधारण बाण चढ़ाकरही लुटेरोंको मारने दौड़े। परन्तु अर्जुनके वेही वज्र-तुल्य बाण, जो गाण्डीवसे छूटतेही भुजङ्गकी भाँति शत्रुका रक्त पीकर पृथ्वीमें घुस जाते

थे, आज उन डाकुओंका कुछ भी न बिगाड़ सके। सारांश यह, कि किसीसे कुछ भी करते-धरते न बन पड़ा और डाकू लोग देरतक उत्पात मचाते रहे। उन्होंने यादवोंका सारा धन और सहस्रों स्त्रियाँ, अर्जुनकी आँखोंके आगेही छीन लीं!

बचे-खुचे सामान तथा मनुष्योंको साथ लिये, शोक सन्तप्त अर्जुन कुरुक्षेत्र पहुँचे और अपने नाना (भोजराज) के पुत्र तथा स्त्रियोंको वहाँ ठहरा दिया। सात्यकिके पुत्र और परिवारको सरस्वती-नगरी रहनेके लिये दी और इन्द्रप्रस्थका राज्य श्रीकृष्णके पौत्र वज्रको देकर, बाकी बचे हुए स्त्री, पुरुष और बालकोंको उन्हींके आश्रयमें रख दिया। कई विधवाओंने अग्निमें जलकर देह त्याग दी और कितनोंने संन्यास ग्रहणकर तप आरम्भ कर दिया।

यह सब कार्य्य समाप्तकर अर्जुन महर्षि वेदव्यासके आश्रममें गये और महर्षिको ध्यानमें बैठे देख, बड़ी विनयके साथ, हाथ जोड़कर बोले,—"भगवन्! मैं, आपका दास, अर्जुन, आपके चरणोंमें प्रणाम करता हूँ।"

महात्मा व्यासने आँखे खोलकर देखा, कि अर्जुनका मुख मलिन और तन क्षीण हो रहा है। यह देख, उन्होंने दुःखित स्वरसे पूछा,—"बेटा अर्जुन! मैंने तुम्हें कभी इस प्रकार निष्प्रभ और मलिन-मुख नहीं देखा था। क्या तुमने कुछ अधर्म्म कर डाला है? या किसीसे परास्त हो गये हो? यदि मुझे बतानेमें तुम्हें किसी प्रकारका सङ्कोच या आपत्ति न हो, तो अपनी इस दुर्दशाका हाल निःसङ्कोच होकर कह डालो।"

इसके उत्तरमें अर्जुनने रोते-रोते कहा,—"भगवन्! क्या कहूँ? मारे दुःखके मेरा हृदय विदीर्ण हुआ जाता है। मुझपर वज्र-पात हुआ है। मेरे लिये आज यह विश्व-ब्रम्हाण्ड सूना हो गया है।

हाय ! मेरे परम प्रिय मित्र और सहायक श्रीकृष्ण मुझे अकेला छोड़कर गोलोक चले गये हैं।"

इतना कहते-कहते अर्जुनका गला भर आया और वे मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिर पड़े। व्यासजीने, उन्हें होशमें लानेके लिये, उनके मुखपर चन्दन-मिश्रित जल छिड़का। कुछ देर बाद जब अर्जुनकी मूर्च्छा भङ्ग हुई, तब वे "हाय ! हाय !" करके उठ बैठे। थोड़ी देर चुप रहनेके बाद वे फिर कहने लगे,—

"महात्मन्! भोज, वृष्णि और अन्धक वंशीय समस्त वीर, ब्रह्म-शापके कारण प्रभास-क्षेत्रमें, बिना किसी बातके,आपसमें, योंही लड़कर मरमिटे ! परम पूजनीय मामा वसुदेव और बलराम स्वर्गवासी हो गये और श्रीकृष्णकी वह परम प्यारी द्वारका समुद्रमें विलीन हो गयो ! महर्षे ! इसके साथही मेरे सिरपर एक और भी वज्र-पात हुआ है। जब मैं द्वारकाके अनाथ नर-नारियोंको अपने साथ लिये इन्द्रप्रस्थकी ओर आरहा था, तब पञ्चालकी सीमापर बहुतसे डाकुओंने लाठी लेकर हमपर आक्रमण किया और मेरी आँखोंके सामनेही, मेरे हाथमें गाण्डीव रहते, वे हमारा सारा धन और सहस्रों स्त्रियाँ छीन ले गये ! इसका कारण मेरी समझमें कुछ नहीं आता। मैं तो यही समझता हूँ, कि उसी महापुरुषके उठ जानेसे, जो मेरे रथपर आगे बैठकर जय-घोषणा किया करता था, हमारी यह दुर्दशा हुई है और गाण्डीव भी शक्ति-शून्य हो गया है। जो हो, अब मुझे जीनेसे कुछ लाभ नहीं। अतः आपही बताइये, कि अब मैं क्या करूँ ?"

इसपर महर्षि व्यासने उन्हें अनेक प्रकारसे धीरज बँधाते हुए कहा,—"पुत्र ! यदि श्रीकृष्ण चाहते, तो यादवोंके इस संहारको रोक सकते थे। परन्तु ब्रह्म-शापको अमिट जानकर परम बुद्धिमान्

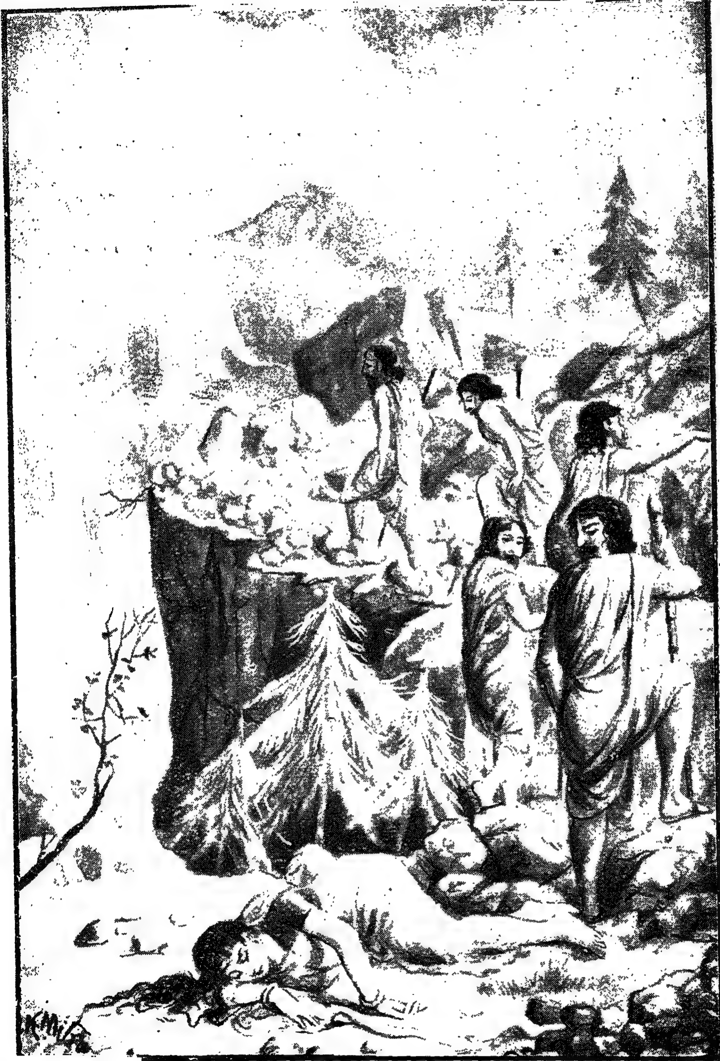
श्रीकृष्णने वैसा नहीं किया और अन्तमें स्वयम् भी स्वर्ग सिधार गये। अब तुम व्यर्थकी चिन्ता न करो। तुम लोग भी इस भू-मण्डलपर बड़े-बड़े देव-कार्य्य करने आये थे। इस पृथ्वीका बढ़ा हुआ भार तुम लोगोंने उतार दिया है। मालूम होता है, अब तुम्हारा जीवन भी समाप्त हो चुका। यही कारण है, कि तुममें पहले जैसा बल और तेज नहीं रहा। अब तुम लोगोंके स्वर्ग सिधारनेका समय आ गया है। अतः अब तुम लोगोंको उधरही चित्त लगाना चाहिये।"

देहावसान

महर्षि व्यासका उपदेश सुनकर अर्जुनको धर्य्य हुआ। तब हस्तिनापुर आकर उन्होंने अपने बड़े भाई महाराजा युधिष्ठिरको, यदुवंशका नाश तथा अपनी बीती सारी कथाएँ कह सुनायीं। जिन्हें सुन, युधिष्ठिरने अपने भाइयोंको सम्बोधनकर कहा,—

"भाइयो! काल महाबली है; इसका चक्र रात-दिन घूमताही रहता है। काल आनेपर सभीका अन्त होता है। इन सब लक्षणोंसे जान पड़ता है, कि हमलोगोंका भी अब अन्त समय आ पहुँचा है। युद्धके बादसे आजतक हमें राज्य करते भी छत्तीस वर्ष बीत गये हैं। अब हमें किसी बातकी लालसा नहीं है। अतः महाप्रस्थानके लिये हमलोगोंको हिमालयपर चलना उचित है।"

इसे स्वीकार कर और परीक्षितको हस्तिनापुरका राजा बना, सब लोग महाप्रस्थानकी तैयारी करने लगे। उन्होंने अपने वस्त्रालङ्कार त्यागकर बल्कल वस्त्र पहन लिये और द्रौपदी सहित, पाँचो पाण्डव, संन्यासियोंका वेश बना, हस्तिनापुरसे सदा-सर्वदाके लिये बिदा होगये! समस्त पुरवासी विलाप करने लगे।



पाण्डवोंका महाप्रस्थान।

"आर्य ! द्रौपदीने तो कभी कोई अधर्म नहीं किया था, वह क्यों गिर गयी ?"

Burman Press, Calcutta. [पृष्ठ—३३७]

जब पाण्डव राजधानीसे चलने लगे, तब उनके संग एक कुत्ता भी होलिया। सबके आगे महात्मा युधिष्ठिर, उनके पीछे भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव तथा द्रौपदी और उन सबके पीछे-पीछे वह कुत्ता भी चलने लगा।

धीरे-धीरे चलकर वे लोग कुछ दिनोंके बाद समुद्रके किनारे पहुँचे। वहाँ अग्निदेवके दिये उस गाण्डीवको, जिसे अर्जुन कभी छोड़ते नहीं थे, उन्होंने अग्निको वापस दे दिया। अग्निने वे अक्षय तूणीर तथा धनुष वरुणके हवाले कर दिये। यहाँसे पाण्डव सारे भारतवर्षकी यात्रा करते हुए हिमालयपर जापहुँच और उसपर चढ़ने लगे। कुछही ऊपर चढ़े थे, कि अचानक द्रौपदी, उस हिम-राशिमें गिरकर, मर गयी! यह देख भीमसेनने युधिष्ठिरसे पूछा,—"आर्य्य! द्रौपदीने तो कभी कोई अधम्म नहीं किया था, वह गिरकर क्यों मर गयी?"

युधिष्ठिरने कहा,—"भीम! यद्यपि उसे हम पाँचों भाई समान थे, परन्तु वह अर्जुनपर विशेष प्रेम रखती थी।"

थोड़ाही आगे बढ़े थे, कि सहदेवने गिरकर प्राण छोड़ दिये! यह देख, फिर भीमसेनने युधिष्ठिरसे पूछा,—"महाराज! इनके गिरनेका क्या कारण है? ये तो हमारे पूर्ण आज्ञाकारी भाई थे!"

युधिष्ठिर पीछे फिरकर नहीं देखते थे। वे आगेकी ओर बढ़तेही जा रहे थे। उन्होंने भीमसेनके प्रश्नका उत्तर दिया,—

"भाई! सहदेव अपनेको सबसे अधिक बुद्धिमान् समझता था।"

कुछ दूर चलकर नकुल भी उस तुषार-राशिपर गिर पड़े और मर गये! तब भीमने फिर पूछा,—"आर्य्य! नकुल तो बड़ेही पवित्र विचारवाले थे, फिर उन्हें इस प्रकार क्यों मरना पड़ा?"

युधिष्ठिरने कहा,—"भाई! उन्हें अपने सौन्दर्य्यका बड़ाही अहङ्कार था।"

इतना कहकर युधिष्ठिर बेफिक्रीसे आगे बढ़ने लगे। भीमसेन और अर्जुन भी उनके पीछे-पीछे चलने लगे। नकुल, सहदेव तथा द्रौपदीकी मृत्युसे अर्जुनको महान् शोक हुआ। क्रमशः उनका शोक इतना बढ़ गया, कि एक-एक पल उन्हें भारी मालूम होने लगा। इसी समय उन्हें अपने प्राण-प्रिय मित्र श्रीकृष्णकी याद आगयी। बस फिर क्या था? उनका दुःख दूना-चौगुना होगया, शरीर काँपने लगा, पैर डगमगाने लगे और कुछही दूर चलकर वे भी गिर पड़े; साथही उनके प्राण निकल गये! तब भीमसेनने अत्यन्त शोकाकुल होकर युधिष्ठिरसे पूछा,—

"धर्म्मराज! कृष्ण-सखा महावीर अर्जुनने तो कोई पाप-कर्म्म नहीं किया था। उन्होंने कभी हँसीमें भी मिथ्या भाषण नहीं किया था, फिर वे इस प्रकार क्यों गिरे?"

युधिष्ठिरने उत्तर दिया,—"वृकोदर! अर्जुनको अपनी वीरताका बड़ा भारी घमण्ड था। जितना उन्हें घमण्ड था, उतना उन्होंने काम नहीं किया। इसी वृथाभिमानके कारण उनकी यह दशा हुई है। इस समय तुम उनकी तरफ़ फिरकर मत देखो और चुपचाप मेरे पीछे-पीछे चले आओ।"

युधिष्ठिर और भीमने पीछे फिरकर किसीको नहीं देखा और कुत्ते सहित आगे बढ़ते गये।

थोड़ी दूर और आगे बढ़नेपर भीमसेन भी उसी बर्फ-राशिमें गिर पड़े। उन्होंने गिरतेही चिल्लाकर युधिष्ठिरसे पूछा,—"महाराज! आपका यह आज्ञाकारी और स्नेहपात्र सेवक क्यों गिरा?"

युधिष्ठिरने कहा,—"वृकोदर! तुम दूसरोंको तृण-समान और अपनेको महाबली समझते थे।"

अब महाराजा युधिष्ठिरके साथ केवल वह कुत्ताही रह गया। थोड़ीही देर बाद एक दिव्य विमान उनके सामने आ उपस्थित हुआ। देवराज इन्द्र युधिष्ठिरको देखतेही उस विमानसे उतर पड़े और बोले,—"हे धर्मराज! मैं आपको स्वर्गसे बुलाने आया हूँ।"

युधिष्ठिरने कहा,—"देवराज! मैं अपने अन्य चारों भाइयों और प्रियतमा द्रौपदीको छोड़कर स्वर्गपुरीमें भी जाना नहीं चाहता।"

देवराजने कहा,—"वे सब लोग स्वर्ग-लोकमें पहुँच गये हैं। आप भी चलिये। पर इस अपवित्र जीव, कुत्तेको कहाँ ले जायेंगे?"

युधिष्ठिर,—"नहीं, यह मेरा आश्रित है। शरणागतको मैं निराश्रित नहीं कर सकता।"

इसके बाद उस कुत्तेने धर्मका रूप धारणकर महाराजा युधिष्ठिरको आशीर्वाद दिया।

तब देवराज उन्हें विमानपर बैठाकर स्वर्ग-लोक ले गये।

पाठक! हमारे चरित-नायक महावीर अर्जुनका पार्थिव शरीर यद्यपि हिमालयके हिममें सदा-सर्वदाके लिये विलीन हो गया, तथापि उनकी उज्ज्वल कीर्ति और पवित्र नाम तबतक संसारमें जीवित रहेगा, जबतक सूर्य, चन्द्र आकाशमें विद्यमान् रहेंगे।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः!

